'ज़िक्रे मीर'

महाकवि 'मीर' की आत्मकथा

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद

महाकवि 'मीर' से हिन्दी संसार अच्छी तरह परिचित है। उनकी भाषा इतनी सरल और सुबोध है कि हर कोई उनकी कविता का रस ले सकता है। 'मीर' अपने सूफ़ियाना विचारों को बड़ी सरलता पूर्वक ऐसे कह देते हैं जैसे कोई राज़ की बात चुपके से कान में कह रहे हों।

ज़िक्रे 'मीर' महाकवि 'मीर' की आत्म-कथा है। 'मीर' की यह आप-बीती हमारा एक महत्वपूर्ण साहित्यिक सरमाया है। कुल तीन-चार बरस पहिले यह सरमाया उर्दूवालों के हाथ लगा। अब यह हिन्दी पाठकों के पास पहुँच रहा है।

ज़िक्रे 'मीर' की भाषा मुहावरेदार, चुस्त और आसान है। कहानी कहने का ढंग 'मीर' का अपना है। एक बार हाथ में लेने पर पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ना अनिवार्य हो जायेगा।

वितरक
लोक भारती
१५।ए महात्मा गाँधी मार्ग,
इलाहाबाद

ज़िक्रे 'मीर'

(महाकवि 'मीर' की आत्म-कथा)

भाषान्तरकार

श्री अजमल अजमली

संपादक

श्रीकृष्ण दास

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद

प्रकाशक :

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,

इलाहाबाद ।

मूल्य

तीन रुपये

मुद्रक :

वीरेन्द्रनाथ घोष,

माया प्रेस प्राइवेट लिमिटेड,

इलाहाबाद ।

भूमिका

महाकवि 'मीर' से हमारे पाठक भली भांति परिचित हैं। यद्यपि यह कहना बहुत कठिन है कि वह उर्दू के सब से बड़े शायर हैं क्योंकि महाकवि ग़ालिब को भी यही एजाज़ और मर्तबा हासिल है; फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि 'मीर' से बढ़कर हमारे दिल का राज़दां और कोई कवि नहीं हुआ। 'मीर' मूलतः प्रेम और करुणा के कवि थे। भवभूति की भांति उनका भी दावा था कि, "जैसे जल में अनेक तरंगें उठती हैं, किन्तु सब में जल ही प्रधान है वैसे एक ही करुण-रस अनेक आश्रय पाकर भिन्न-भिन्न रूप में परिवर्तित हो जाता है।" इसलिए 'मीर' करुण रस को ही प्रधानता देते थे। वह करुण रस के ही गायक और पुजारी थे। अपने निजी जीवन में उन्हें ग़रीबी, तंगदस्ती, ज़ेरबारी और अनेक मुसीबतों का सामना करना पड़ा। क़िस्मत की उलट फेर ने उन्हें कभी चैन से बैठने न दिया। सारी ज़िन्दगी वह कठिनाइयों और मुसीबतों से जूझते रहे। इसलिए दुख, पीड़ा, निराशा, अवसाद का डेरा उनके यहाँ हमेशा जमा रहा। 'मीर' उनका सामना करते रहे और इस संघर्ष में टूटते-बिखरते, गिरते-उठते आगे बढ़ते रहे।

'मीर' के ये अनुभव उनकी रचनाओं में उतर आये। उनका साहित्य करुण रस प्रधान हो गया। परन्तु उनके ये निजी उद्गार मात्र निजी नहीं थे। सही अर्थ में 'मीर' जनता के कवि थे। जनता के जीवन

से, उस जीवन की कठिनाइयों और संघर्षों से उनका गहरा सम्पर्क था। उनके दुख-दर्द को समो लेने, अभिव्यक्त करने की सहज क्षमता भी उनमें थी। 'मीर' का काव्य जनता की ज़बान का हिस्सा बन गया। जनता की वाणी उनकी वाणी में मुखर हुई।

मगर बात इतनी ही नहीं थी। 'मीर' की शायरी में पग-पग पर जो हम सूफ़ियाना अन्दाज़ पाते हैं, उसका भी एक राज़ था। 'मीर' सूफ़ी ख़ान्दान के थे। उनके पिता अपने ज़माने के मशहूर सूफ़ी सन्त थे। वह सिद्ध पुरुष माने जाते थे। पिता के देहान्त के बाद 'मीर' का पालन पोषण जिस व्यक्ति ने किया, वह भी पहुँचा हुआ सन्त था। इसलिये बचपन से ही 'मीर' को सूफ़ी अनुशासन में पलने और बड़े होने का अवसर मिला और उनसे विकास का मार्ग गम्भीर चिन्तन-मनन एवं साधना की छाँव में प्रशस्त होता रहा। जन्म से ही साधु प्रवृत्ति का होने के कारण 'मीर' को सांसारिकता की कड़ियां अधिक मज़बूती से बाँध न सकीं। थोड़े में ही गुज़ारा करना, जो मिले उसी पर संतोष करना और अपने ख़ुदा की याद में ज़िन्दगी के दिन गुज़ारना ही उनका शेवा रहा। 'मीर' का काव्य-साहित्य यहाँ से वहाँ तक बिल्कुल निखरा हुआ, साफ़-सुथरा, ओजपूर्ण, मृदु, सौष्ठव-सम्पन्न और बामानी है। जब वह कुछ कहते हैं तो ऐसा मालूम होता है जैसे कोई गहरी और राज़ की बात वह चुपके से, धीमे से कान में कह रहे हैं—

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके।
पछताओगे, सुनो हो, यह बस्ती उजाड़ के॥

या

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर है।
यह नगर सौ मरतबा लूटा गया॥

या

मौत एक माँदगी का वक़्फ़ा है,
यानी, आगे चलेंगे दम लेकर।

'मीर' के कहने का यह ढंग, गम्भीर से गम्भीर बात को आसान से आसान शब्दों और वाक्यों में अदा कर देने की यह क्षमता और कौशल, उनके सन्त और मंत्रद्रष्टा कवि होने का प्रमाण है। वह मंत्र-द्रष्टा थे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

'मीर' ने ज़माने का उतार-चढ़ाव और खूँरेज़ी और युद्ध और हिंसा और राज्य-क्रान्तियों को स्वयं देखा था, उनमें किसी हद तक हिस्सा लिया था, उनके फलों को भोगा था, ख़ुद बने और उजड़े थे और बस्तियों को बसते-उजड़ते देखा था। इसलिए इस संसार की असारता और निरर्थकता उनकी समझ में आ गयी थी। 'मीर' ने उन्हें देखा था और उन्हें क़लम बन्द भी किया था। ज़िक्रे 'मीर', जो कि महाकवि मीर मुहम्मद तक़ी 'मीर' की आत्मकथा है--यहाँ से वहाँ तक, आदि से अन्त तक, आँसुओं से भींगी दर्द-व-ग़म की कहानी है। यह आत्म-कथा ऐतिहासिक प्रमाण ग्रंथ है। और अब, जब कि यह हिन्दी संसार के सामने इस रूप में आ रहा है, इसकी निर्विवाद महत्ता स्वयं सिद्ध है।

'मीर' के प्रेमियों-भक्तों की संख्या हमारे देश में बहुत बड़ी है। मगर उनके सामने अब तक 'मीर' का काव्य-साहित्य ही रहा है। अब इस आत्म कथा का अनुशीलन करके वे अपने प्यारे शायर, मनीषी विचारक और मंत्रद्रष्टा कवि को अधिक अच्छी तरह समझ पायेंगे। उनके सामने 'मीर' की निजी ज़िन्दगी के ऐसे अनेक राज़ अफ़्शां हो जायेंगे जो उनके शेरों में निहां रहे हैं।

ज़िक्रे 'मीर' के दो हिस्से हैं। पहिले हिस्सा में 'मीर' ने अपने पूर्वजों का और अपना परिचय दिया है। अपने पिता की साधुता का

वर्णन करते हुए वह कहते हैं, "मेरे पिता दिन रात ईश्वराराधन किया करते थे। जब कभी होश में आते तो मुझसे कहते—

"बेटे प्रेम कर क्योंकि यह संसार प्रेम ही के आधार पर टिका है। यदि प्रेम न होता तो यह संसार न होता।............ प्रेम बनाता भी है और जलाता भी है। इस संसार में जो कुछ है वह प्रेम का ही ज़हूर है। आग प्रेम की जलन है। जल प्रेम की गति है। मिट्टी प्रेम का ठहराव है और वायु प्रेम की बेकली है। मौत प्रेम की मस्ती है और जीवन होश!" 'मीर' पिता की इसी प्रेम-परक, भक्ति-मूलक विचार धारा में पले और बढ़े। फलतः उनका जीवन प्रेममय हो गया। वह इश्क़ करते रहे और इश्क़ मजाज़ी से इश्क़ हक़ीकी की ओर निरन्तर बढ़ते रहे।

अपनी नौकरी के सिलसिले में 'मीर' को आगरा, दिल्ली आदि का चक्कर बार-बार उस समय लगाना पड़ा जब राज्यक्रान्तियों और ख़ूँरेज़ियों का दौर दौरा था। 'मीर' ने इस परिस्थिति का अत्यन्त सजीव एवं प्रभावशाली चित्रण पुस्तक के दूसरे अंश में किया। यह अंश इस बात का प्रमाण है कि 'मीर' इन्सानियत के परस्तार, ईमानदारी, सच्चाई और न्याय के पक्षपाती और पैरोकार थे। झूठ, ओछापन, अवसरवादिता, धोखा-धड़ी, ख़ूँरेज़ी और अन्धी शक्ति तथा राज्य-लिप्सा की कड़ी से कड़ी भर्त्सना उन्होंने की। दार्शनिक और आध्यात्मिक दृष्टि से तो वह अतिशय उदार थे ही, व्यावहारिक जीवन में भी वह हर प्रकार की संकीर्णता से दूर थे। किसी भी प्रकार की कट्टरता अथवा धर्मान्धता उन्हें असह्य थी। 'मीर' के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में जो उदारता, सहिष्णुता और सहानुभूति हम पाते हैं वह उनके साहित्य में भी प्रतिलक्षित होती है और यही उनकी कृतियों की मक़बूलियत और लोकप्रियता का राज़ भी है।

'मीर' ने केवल शायरी ही नहीं की। उन्होंने अपने ज़माने के संघर्षों में भाग भी लिया। इसलिये उनके तन मन पर उन संघर्षों का गहरा घाव और दाग़ भी था। इसका प्रभाव उनकी शायरी पर भी

पड़ा। मगर उनकी शायरी में जीत मौत की नहीं, ज़िन्दगी की है। वह निराशा के गहनतम अंधकार में भी ज़िन्दगी की सुनहरी किरणों को ढूँढ लेते थे। वह प्रेम और सौन्दर्य के गायक थे। इसलिये उनकी रचनाओं में इतना रचाव, इतना सिंगार, इतना सौष्ठव है।

'मीर' की यह आप बीती समाप्त होती है उस समय जब 'मीर' बूढ़े हो चुकते हैं। ख़ुद उनका बयान है, "इस छोटी सी मुद्दत में ख़ून के इस एक क़तरे ने जिसे दिल कहते हैं, रंग-रंग के दुख झेले और खूना-खून हो गया। तबीयत उचाट हो गयी। सब से मिलना जुलना बन्द कर दिया। अब बुढ़ापा आ गया है और उम्र साठ साल की हो गयी है। ज़्यादातर बीमार रहता हूँ। कुछ दिनों आँखों की तकलीफ़ सही, देखने की ताक़त न रही, ऐनक की हाजत हुई। अपने दोनों हाथ मले और देखने-दिखाने की हवस छोड़ दी।.........ग़रज़ ताक़त घट जाने, होश गुम हो जाने, कमज़ोरी बढ़ जाने, दिल टूट जाने और तबीयत उचट जाने से यही पता चलता है कि अब बहुत दिनों तक नहीं जिऊँगा। ज़माना भी अब रहने लायक़ नहीं रहा है। अब दामन खींच लेना ही अच्छा है। अगर मर जाऊँ तो यही आरज़ू है। और, न मरूँ तो सब ख़ुदा के हाथ है।"

'मीर' इस रचना के बाद भी काफ़ी दिनों तक जीवित रहे। मगर बुढ़ापे के कारण अब उनके लिये राजनीतिक उथल-पुथल में भाग लेना सम्भव न था। दुनिया से अलग, उसके घात प्रतिघातों से दूर रह कर वह एक दार्शनिक की भांति चिन्तन-लीन, शान्त जीवन व्यतीत करते रहे। परन्तु इस काल में भी उनकी रचनाओं का चक्र चलता रहा। और, लगभग अस्सी बरस की उम्र पाकर उनका यशस्वी जीवन समाप्त हुआ।

ज़िक्रे 'मीर' में हम महाकवि मीर मुहम्मद तक़ी 'मीर' के आरम्भिक साठ वर्षों के जीवन की रंगीन तस्वीर और अश्रु-स्वेद-रक्त से लिखी कहानी पाते हैं—ऐसी कहानी जो हमें उद्वेलित करती है, रुलाती है, सोचने-विचारने के लिये मजबूर कर देती है।

ज़िक्रे 'मीर' की रचना महाकवि 'मीर' ने फ़ारसी भाषा में की थी, परन्तु यह पुस्तक अप्राप्त थी। लगभग चालीस वर्ष पहिले इसकी एक प्रति मिल गयी। उसे १६२८ ई० में प्रकाशित भी कर दिया गया। उसकी भूमिका में डा० अब्दुल हक़ लिखते हैं--

"मीर तक़ी 'मीर' उर्दू के उन चन्द मुसल्लम असातज़ा में से हैं जिन पर उर्दू अदब को हमेशा नाज़ रहेगा। अहले ज़ौक़ 'मीर' साहब के क़लाम को सर और आँखों से लगाते हैं और पढ़-पढ़कर सर धुनते हैं। जब तक यह ज़बान दुनिया में क़ायम है यह ज़ौक़ कभी कम न होगा। 'मीर' साहब ख़ुद भी इसे समझते थे। क्या कह गये हैं--

जाने का नहीं शोर सुख़न का मेरे हरगिज़,
ता हश्र जहाँ में मेरा दीवान रहेगा।"

जैसा कि अब्दुल हक़ साहब ने कहा है यह शायराना अन्दाज़ में की गयी आत्म प्रशंसा मात्र नहीं है। वरन् यह सच्चाई है, हक़ीक़त है। ज़िक्रे 'मीर' की भी यही हैसियत होगी, इसमें कोई शक़ नहीं है। भले ही इस पुस्तक में 'मीर' ने अपनी शायरी एवं शायर साथियों की चर्चा नहीं की है; मगर इससे इसका ऐतिहासिक महत्व कम न होगा। शायर 'मीर' को जानने के लिये तो उनका दीवान है ही। मगर इन्सान मीर तक़ी 'मीर' को निकट से जानने का एक मात्र साधन यह ज़िक्रे 'मीर' ही है, जिसे श्री अजमल अजमली ने 'मीर' की ही सरल-सहज भाषा में रूपान्तरित करके हिन्दी पाठकों के सामने रख दिया। यह पुस्तक साहित्य-मर्मज्ञों द्वारा समादृत होगी और 'मीर' के प्रेमी पाठकों के बीच इसका स्वागत होगा, इसका हमें भरोसा है।

—श्रीकृष्ण दास

अनुवादक की ओर से !

'मीर' की ग़ज़लें मैंने जब भी गुनगुनाई हैं या उनकी आपबीती पढ़ी है तो याद के झरोखों से यका-यक संत कबीर का यह दोहा चुपके से मेरी ज़ुबान पर रेंग आया और मेरे होंठ गुनगुनाने लगे--

चलती चक्की देख के, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबित बचा न कोय॥

तो साहबो ! जिस चलती चक्की को देखकर कबीर जी रो पड़े थे, 'मीर' भी उसीके पाटन के बीच आके पिस गये थे। इस पिसने में उनका जिस्म भी घायल हुआ था और उनकी रूह भी। रूह इसलिये कि 'मीर' की रूह हमारी आपकी रूह से ज़्यादा ताक़त रखती थी और बरसों के जतन ने उनमें यह ज़ोर भर दिया था कि उनकी रूह और उनका जिस्म कोई दो चीज़ नहीं रह गये जैसा हमारे ज़माने के बहुत से शायरों और कलाकारों के यहाँ दिखाई देता है। और 'मीर' ने इसी घायल रूह की आवाज़ अपनी शायरी में समोई है। आप 'मीर' के शेर पढ़िये तो बार-बार इस घायल रूह की गूँज सुनाई देगी। यह गूँज दुखभरी है, दर्दीली है, दिल हिलाने वाली है और मन मोह लेने वाली भी है। लेकिन डराने वाली या ज़िन्दगी पर भरोसा कम करने वाली नहीं, क्योंकि ज़िन्दगी उन्हें बहुत प्यारी है और जब वह इस ज़िन्दगी को गले लगाते हैं तो उसे दुख और सुख के अलग-अलग ख़ानों में बाँटते नहीं, बल्कि उसे एक इकाई समझते हैं, जिसमें दुख भी है और सुख भी। यह अलग

बात है कि हालात किसी की ज़िन्दगी में दुख का पलड़ा भारी कर दें और किसी की ज़िन्दगी में सुख का।

तो मैं यह कह रहा था कि यही दुखों और सुखों से भरी ज़िन्दगी 'मीर' की सबसे ज़्यादा प्यारी चीज़ है, इतनी प्यारी कि 'मीर' मरने के बाद भी इससे अलग होना नहीं चाहते। वह समझते हैं कि ज़िन्दगी एक सफ़र है और इस सफ़र पर आदमी उस वक़्त चला था, जब उसने आदमी का रूप साधा था और वह सदा इसी डगर पर चलता रहेगा। रूप बदलते रहेंगे, लेकिन डगर वही रहेगी, मंज़िलें आती रहेंगी लेकिन सफ़र का सिलसिला ख़त्म नहीं होगा।

मौत एक माँदगी[1] का वक़्फ़ा[2] है,
यानी, आगे चलेंगे दम लेकर!

आफ़ाक़[3] की मंज़िल से गया कौन सलामत?
असबाब लुटा राह में याँ हर सफ़री[4] का।
ऐ ग़ाफ़िलाने दहर, यह कुछ राह की है बात।
चलने को क़ाफ़िले में यहाँ तुम रहे सो हो॥

इस तरह 'मीर' ने इस ज़िन्दगी को एक सफ़र समझा। वह सारी ज़िन्दगी इस सफ़र में बसते रहे क्योंकि दो पाटों की यह चक्की जिसे हम आप दुनिया कहते हैं एक ढर्रे पर चलती रही। वह इस चक्की में पिसते भी रहे, उससे लड़ते भी रहे। लेकिन उन्होंने कभी हारने और थक कर

---

१. ठहराव, रुकना।
२. पल, अरसा, मुद्दत।
३. दुनिया।
४. सफ़री, सफ़र करने वाला।
५. ज़माने के अनजान लोग।

बैठ रहने की बात नहीं सोची। इसीलिये हमें उनकी शायरी में जीवन की कठिनाइयाँ मिलती हैं, उस युग का दर्द मिलता है और हालात का दुख मिलता है।

लेकिन वह हारी हुई रूह नहीं जो आदमी को खुदकुशी की ओर ले जाती है। 'मीर' पिसते रहे और जीते रहे, जीते रहे और पिसते रहे और इस तरह उन्होंने हमें यह बताया कि ज़िन्दगी बड़ी खूबसूरत चीज़ है। उसके दुख भी खूबसूरत हैं और उसके सुख भी। जीवन की कठिनाइयों से लड़ते रहो लेकिन जीवन पर भरोसा रखो। ज़िन्दगी से प्यार करो, जो कुछ गुज़रे उसे सुनाओ, जो कुछ बीते उसे बताओ, लेकिन सफ़र जारी रखो। रास्ते में पहाड़ आते हैं। खाइयाँ मिलती हैं। तुम पहाड़ों से टकराओगे तो चोट भी लगेगी। खाइयों में गिरोगे तो घायल भी होगे। लेकिन ज़िन्दगी की डगर पर चलना आदमी का कर्त्तव्य है। इसलिये पहाड़ों से टकराते हुए, खाइयों में गिरते हुए भी आगे बढ़ते रहो। यह है 'मीर' का संदेश जो उनकी शायरी के हाथों हम तक पहुँचा है।

'मीर' की शायरी का यह संदेश उनकी ज़िन्दगी के तजरबों का नतीजा था। उनकी ज़िन्दगी में हालात ने दुखों का पलड़ा भारी कर दिया था। उनके चारों ओर हालात की ऊँची-ऊँची चहार दीवारियाँ घेरे हुए थीं जिनसे हर क़दम पर वह टकराते रहे। और, यह तो हम सब जानते हैं कि आदमी जब भी किसी चीज़ से टकराता है तो उसे चोट ज़रूर लगती है। 'मीर' भी चोट खाते रहे लेकिन उनके दिल में जीने की जो उमंग थी और ज़िन्दगी से जो अथाह प्यार था वह हर चोट की मरहम-पट्टी करता रहा। इस तरह वह चोट खा-खा कर ज़िन्दगी बसर करते रहे। और, चूँकि ज़िन्दगी और शायरी का चोली दामन का साथ है इसलिये इस चोट खाई हुई ज़िन्दगी ने उनकी चोट खाई हुई शायरी का रूप साधा। इस तरह उनकी पूरी शायरी उनकी अपनी ज़िन्दगी की कहानी बन गयी।

'मीर' ने ज़िन्दगी की कहानी सिर्फ़ शायरी ही में बयान नहीं की;

बल्कि सीधी-सादी ज़ुबान में और सीधे-सादे ढंग से अपनी आप बीती भी लिखी। यह आप बीती बहुत दिनों हमारी नज़रों से ओझल रही। हमने सबसे पहले 'मीर' की शायरी से जान-पहचान हासिल की और एक बड़े अरसा तक हम 'मीर' की ज़िन्दगी को उनकी शायरी की नज़र से देखते रहे। फिर डाक्टर अब्दुल हक़ की कोशिशों से 'मीर' की आप बीती फ़ारसी में हमारे सामने आई और हमें यह मालूम हुआ कि 'मीर' की शायरी से हमने उनकी ज़िन्दगी के बारे में जो कुछ सोचा था, उनकी ज़िन्दगी इससे भी ज़्यादा दुखी थी।

शायरी में तो सिर्फ़ झलकियाँ आई थीं, ज़िन्दगी का सारा दुख दर्द 'मीर' की आप बीती में समाया हुआ है और इस तरह हमें पहली बार 'मीर' की ज़िन्दगी की नज़र से उनकी शायरी को समझने का मौक़ा मिला। इस तरह 'मीर' की यह आप बीती, जिसे आप आगे चलकर पढ़ेंगे, 'मीर' से हमारी जान पहिचान बढ़ाती है। यह एक ऐसा पुल है जो हमें अपने देश के एक बहुत बड़े शायर की ज़िन्दगी से बहुत क़रीब लाता है। अब यह कहने की ज़रूरत नहीं कि शायर की ज़िन्दगी से क़रीब आने का मतलब उसकी शायरी से भी क़रीब आना है। क्योंकि यह आदमी की ज़िन्दगी के उतार चढ़ाव, उसके तजरबे और उसकी विपता ही हैं जो उसके ख़्यालों को जन्म देती हैं और यही ख़्याल मुख़्तलिफ़ फ़नों और कलाओं का रूप अख़्तियार करते हैं जिनमें एक फ़न और एक कला शायरी भी है।

शायर की ज़िन्दगी के साथ-साथ इस आप बीती का एक और पहलू भी है। ज़िन्दगी, जैसा कि हम सब जानते हैं, समाज के बीच बसर होती है। शायर किसी ऐसे टापू में नहीं रहता जिसका अपने इर्द-गिर्द की दुनिया से कोई लगाव न हो। बल्कि वह अपने समाज में उठता-बैठता है, समाज में बसने वाले दूसरे लोगों से हँसता-बोलता है, उसके दुख दर्द में दूसरे लोग हिस्सा लेते हैं और दूसरों के दुख दर्द में वह ख़ुद भी हिस्सा लेता है। इस तरह उसकी ज़िन्दगी वक़्त, तारीख़ और हालात

की मुख्तलिफ़ डोरियों में बँधी होती है। वह वक़्त, तारीख़ और हालते-ज़िन्दगी के बनने बिगड़ने में हिस्सा लेता है। ज़िन्दगी इन सब के असरात क़बूल करती है। दुनिया के उतार-चढ़ाव ज़िन्दगी में ऊँच-नीच पैदा करते हैं और किसी एक आदमी की ज़िन्दगी तनहा कोई हैसियत नहीं रखती। इसे समझने, इससे जान पहिचान हासिल करने और इसे जानने के लिये पूरे समाज, पूरी तारीख़ और पूरे हालात को जानना पड़ता है।

इसीलिये जब कोई आदमी अपनी ज़िन्दगी के तजरबे या अपनी आप बीती बयान करता है तो समाज, तारीख़ और हालात से आँखें चुराकर गुज़र जाना उसके बस से बाहर होता है। आप एक आम आदमी की आप बीती पढ़िये। इसमें भी किसी न किसी तरह कुछ झलकियाँ ऐसी ज़रूर मिल जायँगी जिनके ज़रिये आप उस आम आदमी के समाज, उसके ज़माने की आम दशा, रहन सहन और तारीख़ी वाक़यात का इल्म हासिल कर सकेंगे। लेकिन 'मीर' एक आम आदमी नहीं थे। वह अपने ज़माने के न सिर्फ़ बहुत बड़े शायर थे बल्कि एक बड़े समाजी हैसियत के मालिक भी थे। इसके साथ-साथ उन्हें इस दुनिया को देखने, उसे बरतने, उसे समझने और दूसरों को समझाने की एक लगन भी मिली थी। इसलिये 'मीर' की आप बीती सिर्फ़ उनकी आप बीती नहीं बल्कि उसमें जग बीती का मज़ा मिलता है।

'मीर' का जन्म सन् १७२२ ई० में हुआ और इस आप बीती में जो सब से आख़िरी वाक़या है वह है ग़ुलाम क़ादिर रोहिला का देहली पर क़ब्ज़ा कर लेना। यह सन् १७८८ ई० की बात है। इस तरह 'मीर' की आप बीती लगभग ६६ वर्षों की आप बीती है।

'मीर' ने इस आप बीती में वह सारे वाक़यात जमा कर दिये हैं जो उनके ज़माने में पेश आये और जिनमें कभी उन्होंने एक फ़क़ीरज़ादे की हैसियत से हिस्सा लिया, कभी एक आम शहरी की हैसियत से उनके नतीजे झेले; कभी वह दरबार के मसाहिब रहे, कभी एलची। ग़र्ज़ इन तमाम हालात से उनका क़रीबी ताल्लुक़ रहा। इस तरह 'मीर' की आप

बीती एक तारीख़ी दस्तावेज़ बन जाती है जिससे हम उस ज़माने के तमाम सियासी, तारीख़ी और समाजी हालात का इल्म हासिल कर सकते हैं जिसमें 'मीर' की ज़िन्दगी बसर हुई है।

जिस तरह 'मीर' के शेर उनके अपने हृदय की कहानी होते हुए भी सारी दुनिया की दास्तान मालूम होते हैं, उसी तरह यह आप बीती भी उनकी अपनी ज़िन्दगी के साथ-साथ उस ज़माने की कहानी का वर्णन करती है। 'मीर' की ज़िन्दगी किस तरह आरम्भ हुई, इस ज़िन्दगी को किन-किन रास्तों से गुज़रना पड़ा और इन रास्तों में कौन-कौन से मोड़ आये, यह तो हमें इस आप बीती से मालूम होता ही है; लेकिन मामला यहीं तक नहीं रहता। यह आप बीती हमें यह भी बताती है कि 'मीर' का ज़माना किस क़यामत का ज़माना था, कौन-कौन से तूफ़ान उठते रहे और उनकी आँखें किन-किन इन्क़लाबों को बरपा होते देखती रहीं। गोया यह आप बीती नहीं जग बीती भी है। यह 'मीर' की अपनी ही कथा नहीं बल्कि इस ज़माने की भी कथा है, जिसमें बक़ौल 'मीर' 'शरीफ़ों के लिये पगड़ी संभालना' कठिन हो रहा था। आप बीती के आरम्भ में 'मीर' ने उस पूरे माहौल की तसवीर खींची है जिसमें उनकी ज़िन्दगी ने आँखें खोलीं। और, अगर ज़रा ध्यान से इस माहौल को समझा जाय तो मालूम होगा कि 'मीर' की शायरी में जो क़लन्दराना शान और जोगियाना रंग मिलता है उसका मरक़ज़ कहाँ है। 'मीर' ने कहा था—

फ़क़ीराना आये सदा कर चले।
मियां ख़ुश रहो हम दुआ कर चले।

'तो यह फ़क़ीराना आने और दुआ कर चलने' की आदत उनकी घुट्टी में पड़ी हुई थी। उन्होंने एक ऐसे घर में आँख खोली जहाँ कई पुश्तों से यह फ़क़ीरी डेरा जमाये हुये थी। माला जपना और ईश्वर पर भरोसा रखना, जिस हाल में भी गुज़रे अपने जन्मदाता से लौ लगाकर ज़िन्दगी काटना इस घर की आदत बन चुकी थी। रूखी सूखी पर संतोष था। न किसी चीज़ की लालच थी और न किसी चीज़ का ग़म। ग़म

अगर था तो इसका कि अपने पैदा करने वाले से दिल लगाने और अपने आपको उस ज़ात में गुम कर देने का हौसला जीते जी न पूरा हो सका। हर दम तड़प थी कि जल्द से जल्द इस जान के जंजाल से छुटकारा मिले और ख़ुद को उस ज़ात में गुम कर दें। यह रस्म उनके ख़ानदान में बरसों से चली आ रही थी और उनके वालिद भी इसी रास्ते पर आगे बढ़ रहे थे। 'मीर' ने भी इसी बाप की आँखें देखी थीं और जब तक बाप जीते रहे अपने गोदों के पाले लाल को इसी रास्ते पर चलने का सबक़ पढ़ाते रहे।

इसलिये 'मीर' के ज़ेहन पर जो पहला असर पड़ा वह इसी माहौल का था और यह असर इतना गहरा और दूर तक पहुँचा हुआ था कि जब बड़े होकर इन्होंने शायरी शुरू की तो उनकी शायरी का एक बड़ा भाग इस असर से भरा पूरा नज़र आया।

'मीर' के समझने-समझाने वाले इसे तसौउफ़ का नाम देते हैं। तसौउफ़ ज़िन्दगी बनाने का वह वसूल है जो वेदान्त की तरह इस दुनिया को पैदा करने वाले को ही असल हक़ीक़त मानता है। उसके नज़दीक हक़ीक़त सिर्फ़ एक है यानी ईश्वर; बाक़ी जो कुछ है वह सिर्फ़ उसकी परछाई है। परछाई हक़ीक़त नहीं है। वह हक़ीक़त से अलग हो गई है। जिस तरह ज़ाहिर होने से पहले परछाई अपनी हक़ीक़त में छिपी रहती है, उसी तरह मिट जाने के बाद भी वह हक़ीक़त में गुम हो जाती है। इस लिये उसे अगर हक़ीक़त बनना है तो उसके लिये ज़रूरी है कि ख़ुद को मिटा दे। इसके बाद उसे हक़ीक़त का मिलाप हासिल हो जायगा। जो रिश्ता हक़ीक़त और परछाई में है, वही रिश्ता आदमी और ईश्वर में भी है। आदमी ईश्वर की ज़ात से अलग हो गया है। वह इस दुनिया में भटक रहा है। हक़ीक़त से यह दूरी उसके लिये दुख देने वाली है। और, इस दुख से छुटकारा मिलने का एक ही रास्ता है। वह यह कि आदमी अपने आपको मिटा कर ईश्वर से मिल जाय। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि वह ख़ुदकशी कर ले। तसौउफ़ ने इसके लिये एक रास्ता बताया है। और, वह रास्ता है इश्क़।

'मीर' की शायरी और उनकी ज़िन्दगी में इस इश्क़ ने बड़े गुल खिलाये हैं। इसलिये ज़रूरी है कि इस इश्क़ को भी अच्छी तरह समझ लिया जाय। आम बोल चाल की ज़बान में इश्क़ उस हद से बढ़े हुए सम्बन्ध या लगाव का नाम है जो मर्द-औरत के बीच जिन्सी ग़र्ज़ से पैदा होता है। इश्क़ में खो जाना, डूब जाना और महबूब के सिवा सारी दुनिया को भूल जाना जैसे जुमले हमने सुने हैं। अस्ल में इश्क़ वह जज़्बा है जो इन्सान के होश व हवास गुम कर देता है और एक दीवानगी सी उस पर छा जाती है। तसौउफ़ की दुनिया में भी इस शब्द से यही गुम हो जानेवाली कैफ़ियत मुराद ली जाती है। सूफ़ी अपने आप को ख़ुदा के इश्क़ में इतना डुबो देता है कि उसका अपना वजूद सिर्फ़ महबूब की परछाई रह जाता है। तसौउफ़ में यह इश्क़ ही ज़िन्दगी का मक़सद रह जाता है। 'मीर' की आप बीती में तसौउफ़ की पूरी तालीम है और इश्क़ के बारे में बड़ी सफ़ाई और सादगी के साथ बहुत सारी बातें लिख दी गयी हैं। जब वह सात आठ साल के थे तो उनके बाप ने उनसे कहा था, "बेटा, इश्क़ करो! इश्क़ ही इस दुनिया का पालनहार है। अगर यह इश्क़ न होता तो यह दुनिया न होती। बिना इश्क़ के ज़िन्दगी वबाल है। इश्क़ में जी जान की बाज़ी लगा देना ही कमाल है। इश्क़ ही बनाता है। इश्क़ ही जला कर कुन्दन कर देता है। जो कुछ है इश्क़ ही है। आग में इश्क़ की जलन है और पानी में इश्क़ का बहाव है। मिट्टी में इश्क़ का ठहराव है और हवा में उसकी चलत-फिरत है। मौत इश्क़ का सुस्त हो जाना है और ज़िन्दगी इश्क़ का होश में आ जाना है! दिन इश्क़ का जागना और रात उसका सो जाना है......!" यह तालीम सिर्फ़ उनके बाप ही ने नहीं दी, बल्कि शुरू ज़िन्दगी में उनका गुज़र जिधर से हुआ उन्हें यही सिखाया पढ़ाया गया क्योंकि उनका माहौल ही ऐसा था। बाप के अलावा उनके ख़ास चेले मीर अमानुल्ला जिन्हें 'मीर' ने हर जगह चचा लिखा है और जिन्होंने एक तरह से 'मीर' को गोद ले लिया था, उनके दिल में भी इश्क़ की यही ज्वाला भड़क रही थी और इसी दिल की लगी के हाथों घर छोड़ गुरु की ड्योढ़ी पर आ पड़े थे। वह 'मीर'

को यही सब सिखाते पढ़ाते रहे। इस चचा के साथ 'मीर' को बड़ा लगाव था और हर समय 'मीर' उनके आगे पीछे लगे रहते थे। चुनानचे उनके साथ इस ज़माने के और भी बहुत सारे फ़क़ीरों से 'मीर' की मुलाक़ात हुई और कोई मुलक़ात ऐसी न थी जिसमें इस बच्चे को दिल की आग तेज़ करने और इश्क़ के रास्ते में अपने आपको गुम कर देने की बात न सिखाई गई हो। 'मीर' की ज़िन्दगी में बचपन की उस सिखाई पढ़ाई ने नित नये रंग अख़्तियार किये। इश्क़ का यह तसौउर उनकी शायरी का तसौउर बन गया। बाद में उस दरिया में कई गुनगुनाते और मुसकराते सोते भी मिले और उन्होंने उसकी लहरों में जान भी पैदा की। लेकिन अगर ध्यान दिया जाय तो 'मीर' का इश्क़ ज़ेहनी तौर पर इसी तालीम का नतीज़ा नज़र आयेगा। ग़ज़लों में तो इसके इशारे ही मिलते हैं, लेकिन उनकी मसनवियों में यह पूरा तसौउर नज़्म हो गया है। मसनवियाँ पढ़िये तो मालूम होगा कि 'मीर' ने इश्क़ के इसी तसौउर के प्रचार के लिये मसनवियाँ लिखी हैं; गोया मसनवियाँ वह साधन हैं जिनमें बचपन की यह तालीम ढल गई है। चन्द अशआर देखते चलिये--

मुहब्बत से ज़ुलमत ने काढ़ा है नूर।
न होती मुहब्बत न होता ज़हूर।
मुहब्बत बिन इस जा न आया कोई।
मुहब्बत से ख़ाली न पाया कोई॥
मुहब्बत ही इस कारख़ाने में है।
मुहब्बत ही सब कुछ ज़माने में है॥
मुहब्बत से किसको हुआ है फ़राग़।
मुहब्बत ने क्या-क्या दिखाए हैं दाग़॥
मुहब्बत की हैं कारपरदाज़ियाँ।
कि आशिक़ से होती हैं जाँ बाज़ियाँ॥

मुहव्बत लगाती है पानी में आग।
मुहव्बत से है तेग़ो गर्दन में लाग।

या एक दूसरी जगह कहते हैं--

इश्क़ है ताज़ाकार ताज़ाख़याल।
हर जगह उसकी एक नई है चाल॥
दिल में जाकर कहीं तो दर्द हुआ।
कहीं सीने में आहे सर्द हुआ॥
कहीं आँखों से ख़ून होके बहा।
कहीं सर में जुनून होके रहा॥
गह नमक उसको दाग़ का पाया।
गह पतिंगा चिराग़ का पाया॥
कहीं आँसू की यह सरायत है।
कहीं यह ख़ूं चकाँ शिकायत है॥
काम में अपने इश्क़ पक्का है।
हाँ यह नैरंग साज़ पक्का है॥
कुछ हक़ीक़त न पूछो क्या है इश्क़।
हक़ अगर समझो तो ख़ुदा है इश्क़॥
इश्क़ ही इश्क़ है नहीं है कुछ।
इश्क़ बिन तुम कहो कहीं है कुछ?

इश्क़ और हुस्न दोनों एक दूसरे के साथ रात दिन की तरह जुड़े हुए हैं। इश्क़ का कोई मरकज़ होता है यानी वह मरकज़ जिससे इश्क़ किया जा सके, जिसे दिल की गहराइयों में उतार कर तन, मन, धन का नज़राना पेश किया जा सके और इस मरकज़ का नाम हुस्न है। यही हुस्न देखने वालों में वह जज़्बा पैदा करता है जिसके असर में देखने वाला हुस्न की जानिब खिंचा चला जाता है। आम बोलचाल में यह

मरक़ज़ कोई औरत है। और औरत के साथ हुस्न व ..नाई का तसौउर वावस्ता होता है। लेकिन तसौउफ़ में यह मरक़ज़ एक अनदेखा हुस्न है जिसे सूफ़ियों ने दुनिया की तमाम अच्छाइयों और ख़ूबसूरतियों का मरक़ज़ बताया है। वह एक नूर है और दुनिया में जितनी भी ऐसी चीज़ें हैं जिनमें इस नूर की परछाई नज़र आती है इसी नूर से निकली है। जब इस नूर से निकली हुई चीज़ें इतनी हसीन हैं तो ख़ुद वह नूर कितनी कशिश रखता होगा जो इन तमाम चीज़ों का मरक़ज़ है! इस तरह सूफ़ी परछाई से हक़ीक़त और ज़रिया से मक़सद की ओर बढ़ता है। तसौउफ़ में इस परछाई और हक़ीक़त को 'मज़हर' कहा जाता है यानी कोई ऐसा जिसे देखकर इस हमेशा रहने वाले नूर का ख़याल आये जिसका इश्क़ और जिसमें गुम हो जाना एक सूफ़ी की ज़िन्दगी का सबसे बड़ा मक़सद है। यह 'मज़हर' एक ख़ूबसूरत औरत होती तो ज़्यादा अच्छा था लेकिन चूँकि औरत और मर्द के इस क़िस्म के लगाव में जिन्स का आ जाना फ़ितरी था और सूफ़ी जिन्सी लगाव को अच्छी निगाहों से नहीं देखते थे इसलिये बजाय एक ख़ूबसूरत औरत के नव उम्र लड़के ये 'मज़हर' क़रार पाये, क्योंकि इस तरह सूफ़ियों की नज़र में इस मुक़द्दस लगाव का जिन्सी गिरावटों में बदल जाना नामुमकिन नज़र आया। तसौउफ़ की पूरी तारीख़ पढ़ डालिये। आपको हर बड़े सूफ़ी की ज़िन्दगी में कोई न कोई ऐसा वाक़या ज़रूर मिलेगा जब किसी नव उम्र लड़के ने किसी सूफ़ी की ज़िन्दगी में दाख़िल होकर उसके दिल में इश्क़ की सोई हुई आग जगाई और फिर उस जाग्रति ने इतना ज़ोर पकड़ा कि सूफ़ी जल तपकर कुन्दन बन गया। उस आग की लपट में उसकी शख़सियत ही तपकर कुन्दन नहीं बनी, बल्कि वह 'मरक़ज़' भी आँखों से ओझल हो गया जो असल 'मरक़ज़' नहीं बल्कि 'मरक़ज़' तक पहुँचने का एक साधन था। 'मीर' ने इस आप बीती में भी ऐसे कई वाक़ये बयान किये हैं जिनमें ऐसा ही कोई साधन मक़सद तक पहुँचने का बहाना बनता है।

'मीर' की आप बीती ही से यह भी पता चलता है कि उन्होंने इस 'मरक़ज़' से पाक दिलचस्पी रखने के साथ-साथ औरत से क़रीब होने की ख़्वाहिश का भी एहतराम किया जो जिन्सी जज़्बात की पाली हुई होती है। चुनानचे ख़ानदान ही की एक लड़की से उन्होंने इश्क़ किया। लेकिन बदले हुए हालात ने 'मीर' को उस लड़की के क़रीब न होने दिया। दूरी हुई और इसका असर इतना हुआ कि 'मीर' पागल हो गये।

आप बीती में 'मीर' ने अपने पागलपन की जो कथा बयान की है उसे पढ़िये तो अन्दाज़ा होगा कि अपना कोई भी जिन्सी जज़्बा 'मीर' ने उस 'मरक़ज़' से पूरा नहीं किया, बल्कि इस जज़्बा को पूरा करने के लिये उन्होंने जो ज़रिया अपनाया वह एक औरत थी। यह दूसरी बात है कि वह औरत इन्हें सारी ज़िन्दगी न मिल सकी। और यह इश्क़ भी सिर्फ़ ख़याल होकर रह गया। वस्ल के मज़े लूटना उनकी क़िस्मत में न था। हक़ीक़त यह थी कि वह उस लड़की से भी न मिल सकते थे। नतीजा यह हुआ कि इस जज़्बे ने ख़यालों में आसूदगी हासिल की और चाँद में एक सूरत नज़र आने लगी। यह वाक़या 'मीर' ने इस तरह बयान किया है—

"चाँदनी रात में एक ख़ूबसूरत जिस्म अपनी तमाम ख़ूबसूरती के साथ चाँद से मेरी ओर आता और मुझे बेहाल कर देता था। जिधर भी आँख उठती उसी हसीन पर नज़र पड़ती कि परी उसको देखकर शर्माये। जिस तरफ़ देखता वही नज़र आता कि हूर उसका सामना करते घबराये। दिल मचलता और चाँद की ओर लपकता......दीवानों जैसा, हाथों में पत्थर लिये लोग मुझे देख-देख भागते।"

यही वाक़या 'मीर' ने अपनी एक मसनवी 'ख़ावो ख़याल' में इस तरह बयान किया है—

जिगर और गर्दू से ख़ूँ हो गया।
मुझे रुकते-रुकते जुनूँ हो गया॥

कभू कफ़ व लब मस्त रहने लगा।
कभी संग दर दस्त रहने लगा॥
ये वहमे ग़लत कारवाँ तक बढ़ा।
कि कारे जुनूँ आसमाँ तक खिंचा॥
नज़र रात को चाँद पर गर पड़ी।
तो गोया कि विजली सी दिल पर पड़ी॥
नज़र आई एक शक्ल महताव में।
कमी आई जिससे ख़ुरो-ख़ाब में॥
अगर चन्द परतौ से उसके डरूँ?
व लेकिन नज़र इस तरफ़ ही करूँ॥
डरूँ देख मायल इसे इस तरफ़।
बहद्दे कि आ जाय होंठो पे कफ़॥
जो देखूँ तो आँखों से लोहू बहे।
न देखूँ तो जी पर क़यामत रहे॥
वही जल्वा हर आन के साथ था।
तसौउर मेरी जान के साथ था॥

'मीर' का पागलपन तो कुछ दिनों बाद जाता रहा लेकिन यह तसौउर वाक़ई उनकी जान के साथ रहा। वह जब तक ज़िन्दा रहे उस महबूब की याद उनके दिल की चौखट पर थपकियाँ देती रही और वह उस महबूब की जुदाई में ख़ून के आँसू रोते रहे। इस बात का सुबूत 'मीर' का पूरा दीवान है। दो चार शेर आप भी सुनते चलिये--

जब नाम तेरा लीजिये तब अश्क़ भर आवे।
इस ज़िन्दगी करने को कहाँ से जिगर आवे?

अश्क़ आँखों से कब नहीं आता।
लहू आता है जब नहीं आता॥

आँखों से जो पूछा हाल दिल का।
एक बूँद टपक पड़ी लहू की॥

एक टीस जिगर में उठती है, कुछ दर्द सा दिल में होता है।
मैं रात को उठ-उठ रोता हूँ, जब सारा आलम सोता है॥

हमारे आगे तेरा किसी ने नाम लिया।
दिले सितमज़दा को हमने थाम-थाम लिया॥

दिल मुझे उस गली में ले जाकर।
और भी ख़ाक में मिला लाया॥

लगती नहीं पलक से पलक इन्तज़ार में।
आँखें अगर यही हैं तो फिर 'मीर' सो चुका॥

अपने घराने के उस माहौल ने 'मीर' पर एक दूसरी तरह असर डाला। हम पहले लिख चुके हैं कि तसौउफ़ के नज़दीक दुनिया में जो कुछ है वह असल में हक़ीक़त की परछाईं है। हर जगह ख़ुदा का नूर मौजूद है, दुनिया की सारी चीज़ें उससे निकली हैं और इसलिये दुनिया में जो कुछ है उससे मुहब्बत करो क्योंकि यह सब कुछ उसी ज़ात से बँधा हुआ है।

'मीर' ने अपने बाप की तालीम का ज़िकर करते हुए एक वाक़या लिखा है कि एक नौजवान अहमद बेग उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ और बताया कि, "हज के इरादे से निकला हूँ। चाहता यह हूँ कि यह फ़र्ज़ पूरा करूँ।"

मीर अली मुत्तक़ी ने उस नौजवान को एक शेर सुनाया जिसके माने यह थे कि, "ऐ काबा की ओर जाने वाले, तू अपने ही चरणों में क्यों

नहीं झुकता ? क्योंकि यह तू ही तो है जो इतनी दूर से दिखाया जा रहा है।" और, इसके बाद इन शब्दों में उसे इन्सानियत की तालीम दी।

"पहले ख़ुद को पाओ, फिर काबे जाओ.....तुम जिसे ढूँढ़ते हो काबा भी उसी को ढूँढ़ रहा है। दिलों का तवाफ़ करो, यही काबा का तवाफ़ है। अपने ही को खोजो, अच्छा मक़सद यही है। सिवाय अल्लाह के और कोई चीज़ नहीं और कोई चीज़ ऐसी नहीं जो अल्लाह से अलग हो।"

इसी तालीम ने 'मीर' के दिमाग़ में वह झरोके खोल दिये जो आदमी को सिर्फ़ एक नज़र से देखने के क़ाबिल बनाते हैं, जहाँ आदमी रंग व नस्ल, मज़हब और सोच विचार के भेद से निकल कर सिर्फ़ आदमी रह जाता है। 'मीर' के दिल में उस आदमी का बड़ा आदर है। इस तालीम की गूँज 'मीर' की शायरी में बार-बार उभरी है।

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों।
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलता है॥

पहुँचा जो आपको तो मैं पहुँचा ख़ुदा के तईं।
मालूम अब हुआ कि बहुत मैं भी दूर था॥

सर किससे फ़रो नहीं होता।
हैफ़ बन्दे हुए, ख़ुदा न हुए॥

कुछ नहीं सूझता हमें उस बिन।
शौक़ ने हमको बे हवास किया॥

हक़ ढूँढना ही आपको आता नहीं वरना।
आलम है सभी यार कहाँ यार न पाया॥

हैं मुश्त ख़ाक लेकिन जो कुछ हैं 'मीर' हम हैं।
मक़दूर से ज़ियादा मक़दूर है हमारा ॥

ग़लत था आपसे ग़ाफ़िल गुज़रना।
न समझे हम कि इस क़ालिब में तू था ॥

मत सहल हमें समझो पहुँचे थे बहम तब हम।
बरसों तईं गर्दूं ने जब ख़ाक को छाना था ॥

कम नाज़ से किसके है बन्दे की बे नियाज़ी।
क़ालिब में ख़ाक के याँ पिनहाँ ख़ुदा है शायद ॥

सूरत परस्त होते नहीं मानी आशना।
है इश्क़ से बुतों के मेरा मुद्दआ कुछ और ॥

तरीक़े इश्क़ में है रहनुमा दिल।
पयम्बर दिल है, क़िबला दिल, ख़ुदा दिल ॥

अपनी ही सैर करने हम जलवागर हुए थे।
इस रम्ज़ को व लेकिन मादूद जानते हैं ॥

लाया है मेरा शौक़ मुझे पर्दे से बाहर।
मैं वरना वही ख़िलवते राज़े-निहाँ हूँ ॥

ध्यान दिया जाय तो इन्हीं अशआर में 'मीर' के मज़हब की कड़ियाँ भी मिलेंगी। वह एक मुसलमान घराने में पैदा हुए, लेकिन तसौउफ़ के माहौल ने इन्हें ऐसा कट्टर मुसलमान न होने दिया कि वह दूसरे मज़हब वालों से भेदभाव रखें। इन्सानियत उनका ईमान है और ख़ुदा तक

पहुँचना उनकी ज़िन्दगी का मक़सद। चूँकि दुनिया में हर चीज़ ख़ुदा के वजूद की परछाई है इसलिये वह हर चीज़ में उसे ढूँढ़ने और उसे पाने की कोशिश में डूबे नज़र आते हैं। मज़हबी रिवाज उनके लिये कोई ऐसी चीज़ नहीं जो हक़ीक़त तक पहुँचने में रोड़े अटकाये। उनके नज़दीक बहुत सारे रास्ते हैं, लेकिन ये सारे रास्ते एक ही मंज़िल की ओर ले जाते हैं। आदमी किसी भी गली से जाये, किसी भी रास्ते से चले, अगर उसके दिल में खोज की तड़प और हक़ीक़त तक पहुँचने की लगन है तो उसी मंज़िल पर पहुँचेगा जो 'मीर' के ख़याल में सारी इन्सानियत की मंज़िल है।

इसीलिए 'मीर' के नज़दीक मस्जिद, मन्दिर, गिरजा, गुरुद्वारे सब एक हैं। ये सब एक ही ज़ात की ओर इशारा करते हैं और इन सब ही में जाकर ख़ुदा को पाया जा सकता है। लेकिन शर्त सिर्फ़ यह है कि आदमी के दिल में खोज की तड़प हो और वह इस क़ाबिल हो चुका हो। अगर इश्क़ की गर्मी ने उसे इतना तपा दिया है कि वह हक़ीक़त तक पहुँच जाय तो चाहे वह मस्जिद में जाय, चाहे मन्दिर में, या कहीं भी न जाय ख़ुदा को पा सकता है। 'मीर' ने अपनी शायरी में बार-बार यह बात लिखी है और इसका इज़हार किया है कि उन्हें सिर्फ़ मंज़िल तक पहुँचने की धुन है, रास्ते से कोई ग़रज़ नहीं।

उसके फ़रोग़े हुस्न से झलकते हैं नूर।
शमा हरम हो या कि दिया सोमनाथ का॥

कुफ्र कुछ चाहिए इस्लाम की रौनक़ के लिए।
हुस्न जुन्नार है तसबीह सुलेमानी का॥

किसका काबा, कैसा क़िबला, कौन हरम है, क्या एहराम!
कूचे के उसके बाशिन्दों ने सब को यहीं से सलाम किया॥

'मीर' के दीनो मज़हब को अब पूछते क्या हो उनने तो।
क़श्का खींचा, दैर में बैठा, कब का तर्क इस्लाम किया॥

मत रंज कर किसी को कि अपने तो एतक़ाद।
दिल ढाय कर जो काबा बनाया तो क्या हुआ?

हम न कहते थे कि मत दैरो हरम की राह चल।
जब ये दावा हश्र तक शैख़ो बरमन में रहा॥

दैरो हरम से गुज़रे अब दिल है घर हमारा।
है ख़त्म इस आबले पर सैरो सफ़र हमारा॥

जमाए एहराम ज़ाहिद पर न जा।
था हरम में एक न मरहम रहा॥

सई तौफ़े हरम न की हरगिज़।
आस्ताँ पर तेरे मुक़ाम किया॥

तेरे कूचे के रहने वालों ने।
यहीं से काबा को सलाम किया॥

इश्क़े ख़ूबाँ को 'मीर' मैं अपना।
क़िबला व काबा व इमाम किया॥

काबे जाने से नहीं कुछ शैख़ मुझको इतना शौक़।
चाल वह बतला कि मैं दिल में किसके जा करूँ॥

सुबहे-चमन का जलवा हिन्दी बुतों में देखा।
सन्दल भरी जबीं हैं, होंठों की लालियाँ हैं॥

वजहे बेगानगी नहीं मालूम।
तुम जहाँ के हो वाँ के हम भी हैं॥

ऊपर के शेर पढ़िये तो उससे साफ़ पता चलता है कि ये अशआर एक ऐसे इन्सान की आवाज़ हैं जिसे मज़हबी एख़्तेलाफ़ से कोई लगाव नहीं। जो काबा हो या सोमनाथ का मन्दिर या मस्जिद सब को एक समझता है और हर जगह उसी ज़ात का जलवा देखता है जो तमाम दुनिया की सच्चाई और असलियत है।

'मीर' का यही तसौउर उन्हें ज़िन्दगी के छोटे मोटे सोतों में बाँटने की बजाय हर तरफ़ नज़र आने वाली आदमीयत का शैदाई बनाता है। उनकी नज़र में इन्सान सब बराबर हैं—न कोई मुसलमान है, न कोई हिन्दू, न कोई मोमिन है और न कोई काफ़िर! इन्सान बस इन्सान है और वजूद ख़ुदावन्द की परछाईं।

'मीर' के इस तसौउर ने उनकी शख़्सियत में एक फैलाव और एक वसअत पैदा कर दी थी। वह सारी ज़िन्दगी इसी वसअत और फैलाव के हामिल रहे। उन्होंने ज़िन्दगी से ही प्यार नहीं किया, बल्कि सारी दुनिया से प्यार किया, तमाम इन्सानों से प्यार किया और इस-लिये जब भी वह कोई हादसा बयान करते हैं तो यह नहीं गिनते कि कौन हिन्दू था, कौन मुसलमान! सिर्फ़ उन्हें इसका दुख होता है कि इन्सानों को ये दुख झेलने पड़े।

इन सब बातों की रोशनी में देखिये तो 'मीर' एक बड़े इन्सान ही नहीं, एक बहुत बड़े इन्सानियत के परस्तार भी नज़र आते हैं। उनके नज़दीक इन्सानों की रहबरी के लिये काबा और सोमनाथ की ज़रूरत नहीं, बल्कि इन्सान को अपने दिल की ओर देखना चाहिये क्योंकि यही वह मंदिर है जिसमें मुहब्बत ख़ुदावन्दी का चिराग़ जलता रहता है। जब इस चिराग़ की लौ तेज़ हो जाती है तो आँखों पर से पर्दे हट जाते हैं और वह नूर आँखों के सामने आ जाता है जिसकी ओर ले जाने के लिये दुनिया के तमाम मज़हब पैदा हुए।

'मीर' ने जिस ज़माने में आँखें खोलीं वह हमारे और आपके ज़माने से कहीं ज़्यादा बेचैनी और उलझनों का ज़माना था। दिल्ली की शानदार हुकूमत अपनी आन-बान खोकर ज़िन्दगी की आख़िरी हिचकियाँ ले रही थी। जिस तख़्त पर बाबर, हुमायूँ, अकबर और जहाँगीर व शाहजहाँ जैसे महान् सम्राट बैठकर इन्सानों की किस्मतें बनाया करते थे वहाँ शाह आलम राग-रंग के बल पर झूठी तसकीन हासिल कर रहे थे। मुग़ल ख़ान्दान की शान व शौक़त का चिराग़ टिमटिमा रहा था। सारे मुल्क में तेज़ आंधियाँ चल रही थीं। आंधी का हर झोंका इस टिमटिमाते हुए चिराग़ की ज़िन्दगी घटा रहा था। देर थी तो बस इतनी कि एक तेज़ झोंका आये और ज़िन्दगी के इस दिये को हमेशा-हमेशा के लिये बुझा दे। मुल्क में जो भी तूफ़ान सर उठाता उसकी लहरें लाल क़िले की दीवारों से टकरातीं। दीवार को कुछ और कमज़ोर करतीं। लेकिन जड़ से उखाड़ फेंकने में नाकाम होकर दिल्ली के मासूम शहरियों पर टूट पड़तीं।

'मीर' जब तक आगरे में रहे इन हालात से बचे रहे। लेकिन जब हुकूमत कमज़ोर होती है तो इसका असर केवल राजधानी तक ही नहीं रहता बल्कि सारा मुल्क इसका असर क़ुबूल करता है और मुल्क भर में इन ज़लज़लों की धमक महसूस की जाती है। चुनानचे दिल्ली से दूर रहने पर भी 'मीर' और उनके घर वाले इस बेचैनी और उलझन से बच नहीं सकते थे। हमें 'मीर' की इब्तिदाई ज़िन्दगी ही में इन उलझनों की छाप उभरती नज़र आती है।

जैसा कि लिखा जा चुका है इनके घर वाले सीधे-सादे लोग थे। उनको दुनिया से कोई लगाव न था। छल कपट से दूर ख़ुदा-ख़ुदा करना और अपने आपको ख़ुदा के ध्यान में गुम कर देना उनके वालिद की ज़िन्दगी थी। ऐसी ज़िन्दगी बड़ी कठिन होती है। लोग भले ही इज़्ज़त करें, पेट पालना और ख़ुशी व आराम के साथ ज़िन्दगी काटना ऐसे लोगों के लिये बड़ा मुश्किल होता है।

'मीर' की आप बीती से पता चलता है कि उनकी ज़िन्दगी बाप और मुँह बोले चचा की मौजूदगी में भी कोई बहुत आराम की ज़िन्दगी नहीं थी। किसी न किसी तरह ज़िन्दगी बसर हो जाती थी। यह उस वक़्त की बात थी जब उनके सर पर बाप और चचा का हाथ था। लेकिन जब मौत ने ये साये उनके सर से छीन लिये तो ज़िन्दगी की कड़ी धूप ने उन्हें अपनी लपेट में ले लिया और फिर सारी ज़िन्दगी यह कड़ी धूप उन्हें जलाती रही और एक दिन 'मीर' को राख की ढेर में बदल दिया। 'मीर' ने एक शेर में यह विपता बड़ी अच्छी तरह बयान की है—

आग थे इब्तदाए इश्क़ में हम।
हो गये ख़ाक इन्तिहा यह है॥

बाप की मौत के बाद सौतेले भाई ने बची-खुची चीज़ें हथिया लीं।। 'मीर' के हिस्से में केवल ख़ुदा का नाम आया या बाप का छोड़ा हुआ क़र्ज़ा। किसी न किसी तरह 'मीर' ने बाप का क़र्ज़ा अदा किया। लेकिन अब आगरे में रहना उनके लिये मुश्किल हो गया था। लोगों की आँखें बदल गई थीं। न सर पर किसी बड़े का हाथ था और न किसी की मदद। कुछ दिनों आगरा में रह कर नौकरी ढूँढ़ते रहे, लेकिन सिवाय मायूसी के कुछ हाथ न आया। आख़िर देश छोड़ परदेश सिधारने की ठानी और सफ़र की मुसीबतें झेलते दिल्ली की ओर चल खड़े हुए।

'मीर' ने ये सारे हालात अपनी एक मसनवी में इस तरह बयान किये हैं—

ज़माने ने रक्खा मुझे मुत्तसिल,
परागन्दा रोज़ी परागन्दा दिल।
गई कब परेशानिये रोज़गार,
रहा मैं तो हम नालये ज़ुल्फ़े यार।

वतन में न इक सुब्ह मैं शाम की,
न पहुँची ख़बर मुझको आराम की।
उठाते ही सर यह पड़ा इत्तफ़ाक़,
कि दुश्मन हुए सारे अहले वफ़ाक़।
जलाते थे मुझ पर जो अपना दिमाग़,
दिखाने लगे दाग़ बालाये दाग़।
जुदाई ने आवारा चाहा मुझे,
मेरी बेकसी ने निबाहा मुझे।
रफ़ीक़ों से देखी बहुत कोतही,
ग़रीबी ने इक उम्र की हमसरी।
मुझे यह ज़माना जिधर ले गया,
ग़रीबाना चन्दे बसर ले गया।
बँधा इस तरह आह बारे सफ़र,
कि न ज़ादे रह कुछ न बारे सफ़र।
गिरफ़्तारे रंजो मुसीबत रहा,
ग़रीबे दयारे मुहब्बत रहा।
चला अकबराबाद से जिस घड़ी,
दरो बाम पर चश्मे हसरत पड़ी।
कि तर्के वतन पहले क्यों कर करूँ,
मगर हर क़दम दिल को पत्थर करूँ।
दिले मुज़्तरिब अश्के हसरत हुआ,
जिगर रुख़सताने में रुख़सत हुआ।

इन अशआर से पता चलता है कि आगरा से सफ़र करना 'मीर' के लिये एक क़यामत से कम न था ! देश यूँ भी प्यारा होता है और फिर उस देश से, जिसमें बाप चचा की मुहब्बत के बीच 'मीर' ज़िन्दगी

गुज़ार चुके थे, ज़रूर ही उन्हें बड़ी मुहब्बत रही होगी। फिर 'मीर' ने जिन हालात में आगरा छोड़ने का फ़ैसला किया वह भी अफ़सोसनाक हैं। अभी बाप की मौत का ग़म ताज़ा था, इस पर यह नया सदमा ज़ाहिर है 'मीर' के लिये दुहरी क़यामत बन गया होगा।

मेरे नज़दीक 'मीर' की दुखी ज़िन्दगी में बाप की मौत के इस वाक़ये को भी बड़ी अहमियत हासिल है। बाप से छूटने के बाद वतन से भी अलग होने से 'मीर' के जीवन में दुखों के नये दरवाज़े खुल गये। फिर वतन छोड़ने के बाद 'मीर' पर जो कुछ बीती और जिस तरह उन्हें गली-गली की ठोकरें खानी पड़ीं उसने इस ग़म को और हवा दी। नतीजा यह हुआ कि 'मीर' सर से लेकर पैर तक ग़म की जलन में जलने सुलगने लगे और उनकी शायरी इस जलन और इस दुख की कहानी बन कर रह गई।

'मीर' आगरा से दिल्ली उस वक़्त पहुँचे जब मुहम्मद शाह का ज़माना ख़त्म होने के क़रीब था और वह परीशानियाँ ज़ोर पकड़ने लगी थीं जिन्हें हम कुछ ही दिनों बाद सल्तनत की जड़ें हिलाते देखते हैं। इस सफ़र में उन्हें ज़्यादा परीशानियाँ नहीं उठानी पड़ीं। कुछ ही दिनों बाद उन्हें सम्सामुद्दौला ख़्वाजा आसिम के दरबार में पहुँचने का मौक़ा मिल गया। नवाब के भतीजे ख़्वाजा मुहम्मद बासित ने, जो ख़ुद भी फ़क़ीरी लिये हुए थे, नवाब से उनकी इम्दाद के लिये कहा और चूँकि नवाब 'मीर' के बाप अली मुत्तक़ी की आँखें देखे हुए थे इसलिये उन्होंने 'मीर' और उनके भाई का वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर दिया। इस तरह पेट की तरफ़ से सुकून हुआ और 'मीर' दिल्ली से आगरा चले आये।

अभी 'मीर' को आगरे आये ज़्यादा दिन नहीं हुए थे कि उन्हें एक दूसरे हादसे से दो चार होना पड़ा। यह हादसा था हिन्दोस्तान पर नादिरशाह की चढ़ाई। 'मीर' अगरचे आगरे में थे और दिल्ली की लूट मार से उनका कोई सम्बन्ध न था लेकिन इससे उनकी ज़िन्दगी

पर जो बहुत बड़ा असर पड़ा वह यह था कि उनका वज़ीफ़ा बन्द हो गया।

मुहम्मद शाह के साथ नादिरशाह के लश्कर का मुक़ाबला करने वालों में सम्सामुद्दौला भी शामिल थे। वह लड़ाई में घायल हुए और दिल्ली आकर मौत की गोद में सो गये। यह ख़ानदान 'मीर' का सबसे बड़ा सरपरस्त था, इसलिये इसकी तबाही का नतीजा 'मीर' के हक़ में भी बुरा हुआ। वज़ीफ़ा देने वाला न रहा। अब खाँय तो क्या खाँय? नाचार फिर आगरे से बाहर निकले, देहली पहुँचे और इस तरह कि यहीं के होकर रह गये।

अब तक देहली में बरपा होनेवाली क़यामतों से उनका दूर का लगाव था। लेकिन अब वह देहली में थे और यहाँ जो कुछ हो रहा था उससे उनकी ज़िन्दगी पर असर पड़ रहा था। बदलती हुई तारीख़ जैसी-जैसी करवटें ले रही थी, हालात जिन-जिन क़यामतों से दो चार हो रहे थे उनकी भुगतान 'मीर' को भी उठानी पड़ रही थी और यह सारी चीज़ें उनकी शख़्सियत, उनके ज़ेहन और उनकी कला पर गहरी छाप डाल रही थीं।

नादिरशाह के हमले के बाद के तारीख़ी हालात 'मीर' ने अपनी आप बीती में बड़ी तफ़सील के साथ लिखे हैं और हमारे ख़्याल में 'मीर' का यह बयान हमारी तारीख़ के लिये एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ की हैसियत रखता है। यह सुनी सुनाई कहानी नहीं है, आँखों देखा हाल है। यह जग बीती वास्तव में आप बीती है।

'मीर' की ज़िन्दगी इन तमाम हादसों और वाक़यात की गोद में पली और परवान चढ़ी है। इन दुखों ने उनके जज़बात को ठेस लगाई है, उनके दिल को दुख पहुँचाया है। 'मीर' ने इन हालात में दर-दर की ठोकरें खाई हैं। उनकी ज़िन्दगी में बाप, चचा की मौत, इश्क़ की नाकामी और तबाहहाली ने अन्दर तो अँधेरा फैला ही रक्खा था, इन हालात ने बाहर भी अँधेरा कर दिया और इस अँधेरे में उन्हें भटकने

और ठोकरें खाने के लिये छोड़ दिया। उन्होंने हुकूमतों को दम तोड़ते देखा, बादशाहों की इज़्ज़त को मिट्टी में मिलते देखा, शरीफ़ों को गली-गली ख़ाक छानते और आम लोगों को रोटी के एक-एक टुकड़े के लिये तरसते देखा। उनकी आँखों तले शहर लुटे, आबादियाँ वीरानों में बदलीं, मासूमों के ख़ून से होलियाँ खेली गई। लाखों इन्सानों को बर्बाद होना पड़ा। ख़ून की नदियाँ बहीं। अमीरों ने एक दूसरे के सर काटे। बाहर से आनेवाले हमलावारों ने जी भर कर लूटमार की। ख़ुद 'मीर' को बार-बार शहर छोड़कर घर वालों के साथ जगह-जगह भागना पड़ा। ग़रज़ ज़माने की ख़राबी ने 'मीर' को वह दिन दिखाये कि ख़ुदा किसी को न दिखाये।

'मीर' ने इस आप बीती के बड़े हिस्से में एक-एक वाक़ये का आँखों देखा हाल लिखा है। और चूँकि जो कुछ हो रहा था उसका असर उन पर भी पड़ रहा था इसलिये यह जग बीती यूँ बयान हुई है कि उसमें उनके दिल का ख़ून भी मिल गया है। और इस बयान में ज़ाती रंग ने वह बात पैदा कर दी है कि पढ़िये तो कलेजा मुँह को आता है। शहरों का लुटना, बस्तियों का वीरान होना, बादशाहों की आँखों में दहकती हुई सलाइयाँ फिरना, तपती हुई रेत पर पहरों उन जिस्मों का पड़ा रहना जिन्हें क़ालीनों पर भी उस वक़्त नींद आती जब बाज़ों की सुरीली तानें उनके कानों में जातीं। यह सारी बिपता इस आप बीती में लिखी हुई नज़र आती है। 'मीर' ने इन सारे वाक़यात को जिस दुख-दर्द के साथ बयान किया है उसकी हम एक मिसाल पेश कर रहे हैं!

['मीर' ने इस आप बीती में एक जगह दुर्रानियों के हमले के बाद देहली का जो हाल था उसे इस तरह बयान किया है।]

> "एक दिन टहलता हुआ शहर के वीरानों में जा निकला। हर क़दम पर रोता ज्यों-ज्यों आगे बढ़ा हैरत बढ़ती गई। मकानों को पहचान न पाया। न आबादी का पता था न इमारतों के निशान और न वहाँ रहने वालों की ख़बर!

"वर के घर मिसमार थे, दीवारें उजड़ी हुई ख़ान्क़ाहें सूफ़ियों से ख़ाली। शराब खाने पीने वालों से उजाड़। यहाँ से वहाँ तक एक वीराना था सुनसान उजाड़!"

"कभी कोई ऐसा मानूस चेहरा नज़र न आया जिससे दो बातें कर लेता। कोई ऐसा न मिला जिसके पास जा बैठता। इस उजाड़ गली से निकल कर वीरान रास्ते पर आ खड़ा हुआ और हैरत से तबाही के छोड़े हुए निशानात देखता रहा। बहुत दुख उठाया और यह तय किया कि अब इधर न आऊँगा और जब तक रहूँगा शहर का मुँह न देखूँगा।"

ये बातें नहीं हैं, ये ख़ून के आँसू हैं। ये शब्द नहीं, दिल के टुकड़े हैं जो ग़म की ज़्यादती से पारा-पारा होकर आँखों से बह आये हैं। एक जगह आलमगीर सानी के क़त्ल का हाल इस तरह लिखा है–

"......बादशाह इन नमकहरामों की मिली भगत से बेख़बर था। जब शाम के साए गहरे हो गये तो वह सवार होकर फ़क़ीर से मिलने चल पड़ा। कोटले पहुँचा तो उस बेगुनाह को चाक़ू मार कर मौत के घाट उतार दिया और उसकी लाश दीवार के नीचे फेंक दी। बादशाह की लाश दिन भर बेकसी की हालत में ज़मीन पर पड़ी रही। जो देखता इस गन्दी हरकत पर लानत करता। आख़िर उसके होते-सोतों ने जी कड़ा करके उसकी मैयत रातों-रात दफ़ना दी और उन ज़ालिमों के ख़ौफ़ से मातम भी नहीं किया।"

अहमद शाह अब्दाली की लूट-मार का हाल भी 'मीर' की ज़बानी सुनते चलिये–

"शाम को राजा शहर से सूरजमल के क़िलों में जाने के लिये निकले। मैं अपनी इज़्ज़त थामे शहर में बैठा रहा। शाम के बाद एलान हुआ कि बादशाह ने अमान दे दी, लोग परीशान न हों। मगर जब घड़ी भर रात गुज़री तो लूट

मार शुरू कर दी। शहर को आग लगा दी। घरों को जला दिया। सारा सामान लूट लिया। सुबह हुई तो फ़ौज और रोहीले टूट पड़े। शहर के फाटक तोड़ डाले, लोगों को पकड़ लिया, बहुतों को जला दिया और सर काट लिये।........ बड़े-बड़े अमीर एक घूँट पानी के लिये भी मुहताज हो गये, घरवाले बे-घर और नवाब फ़क़ीर बन गये! शहर में लूट-मार करने वाले जमा थे और बिना किसी रोक-टोक के लूट-मार कर रहे थे। घायल भी करते और गालियाँ भी देते। जो दिखाई देता उसके बदन पर एक लत्ता न छोड़ते। इस लूट-मार में नया शहर जल-भुन कर राख हो गया। पुराना शहर जिसे 'जहाने नाज़ां' कहते थे किसी गिरी हुई सजी सजाई दीवार की तरह था। जहाँ तक दिखाई देता मरने वालों के सर, हाथ, पाँव और धड़ तड़पते दिखाई देते! घर इस तरह जल रहे थे जैसे अग्नि-कुण्ड जलता है; यानी जहाँ तक आँख जाती राख की ढेर के सिवा कुछ नज़र न आता। जो मर गया समझो आराम पा गया। जो हाथ आ गया वह उनकी मार-धाड़ से बच न सका। मैं कि पहले ही से फ़क़ीर था और ज़्यादा फ़क़ीर हो गया। सड़क के किनारे एक मकान में रहता था सो ढह कर मिट्टी का ढेर बन गया.......!"

'मीर' ने इसी तफ़सील और इसी दुख के साथ सारी दास्तान लिखी हैं। जैसा हमने ऊपर लिखा है 'मीर' का ज़माना नित नई क़यामतों का ज़माना था। बाहर वालों के हमले, मुग़लों की मिटती हुई ताक़त, दरबारी अमीरों की साज़िशें, मरहठों की लूट, सियासी ख़ुदग़र्ज़ियाँ और चालाकियाँ, जनता की मुसीबतें, अंग्रेज़ों की उभरती हुई क़ूवत और हिन्दोस्तान के गले की ओर बढ़ता हुआ ग़ुलामी का फन्दा, ग़रज़ कि उस ज़माने का पूरा हिन्दुस्तान इस आप बीती में जकड़ा हुआ दिखाई देता है।

आप बीती का बड़ा हिस्सा 'मीर' ने इन्हीं वाक़यात के लिये चुन कर अपनी जीती जागती सामाजिक चेतना का सुबूत दिया है और यह बताया है कि एक समाजी चेतना रखने वाला आदमी अपने ज़माने को अपने से ज़्यादा महत्वपूर्ण समझता है। अगर 'मीर' केवल अपने घरेलू हालात लिख देते तो भी इस आपबीती का एक महत्व होता, लेकिन इस जग बीती ने इसे जो महत्व दिया है वह इसे हासिल न हो पाता।

अब इस आपबीती को हम आप इसलिये ही नहीं पढ़ेंगे कि इसके ज़रिये हमें 'मीर' को जानने और समझने में मदद मिलेगी बल्कि इस-लिये भी पढ़ेंगे कि इससे हम अपने देश को जान सकेंगे। यह आपबीती उस ज़माने का आँखों देखा हाल है जब हमारे देश की क़िस्मत बदल रही थी, जब एक युग वक़्त के दरिया में डूब रहा था और नया ज़माना एक सूरज की तरह अंग्रेज़ों की सूरत में पूरब से उभर रहा था।

'मीर' ने जिस दुख और दर्द के साथ यह विपता आपबीती में लिखी है उसी दुख और दर्द के साथ इसे अपनी शायरी में भी समोया है। 'मीर' के दिल पर इन क़यामतों से जो कुछ बीती थी और उन्होंने इसे जिस तरह महसूस किया था उसे ज्यों का त्यों अपनी शायरी में ढाल दिया है। चुनानचे हमें 'मीर' की शायरी में एक-एक वाक़या उभरता डूबता दिखाई देता है।

'मीर' की शायरी पर इन हालात ने एक दूसरी तरह भी असर डाला है। 'मीर' ने अपनी ग़ज़लों में लश्कर, बरबादी, लूट, क़त्ल, लाश जैसे लफ़्ज़ों को बड़ी तदाद में इस्तेमाल किया है और उनसे बड़े ख़ूब-सूरत मानी पैदा किये गये हैं। ये अल्फ़ाज़ इस्तलाहों की शक्ल में आये हैं और इन अल्फ़ाज़ ने शेर कहने के ढंग और अन्दाज़ को बड़ा ख़ूबसूरत कर दिया है। इन सब बातों का अन्दाज़ा आपको नीचे लिखे हुए शेरों से हो सकता है! 'मीर' के अशआर में इन हालात की झलकियाँ देखते चलिये—

अब ख़राबा हुआ जहानाबाद,
वरना हर इक क़दम पे यां घर था।

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके,
पछताओगे, सुनो हो, यह बस्ती उजाड़ के।

दिल की आबादी की इस हद है ख़राबी कि न पूछ,
जाना जाता है कि इस राह से लश्कर गुज़रा।

ख़ुश न आई तुम्हारी चाल हमें,
यूँ न करना था पायमाल हमें।

शाहां कि कुहले जवाहिर थी जिनकी ख़ाके पा,
उन्हीं की आँख में फिरती सलाइयाँ देखीं।

दिल्ली में आज भीख भी मिलती नहीं उन्हें,
था कल तलक दिमाग़ जिन्हें ताजो-तख़्त का।

नाकाम रहने का तो तुम्हें ग़म है आज 'मीर',
बहुतों के काम हो गये हैं कल तमाम याँ।

जिस सर को ग़ुरूर आज है याँ ताजवरी का,
कल इस पे यहीं शोर है फिर नौहागरी का।

ले साँस भी आहिस्ता कि नाज़ुक है बहुत काम,
आफ़ाक़ की इस कारगहे शीशागरी का।

मर्सिये दिल के कई कह के दिये लोगों को,
शहरे दिल्ली में है सब पास निशानी उसकी।

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर है,
यह नगर सौ मरतवा लूटा गया।

क्या करूँ शरह ख़स्ता जानी की,
मैंने मर-मर के ज़िन्दगानी की।

ख़रावी दिल की क्या अम्बोहे दर्दो ग़म से पूछो हो,
वही हालत है जैसे शहर लश्कर लूट जाता है।

बड़े-बड़े थे घर जिनके याँ—आसार उनके यह हैं अब,
'मीर' शिकस्ता दरवाज़े हैं गिरी पड़ी दीवारें हैं।

मेरे तग़ईरे हाल पर मत जा,
इत्तफ़ाकात हैं ज़माने के।

आहे सहर ने सोज़िशे दिल को मिटा दिया,
इस बाद ने हमें तो दिया सा बुझा दिया।

कोई नहीं जहाँ में जो अन्दोहगीं नहीं,
इस ग़मकदे में आह दिले ख़ुश कहीं नहीं।

मसायब और थे पर दिल का जाना,
अजब एक सानिहा सा हो गया है।

इन उजड़ी बस्तियों में दीवारो-दर हैं क्या-क्या,
आसार जिनके हैं ये उनका नहीं असर कुछ।

तुझको क्या बनने बिगड़ने के ज़माने से कि याँ,
ख़ाक किन-किन की हुई और हुआ क्या-क्या कुछ।

क़त्ल किये पर ग़ुस्सा क्या है लाश मेरी उठवाने दो,
जान से हम भी जाते रहे हैं तुम भी आओ जाने दो।

शहरे दिल एक मुद्दत उजड़ा बसा ग़मों में,
आख़िर उजाड़ देना उसका क़रार पाया।

मिला है ख़ाक में किस-किस तरह का आलम याँ,
निकल के शहर से कुछ सैर कर मज़ारों का।

इस कुहना ख़राबे में आबादी न कर मुनइम,
इक शहर नहीं याँ जो सहारा न हुआ होगा!

शहरे दिल आह अजब जाय थी पर उसके गये,
ऐसा उजड़ा कि किसी तरह बसाया न गया।

क़यामत करके अब ताबीर जिसको करती है ख़िल्क़त,
वह इस कूचे में इक आशोब सा शायद हुआ होगा।

कुछ मैं नहीं इस दिल की परीशानी का बाइस,
बरहम ही मेरे हाथ लगा था यह रिसाला।

जहाँ को फ़ितने से ख़ाली कभू नहीं पाया,
हमारे वक़्त में तू आफ़ते ज़माना हुआ।

ख़राबी दिल की इस हद है कि यह समझा नहीं जाता,
कि आबादी भी याँ थी या कि वीराना था मुद्दत का।

दिल से ख़ुश तरह मकाँ फिर भी कहीं बनते हैं,
इस इमारत को तो टुक देख के ढाया होता।

रोते फिरते हैं सारी-सारी रात,
अब यही रोज़गार है अपना।

परीशाँ हैं इस वक़्त में नेको बद,
मुवा जो कोई वह ठिकाने लगा।

यह बस्तियाँ उजड़ के कहीं बस्तियाँ भी हैं,
दिल हो गया ख़राब, जहाँ फिर रहा ख़राब।

'मीर' साहब ज़माना नाज़ुक है,
दोनों हाथों से थामिये दस्तार।

या रब किधर गये वे जो आदमी रविश थे,
ऊजड़ दिखाई देते है शहरो, दहो, नगर सब।
हरफ़ो सुख़न से मुतलक़ याँ गुफ़्तगू नहीं है,
प्यादे सवार हमको आए नज़र नफ़र सब।
आलम के लोगों का है तस्वीर का सा आलम,
ज़ाहिर खुली हैं आँखें लेकिन हैं बेख़बर सब।
'मीर' इस ख़राबे में क्या आबाद होवे कोई,
दीवारें दर गिरे हैं, वीराँ पड़े हैं घर सब।

अब तक हम ग़ज़लों से अशआर पेश कर रहे थे। ग़ज़ल की दुनिया बंधे टिके वसूलों की दुनिया है जिसमें केवल झलकियाँ ही दिखाई जा सकती हैं। इसीलिये इन अशआर में हमको तफ़सील नहीं मिलती, केवल झलकियाँ दिखाई देती हैं। 'मीर' ने कुछ नज़्में भी लिखी हैं जिनमें उनकी सामाजिक चेतना उभर कर हमारे सामने आती है। ऐसी ही एक नज़्म 'शहरे आशोब' भी है। इस नज़्म में इस ज़माने की समाजी दशा 'मीर' ने इस तरह बयान की है–

ज़िन्दगानी हुई है सब पे वबाल,
कुँजड़े झीकें हैं, रोते हैं बक़्क़ाल।
पूछ मत कुछ सिपाहियों का हाल,
एक तलवार नीचे है, इक ढाल।
बादशाहो वज़ीर सब क़ल्लाश॥
लाल ख़ेमा जो है सपहर आसास,
पाली हैं रन्डियों की उसके पास,
है ज़िना व शराब बे उसवास।
रोब कर लीजिये यहाँ से क़यास,
क़िस्सा कोताह रईस हैं ऐयाश॥
हो जो उन लोगों में गदा का गुज़र,
सहम रह जाँय सब न देखें उधर।
देर के बाद यह कहें हिलकर,
शाह जी, ले ख़ुदा सभों की ख़बर।
सो भी यह बात है पस अज़ कंगाश॥

और इन सारी आफ़तों ने 'मीर' का जो हाल किया अब उसे भी 'मीर' ही की ज़बानी सुन लीजिये—

अरसा था मुझ पे तंग उठा हो के नीम जाँ,
पूछा न मुझको यक लबे जाँ से किन्हूँने याँ,
कम पाई पर भी सैर किया मैंने सब जहाँ,
आशुफ़्त ख़ातिरी ने फिराया कहाँ-कहाँ,
बरसों का राज़ मुझसे हुआ आख़िर आशकार!
परदाख़्त मेरी हो न सकी इक अमीर से,
उक़दा खुला न दिल का दुआए फ़क़ीर से,
फ़ितने हमेशा आते रहे सर पे तीर से,

हरचन्द इल्तजा की सग़ीरो कबीर से,
लेकिन हुआ न दूर मेरे दिल का इज़्तरार।

इन अशआर से 'मीर' की समाजिक चेतना ही नहीं ज़ाहिर होती बल्कि 'मीर' के दिल में जो दर्द मन्दी थी, उनकी आवाज़ में जो घुलावट थी और उनके एहसास में जो गहराई थी उसका भी इज़्हार होता है। यूँ समझिये कि 'मीर' की पूरी शख़्सियत इन अशआर में झलक पड़ी है और इसीलिये इन अशआर को न तो उस वक़्त तक अच्छी तरह समझा जा सकता है, न उसका पूरा मज़ा लिया जा सकता है, जब तक हम उनकी शख़्सियत को न जान लें।

हमको शायर न कहो 'मीर' की साहब हमने—
दर्दो-ग़म कितने किये जमा तो दीवान किया!

'मीर' की शख़्सियत जानने का सबसे अच्छा साधन उनकी यही आप बीती है जिसमें वे सारे दुख दर्द समोये मिलते हैं जिनका नाम उनकी शायरी है।

—अजमल अजमली

अपनी बात

'मीर' उर्दू के बहुत बड़े शायर तो थे ही एक बड़े इन्सान भी थे। उनकी शायरी का बड़प्पन उनके दीवान से ज़ाहिर होता है और उनकी इन्साकी अज़मत उनकी आप बीती से। मुझे नहीं मालूम 'मीर' से पहले किसी और ज़बान के किसी कलाकार ने अपनी आप बीती लिखी थी या नहीं, जहाँ तक उर्दू का सवाल है 'मीर' से पहले ऐसी कोई किताब नज़र नहीं आती।

'मीर' ने यह आप बीती उस ज़माने में लिखी थी जब हमारे मुल्क में फ़ारसी, दरबारी और सरकारी ज़बान थी। उस ज़माने के सब ही पढ़े लिखे लोग फ़ारसी ही में लिखते पढ़ते थे। यही वजह थी कि 'मीर' ने भी, जो ज़माने के बहुत बड़े उर्दू के शायर थे, अपनी आप बीती के लिये फ़ारसी ही को चुना।

फ़ारसी उर्दू में एक क़ायदा है कि हर अक्षर के लिये कुछ संख्या निश्चित होती है जैसे अलिफ़ के एक, बे के दो, जीम के तीन और दाल के चार। इन अक्षरों की संख्या जोड़कर उस शब्द की संख्या निकाली जाती है ज़िसमें ये अक्षर होते हैं। इस क़ायदे को

तारीख़ निकालना कहा जाता है। 'मीर' ने अपनी आप बीती का नाम भी इसी क़ाएदे से निकाला है। इस किताब का फ़ारसी नाम "ज़िक्रे मीर" है जिसके अदद ११७० होते हैं। मीर ने इसमें २७ मिला देने के लिये कहा है। इस तरह यह किताब ११९७ हिजरी में या १७८३ ईसवी में लिखी गई।

उस ज़माने में प्रेस तो थे नहीं कि किताबें छाप सकतीं। होता यह था कि लोग ज़रूरी और अपनी पसन्द की किताबें नक़ल करा लिया करते थे। चुनानचे उसी ज़माने में 'ज़िक्रे मीर' की भी बहुत सी नक़लें हुई। एक ज़माने तक यह नक़लें लोगों की आलमारियों में दबी रहीं यहाँ तक कि ख़ुद उर्दू वाले भी इसे न जान सके। सिवाय डा० इश्प्रिंगर के और किसी ने इस किताब का नाम तक नहीं लिया। इटावा के ख़ानबहादुर मौलवी बशीरुद्दीन अहमद को १९२१-२२ में एक फ़ारसी नुसख़ा हाथ लगा, उनसे लेकर मौलवी अब्दुल हक़ साहब ने एक भूमिका के साथ उसको पहली बार १९२८ में छपवाया।

उर्दू में इसका अनुवाद बहुत बाद में हुआ। निसार अहमद फ़ारूक़ी साहब ने १९५७ में इसका पहला उर्दू अनुवाद देहली से प्रकाशित किया। मेरा यह हिन्दी अनुवाद मूल फ़ारसी से है। मैंने इस अनुवाद में वह ज़ुबान लिखने की कोशिश की है जो मीर की शायरी की ज़बान है और बात कहने का वही ढंग अपनाया है जो उस ज़माने में रायज था। मीर की शायरी की ज़बान मिली-जुली ज़बान है जो देहली और उसके आस-पास बोली जाती थी। इस ज़बान की बुनियाद खड़ी बोली पर थी, हाँ उसके ढाँचे में अरबी-फ़ारसी के शब्द भी बहुत काफ़ी दाखिल हो गये थे लेकिन मीर के यहाँ अरबी-फ़ारसी के केवल वही शब्द मिलते हैं जो आसानी के साथ हिन्दुस्तानवालों की ज़बान पर चढ़ गये थे। मेरे अनुवाद में भी आपको यही मिली-जुली ज़बान मिलेगी! यह वही ज़बान है जो नज़ीर अहमद और सरशार से होती हुई प्रेमचन्द तक पहुँची और जिसे गांधी जी ने अवामी ज़बान कहा था।

महाकवि 'मीर से हिन्दी संसार अच्छी तरह परिचित है। उनकी भाषा इतनी सरल और सुबोध है कि हर कोई उनकी कविता का रस ले सकता है और उनका सन्देश हर एक के पास आसानी के साथ पहुँच सकता है। 'मीर' अपने सूफ़ियाना विचारों को बड़ी सरलता पूर्वक ऐसे कह देते हैं जैसे कोई राज़ की बात चुपके से कान में कह रहे हैं। उनके यहाँ शब्दों का माया जाल नहीं है उनके विचार भी सुलझे हुये और स्पष्ट हैं। इसलिए 'मीर' का आदर उर्दू समाज की तरह हिन्दी समाज में भी होता है। 'ज़िक्रे मीर' को हिन्दी समाज के हाथों में देना मेरे लिए मुमकिन हो सका मैं इसे अपनी ख़ुशक़िस्मती समझता हूँ। 'मीर' की यह आपबीती हमारा एक महत्वपूर्ण साहित्यिक सरमाया है। कुल तीन चार बरस पहले यह सरमाया उर्दूवालों के हाथ लगा अब यह हिन्दी पाठकों के पास पहुँच रहा है मुझे ख़ुशी है कि मैं इसका एक साधन बन सका और इस मशहूर और मक़बूल किताब को इस रूप में पेश कर सका।

और यह किताब आपके हाथों में है। इसकी अच्छाई या बुराई के बारे में कुछ कहना आपका काम है। मैंने तो इस किताब के ज़रिये अपना फ़र्ज़ अदा किया है। वह फ़र्ज़ जो मेरे दो बुज़ुर्गों की तरफ़ से आयद किया गया था। इन दो बुज़ुर्गों के नाम हैं डा० ऐजाज़ हुसैन और श्री श्रीकृष्ण दास।

डा० साहब को मैंने न कभी केवल एक उस्ताद समझा और न उन्होंने मुझे एक शार्गिद। मेरा और उनका सम्बन्ध सदा बाप-बेटे जैसा रहा है। एक-एक मंज़िल पर डा० साहब एक छतनार पेड़ की तरह मुझे अपनी छाया में लिये रहे हैं और मैंने जो कुछ सीखा या जाना है वह सब तनहा उनकी देन है।

दास साहब मेरे उन बुज़ुर्गों में हैं जिनकी मुहब्बत हमेशा मेरा अज़ीज़ सरमाया रही है। इस बुज़ुर्गी और ख़ुर्दी का सिलसिला उस ज़माने से चल रहा है जब फ़सादात के दिनों में हम सब एक साथ शान्ति

कमेटी में काम करते थे। सूफ़ियों के यहाँ दो शानें पाई जाती हैं। शाने जलाल और शाने जमाल। चूँकि दास साहब की मुहब्बत में शाने जलाल ज़्यादा है इसलिये मुझे आमतौर पर उनकी डाँट-फटकार सुननी पड़ती है। इस डाँट-फटकार में इतना रस और ख़ुलूस होता है कि मैं मुहब्बत की शाने जमाल के बहुत से नमूने इस पर क़ुर्बान कर देने को तैयार हूँ।

मुझे ख़ुशी इस बात की है कि मैंने इन बुज़ुर्गों की ओर से आयद किया हुआ यह फ़र्ज़ पूरा कर दिया। इस ख़ुशी के मौक़े पर अगर मैं उन लोगों को भुला दूँ जिन लोगों ने इस काम की तक्मील में मेरा हाथ बटाया तो यह मेरी बेहयाई होगी। इसलिये मैं अपने अज़ीज़ दोस्त और बहुत प्यारे सईद सुहर्वर्दी, भाभी शहीदा, अमातुर रज़ा, नसीमुद्दीन सिद्दीक़ी अक्मल अजमली और ताजबानो ख़ान का बहुत-बहुत आभारी हूँ। यह हक़ीक़त है कि अगर इन सब की मदद न होती तो मैं यह काम पूरा न कर पाता। मैं एक बार फिर इन लोगों को धन्यवाद देता हूँ।

दायरा शाह अजमल
इलाहाबाद
२५ सितम्बर, १९६१

—अजमल अजमली

ज़िक्रे 'मीर'

यह किताब

ख़ुदा

बहुत बहुत तारीफ़ उस ख़ुदा की जिसकी बेमिसाली एक दुनिया जानती है। और अनगिनत तारीफ़ उस कारीगर की जिसने नज़्म और नसर की लड़ी में मानी के मोतियों को पिरो दिया है। वह ज़ुबानों का इतना बड़ा माहिर है कि बात करने के हज़ारहा ढंग ज़ुबान को सिखा दिये हैं। ऐसा उस्ताद है कि हर आदमी को जिसमें बोलने की ताक़त नहीं, ज़ुबान देता है। ऐसा पैदा करने वाला है कि सारी दुनिया को पैदा करता है। ऐसा कारीगर है कि मिट्टी को आदमी बना देता है। ऐसा पालनहार है कि अगर उसका हाथ सर पर न हो तो हमारा ज़िन्दा रहना मुहाल हो जाय। ऐसा कलाकार है कि उसकी नक़ल करना किसी के बस की बात नहीं। वह ऐसा जानने वाला है कि दुनिया में कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसे वह न जानता हो। क़ुरान में लिखा है—

"इन्अल्लाहा अला कुल्ले शैइन मुहीत !"

यानी ख़ुदा सारी चीज़ों पर छाया हुआ है। वह ऐसा हकीम है कि तमाम भेदों को जानता है। वह क़दीम है और हक़ीक़त सिर्फ़ वही है। वह रोज़ी देने वाला है और सबको रोज़ी देता है। वह मालिक है और सबको ज़िन्दगी देता है। वह बख़्शने वाला है, बुरों की तोबा क़ुबूल करता है। वह मेहरबान है मेहरबानी करता है और बुराइयों को छुपाता है। सूरज उसकी रोशनी का एक ज़र्रा है और चाँद उसके नूर का एक

क़तरा है। कोई भी चीज़ उसके नूर से ख़ाली नहीं। वह ज़मीन और आसमानों को जगमगाता है।

चूँकि वह सर झुकाने को पसंद करता है इसलिये जो भी उसके आगे सर झुकाता है उसे निराश नहीं करता। वह पैदा करने वाला है और सब कुछ उसी ने पैदा किया है। वह देखने वाला है और सारी ढँकी छुपी बातें देखता है। अगरचे आसमान मुझे सता रहा है, लेकिन आशा है कि ख़ुदा मुझे ज़लील न होने देगा। कौन सी ज़ुबान है जो उसका नाम नहीं जपती और कौन सी जान है जो उसकी तारीफ़ में गीत नहीं गाती।

वह ख़बर रखने वाला है और हर आदमी के दुख-सुख की ख़बर रखता है। उसकी रंगारंगी देखने के लिये आँख चाहिये। वह बेमिसाल है और बेमिसाली उसकी ख़ुसूसियत है। वह एक है और एक होना उसकी ख़ासियत है। वह ऐसा बलन्द है कि फ़रिश्ते भी उस तक नहीं पहुँच पाते। लेकिन ऐसा सुनने वाला है कि गये से गये आदमी की भी आवाज़ सुनता है।

हमारे क़लम में यह ताक़त कहाँ कि वह जो कुछ है उसे अलग-अलग लिख सकें। अगर कोई उसकी तारीफ़ कर सकता है तो वह ख़ुद है।

रसूल

बहुत-बहुत दुरूद उस बोलने वाले पर जिसने बोलने का मैदान जीत लिया है। और अनगिनत सलाम उस पहुँचने वाले पर जो पहुँचा तो ख़ुदा तक मगर जिसे कोई घमण्ड नहीं हुआ। वह बादशाह है जो सर से पैर तक शान व शौक़त वाला है। वह चमकता हुआ चाँद है जो बुराइयों का अंधेरा मिटाने वाला है। वह रास्ता दिखाने वाला है जिसकी रहनुमाई बिना कोई मुश्किल आसान नहीं होती। वह ऐसा रहनुमा

है. जिसके दिखाये बिना कोई रास्ता नहीं सूझता। वह ऐसा हुक्म देने वाला है जिसका हुक्म हम जानो-दिल से मानते हैं। वह ऐसा हाथ थामने वाला है कि अगर हो सके तो हम उसकी पैरवी करते हैं। वह ऐसा महबूब है कि उसके पाँव तले की मिट्टी जानों से ज़्यादा क़ीमती है। वह ऐसी बहार है कि उसके हरे झंडे तले एक दुनिया चल रही है। ऐसा मदद करने वाला है कि क़यामत में उसी की मदद का सहारा है। नहीं, नहीं बल्कि सारी दुनिया का कामधाम उसी के सहारे पर चल रहा है।

ख़ुदा की रहमत और सलाम हो उस पर, उसकी पाक साफ़ औलाद पर कि वह उनमें से हर एक इमान वाले का इमाम और गुनाहगारों को बख़्शवाने वाला है।

और यह किताब !

बाद तारीफ़ करने के उस ख़ुदा की जो तमाम दुनिया को पैदा करने वाला है और बाद अनगिनत सलाम भेजने के मुहम्मद मुस्तफ़ा की राह पर यह फ़क़ीर मीर मुहम्मद तक़ी जो 'मीर' के नाम से जाना जाता है कहता है कि मैं इन दिनों बेकार था और सबसे अलग-थलग एक कोने में पड़ा हुआ था। इन्हीं दिनों यह आप बीती जिसमें जग बीती और क़िस्से कहानियाँ भी आ गई हैं, लिख डाली और यह किताब जिसका नाम 'ज़िक्रे मीर' है ख़त्म की।

दोस्तों से उम्मीद है कि अगर कोई ग़लती पायें तो नज़र चुरा लें और ठीक कर दें।

—मीर मुहम्मद तक़ी 'मीर'

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों,
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलता है!

भारत आगमन

मेरे पूर्वज समय की ऐसी कठिनाइयों से तङ्ग आकर जिनमें प्रातः काल भी संध्या की भाँति मलीन होता है, अपने सारे परिवार के साथ हेजाज़ से निकल खड़े हुये और दकन पहुँचे। रास्ते में उन्हें ऐसी-ऐसी कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं कि जिनका उठाना सहल नहीं है और ऐसे-ऐसे दुखों का सामना करना पड़ा जिनका सामना करना हर आदमी के बस की बात नहीं। दकन से वे गुजरात के नगर अहमदाबाद पहुँचे। उनमें से कुछ वहीं के हो रहे और कुछ लोगों ने आगे बढ़ने और अपनी खोज जारी रखने का साहस किया। इसलिये मेरे पितामह ने राजधानी अकबराबाद को अपना घर बना लिया। जलवायु के बदल जाने के कारण यहीं वह बीमार पड़े और इस संसार से सिधार गये।

उनका एक बेटा बचा। यही मेरे दादा थे। वह पिता की मृत्यु के बाद काम की खोज में उठ खड़े हुए। बहुत दौड़ धूप के बाद उन्हें अकबराबाद की फ़ौजदारी में नौकरी मिल गई। बाक़ी ज़िन्दगी भली-भांति गुज़ारी। पचास वर्ष के थे कि बीमार पड़े। कुछ समय तक इलाज़ होता रही और अभी भलीभांति ठीक भी नहीं हो पाये थे कि ग्वालियर की यात्रा की। मार्ग की उन कठिनाइयों के कारण जो निर्बलता की दशा में विघ्न बन जाती है, वहीं बीमार पड़ गये और वहीं उनका देहान्त हो गया। उनके दो बेटे थे। बड़े बेटे का दिमाग़ कुछ ख़राब था और जवानी ही में वह मर गया और इस प्रकार उसकी कहानी सदैव के लिए ख़त्म हो गई।

उनके छोटे बेटे मेरे पिता थे। आप सांसारिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए, जिसके बिना वास्तविकता तक, सत्य तक, पहुँचना कठिन है, वहाँ के एक बड़े भारी विद्वान शाह कलीमउल्ला शाह अकबराबादी की सेवा में उपस्थित हुये। दिन रात के परिश्रम ने उन्हें तुरन्त वास्तविकता का ज्ञान करा दिया। इन विद्वान की रहनुमाई में संसार छोड़ देने और ख़ुदा की याद में दुख और पीड़ा झेलने के कारण वह बहुत बड़े भक्त बन गये।

मिटाया ख़ुद को तो हाथ आई दिल की आबादी !

वह एक भले और प्रेमी दिल वाले युवक थे। हृदय में प्रेम की गर्मी थी। अलीमुत्तक़ी के नाम से वह प्रसिद्ध हुये। मेरे पिता दिन रात ख़ुदा की भक्ति करते रहते। कभी जब कुछ होश आता तो मुझसे कहते, "बेटे! प्रेम कर क्योंकि यह संसार प्रेम ही के आधार पर स्थित है। यदि प्रेम न होता तो यह संसार न होता। बिना प्रेम के जीवन नीरस जान पड़ता है। हृदय को प्रेम का मतवाला बना देना ही उचित है। प्रेम बनाता भी है और जलाता भी है। इस संसार में जो कुछ है वह प्रेम का ज़हूर है। आग प्रेम की जलन है। जल प्रेम की गति है। मिट्टी प्रेम का ठहराव है और वायु प्रेम की बेकली है। मौत प्रेम की मस्ती है और जीवन होश! रात प्रेम की नींद है और दिन प्रेम का नींद से जागना। मुसलमान प्रेम की सुन्दरता है। और काफ़िर प्रेम का नतीजा। भलाई प्रेम से क़रीब होना है और पाप प्रेम से दूर होना है। स्वर्ग प्रेम की चाह है और नरक उसका रस। भक्ति ख़ुदा को पहचानना है, प्रेम सत्यता का ख़ुलूस। ख़ुदा को पाने की लगन वास्तविकता की चाह में स्वयं को भुला देना और ख़ुदा से फिर एक लगाव अनुभव करना है। इन सारी वस्तुओं से प्रेम का दर्जा ऊँचा है। यहाँ तक कि कुछ लोगों के निकट आकाश का चक्कर भी इसलिए है कि वह अपने प्रियतम को न पा सका!"

बग़ैर इश्क़ न हम औ' न ज़िन्दगी होती।

वालिद साहब दिन में मतवाले रहते। रात भर जाग कर ख़ुदा की इबादत करते। ज़्यादातर उनका सिर सजदे में रहता। सदैव प्रेम के नशे में खोये रहते और सदैव उनका दामन पवित्र और साफ़ रहता। उनका सुन्दर मुख सदैव सवेरे उठने वालों की सभा में जगमगाया करता। वह एक सूर्य थे। परन्तु सदैव अपनी छाया से दूर रहते। जब भी होश आता मुझसे कहते, "मेरी जान, यह संसार एक कोलाहल से अधिक कुछ नहीं है। सदैव इससे दूर रहना चाहिए और कभी इसकी धूल अपने दामन तक नहीं आने देना चाहिए। ख़ुदा के प्रेम को अपना पेशा बना ले। आज वक़्त है। अपना ख़्याल कर ले। जो भी बुद्धिमान् है वह जानता है कि संसार का होकर रह जाना बहुत सरल है। ज़िन्दगी एक वहम है। इस वहम को जड़ बना लेना, पानी को रस्सी से बाँधने के भांति है। आशाओं के अनगिनत बन्धनों में उलझना चाँद को गज़ से नापना है। इस संसार में तू एक राहगीर की भांति है। बेख़बर न रह। इस सफ़र में ऐसे सामान की चिन्ता कर जो तेरे काम आवे। उस ज़ात की ओर ध्यान लगा संसार को जिसका आईना कहा जाता है। अपने होश और हवास को उस ज़ात के हवाले कर दे जिसे अपनी ज़ात में खोजा जाता है। अगरचे तेरा लक्ष्य तेरे पास है परन्तु खोज ज़रूरी है। अगरचे जो कुछ है वह वही है, परन्तु यह कहना बेअदबी है। ख़ुदा और संसार का लगाव, आत्मा और शरीर के लगाव जैसा है। बिना इसके तेरा प्रगट होना बेवजूद है। और, बिना तेरे इसका वजूद प्रगट नहीं हो सकता। संसार के प्रगट होने से पहिले सिर्फ़ ख़ुदा की ज़ात थी। और, प्रगट होने के बाद भी ख़ुदा की ज़ात ही संसार है!

इस कहानी में ये कठिनाई कि है हर ओर वह!
हाँ, मगर उसकी तरफ़ कैसे इशारा कीजिये?

बाप की नसीहतें

वह एक फ़क़ीर थे और फ़क़ीरों से प्रेम रखते थे। उनका दिल टूटा हुआ था। और उनको ऐसे लोगों से ख़ास तौर से लगाव था जिनके दिल टूटे हुये हों। वह विचित्र तरह के नियाज़मन्द थे! अपने देश में स्वतन्त्र प्रवृत्ति वाले, बहुत पहुँचे हुए फ़क़ीर थे। जिस तरह पानी हर रंग में मिला रहता है उसी भांति वह हर रंग में शामिल थे। कभी-कभी मुझे लिपटा लेते और मेरे सुते हुए चेहरे की ओर देखकर कहते "ऐ अज़ीज़! यह कौन सी आग है जो तेरे दिल में छिपी हुई है? और, यह कौन सी जलन है जो तेरी जान से लिपटी हुई है?" मैं हँस देता, वह रोने लगते। जब तक जीवित रहे मैंने उनकी क़द्र न की। वह ऐसे इन्सान थे जो अपने हाल में खोये रहे और किसी के कांधों पर बोझ नहीं बने। एक दिन अशराक़ की नमाज़ के बाद मेरी ओर ध्यान दिया और, मुझे खेल कूद में खोया हुआ पाया। बोले—"ऐ बेटे, समय बदलने वाली वस्तु है! अपनी तबीयत से ग़ाफ़िल न हो। इस रास्ते में ऊँचा नीचा बहुत है। देख देख कर चल—

तेरे क़दम के निशाँ ज़िन्दगी के आईने!
क़दम संभाल कर इस राहे ज़िन्दगी से गुज़र!

"यह कौन सा खेल है जो तू खेल रहा है? और, यह कैसी गुमराही है जिसे तूने अपने लिये ठीक समझ लिया है? उस ज़ात में खो जा जिसकी मतवाली चाल का आसमान भी शैदाई है। उस हस्ती के लिये चल जिस पर हर आन, जान और दिल निछावर होते हैं। एक ऐसे फूल का बुलबुल बन जो सदा बहार है। ऐसी सादगी अपना ले जिसमें रंगीनियाँ भरी हुई हैं। उठ इस मोहलत को ग़नीमत समझ और अपने को समझने की कोशिश कर।"

उनकी सूरत से बुज़ुंगी और पाकदिली ज़ाहिर होती। वह हक़ी-

क़त की तसवीर थे और वह इस पूरी दुनिया में अकेले इन्सान थे जिनको अपने ऊपर पूरा क़ाबू था। वह ऐसे परहेज़गार थे जिनके हाथ और पैर पर भी किसी अजनबी की नज़र नहीं पड़ी थी। अगर तुम उनको देखते तो यही कहते कि शायद फ़रिश्ते और वह एक ही गोद के पाले हुये हैं। कम बुज़ुर्ग ऐसे ठोस और धर्म के पाबन्द नज़र आयेंगे। वह अच्छे अख़लाक़ और अच्छी तबीयत वाले इन्सान थे। उनकी तबीयत मुश्किलों को पसन्द करती। उनकी रूह दर्दमन्द थी। वह अपने हाल में खोये रहते और ज़माने के हाल पर रोते रहते।

वालिद का लाहौर जाना

एक दिन परेशान थक कर आये। बूढ़ी मामा बैठी थी। उससे कहा, "आज मैं बहुत भूखा हूँ। भूख की वजह से सब्र की ताक़त नहीं रही है। अगर रोटी का टुकड़ा मिल सके तो दोबारा ताक़त पैदा हो सके।" उसने जवाब दिया, "घर में फूटी कौड़ी भी नहीं!" उन्होंने फिर भूख की शिकायत की। मामा उठ खड़ी हुई और बाज़ार की ओर रवाना हुई ताकि आटा और घी वग़ैरह लाकर रोटी पका दे। अब भूख की तकलीफ़ बढ़ गई थी। उन्होंने फिर कहा। मामा ख़फ़ा हो गई और बोली, "हम लोग फ़क़ीर हैं! यहाँ नाज़ की कोई जगह नहीं है।" वालिद बोले, "अच्छा तू इत्मीनान से रोटी पका। मैं एक फ़क़ीर से मिलने लाहौर जा रहा हूँ।" यह कहकर वह रूमाल जो रात-रात भर रोने की वजह से बादल का टुकड़ा बन गया था, कन्धे पर डाला और बाहर निकल गये।

जब मामा ने यह देखा तो अपनी बात पर शर्मिन्दा होकर रोती हुई दौड़ी और दामन पकड़ लिया। लेकिन इसका कोई असर न हुआ। आख़िर पानी आईने पर डालकर बैठ रही। जहाँ वालिद जाते, ख़ुदा के फ़ज़ल से उनके खाने-पीने का इन्तज़ाम हो जाता। कुछ दिनों बाद लाहौर पहुँचे और उस मक्कार फ़क़ीर को देखा। वह रावी के किनारे

एक जगह बैठा रहता और लोगों का जमघट लगा रहता। वह ख़फ़शाँ नमूद के नाम से मशहूर था। दरी ज़बान के कुछ शब्द रट लिये थे। और इसीलिये कुछ ऐसे बेसमझ लोग जो नहीं जानते थे उसके सामने सर झुकाते। जब वालिद से मिला तो कहने लगा कि, "मैं मुहम्मद साहब के दीन की ताईद करता हूँ। जो लोग मेरी हक़ीक़त से वाक़िफ़ नहीं वह मुझको बहकाने वाला समझते हैं।"

मेरे वालिद को गुस्सा आ गया। वह बोले, "ऐ ज़लील, हमारे पैग़म्बर का धर्म तुझ जैसे की ताईद का मोहताज नहीं। होश की बात कर। यहाँ तलवार मौजूद है। कहीं ऐसा न हो कि तू क़त्ल हो जाय!" आख़िर पहली ही मुलाक़ात में मायूस होकर गुस्से के साथ उठ आये और एक फ़क़ीर की कुटी में रात गुज़ारी।

जब सुबह हुई तो वह काले कम्बल वाला पाजी फ़क़ीर माफ़ी माँगने आया। मेरे वालिद ने जवाब दिया, "अब इससे कोई फ़ायदा नहीं। कल मैंने साफ़ बात की थी। आज और ज़्यादा खुलकर कहूँगा। जब बात ज़ाहिर हो गई तो क्या रहा? और सोचने समझने की कोशिश कर। ऐसा न हो कि सबकी नज़र में ज़लील हो जाय।"

वह अपने किये पर बहुत शर्मिन्दा हुआ। चूँकि यह हुज्जत बेमज़ा हो गई थी, इसलिये ख़त्म कर दी।

देहली में आना

यकायक मेरे वालिद ख़ुदा पर भरोसा किये, लाहौर से चल पड़े और दस बारह दिन सफ़र की सख़्तियाँ झेलते शाहजहाँबाद से देहली पहुँचे। यहाँ शेख़ अब्दुल अज़ीज़ 'इज़्ज़त' के बेटे क़मरउद्दीन खाँ के यहाँ जो सूबे के दीवान और उनके और मेरे वालिद के बहुत नज़दीकी रिश्तेदार थे ठहरे। इस शहर के लोग टूट पड़े और बड़ी इज़्ज़त के साथ इस इन्सान की ख़िदमत में मशग़ूल हो गये, जिसे इश्क़ की शराब

ने बेहोश कर दिया था। जब बैठते थे तो दुनिया से बेख़बर हो जाते। जब उठते तो उनकी चाल से मस्ती टपकती। बातें करते तो मालूम होता नशे में हैं।

बहुत से लोग उनके मुरीद हो गये। बहुत से लोग उनकी नज़र के जादू से पैरों पर गिर पड़े। लोग उनके वज़ू का पानी बड़ी एहतियात से ले जाते और शहर के बीमारों को दे देते। जो पीता अच्छा हो जाता।

बहुत रोने की वजह से उनके आँसुओं ने गला पकड़ लिया था। जो नाला उनके दिल से निकलता आकाश तक पहुँचता। हर तरफ़ यह मशहूर हो गया कि एक पहुँचे हुए बुज़ुर्ग आये हैं। बहुत से अमीरों ने मुलाक़ात की ख़्वाहिश की। उन्होंने क़ुबूल न किया और कह दिया, "मैं एक फ़क़ीर हूँ और तुम अमीर। मेरे और तुम्हारे दर्मियान मुलाक़ात कैसे हो?"

अमीरों के अमीर सहसमाउद्दौला ने पुराने ताल्लुक़ात की वजह से यह दरख़्वास्त की कि "मुझे मुलाक़ात से महरूम नहीं रखना चाहिए। अगर मेहरबानी फ़रमायें तो यह गुनहगार भी पाक लोगों की महफ़िल में बैठ सके।"

वालिद हँसे और कहा कि "मुलाक़ात के लिए तबीयत की मुनासबत ज़रूरी है। उम्मीद है मुझे माफ़ कर देंगे और मुझे मेरे हाल पर छोड़ देंगे।"

जब लोगों के जमघट से उकता गये तो आधी रात को उठे और तहज्जुद की नमाज़ के बाद शहर से बाहर निकल आये। लोगों ने उनको बहुत खोजा मगर उनके क़रीब तक न पहुँचे। वे उनके पैरों का निशान भी न पा सके।

दो तीन दिन बाद वह बयाना पहुँचे जो आगरे के क़रीब एक पुराना क़स्बा और शरीफ़ों की पुरानी आबादी है। ग़रीबों की तरह उस

क़स्बे में पहुँचे और बेकसों की तरह एक मस्जिद के दरवाज़े पर बैठ गये।

नज़रों का जादू

वहाँ एक सैयदज़ादा दिखाई दिया जिसके गाल लाले की तरह थे और जो बहुत ख़ूबसूरत नौजवान था। वालिद ने उसे देखा और दिल की क़ूवत से उसे अपनी ओर खींचा। उन ख़ूबसूरत जवान के हाल में तबदीली हुई। दीवाने की तरह बेहोश हो गया और दीवानगी के जोश में सिर वालिद के पैरों पर रख दिया। लोगों ने जान लिया कि नौजवान की यह दशा फ़क़ीर की जादू भरी नज़रों के कारण है। वालिद से दरख़्वास्त की कि इसके हाल पर दया कीजिये। वालिद ने थोड़ा पानी मँगाया और फूँक कर उस जवान को पिला दिया। जैसे ही पानी गले से उतरा उसे होश आ गया। उसने होश आते ही बड़े अदब के साथ बैठकर वालिद से दरख़्वास्त की कि, "अगर कुछ दिनों मेरे मेहमान रहें तो बड़ी मेहरबानी होगी। नहीं तो आप जिस आलम में हैं वहाँ नाज़ की कोई जगह नहीं क्योंकि वहाँ बेनियाज़ी ही सब कुछ है!"

वालिद ने फ़रमाया, "दोस्ती में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन मैं सफ़र पर तैयार बैठा हूँ और कल मुझे रवाना होना है।"

जो लोग वहाँ पर थे उन्होंने कहा, "हम आपके फ़रमाबरदार हैं। इसलिए कुछ कहना अदब के खिलाफ़ है। लेकिन इतना ज़रूर कहेंगे कि अगर इस लड़के के घर पर तशरीफ़ ले जायँ और कुछ खाना खायँ तो बेहतर होगा।"

चूँकि वहाँ के लोगों को तकलीफ़ देना नहीं चाहते थे इसलिए वालिद ने फ़रमाया, "मुझको मंज़ूर है। लेकिन मैं कभी हँसता हूँ, कभी रोता हूँ। इस सिलसिले में किसी को कोई एतराज़ नहीं होना चाहिए।"

लोगों ने कहा, "हमारी क्या मजाल है जो ऐसा करें ? अगर कोई बात आप के मिज़ाज के ख़िलाफ़ हो तो इस मेहरबानी को ज़ुल्म व सितम में बदल कर चले आइएगा।" ग़रज़ कि वह लोग वालिद को उस लड़के के घर ले गये और वहाँ खाना खाया। इत्तिफ़ाक़ से उसी रात उस जवान की शादी थी। कुछ रात गये शहर के कुछ और लोगों के साथ हाज़िर हुआ और दर्ख़्वास्त की कि, "अगर आप भी तशरीफ़ ले चलें और महफ़िले-शादी की रौनक़ बढ़ायें तो मेरी इज़्ज़त-अफ़ज़ाई होगी।" वालिद ने जवाब दिया, "ख़ुदा तुझे मुबारक करे ! लेकिन अफ़सोस शादी खुदा-परस्ती की राह में रोड़ा है !"

उसके बाद वालिद ने उससे शादी की बुराई इस तरह बयान की—"दामाद का लफ़्ज़ दो शब्दों से मिल कर बना है, दाम यानी जाल और आद पानी ! ईरान के लोग इससे आबाद दुनिया और उससे ख़ुशियाँ मुराद लेते हैं। मैं एक आज़ाद आदमी हूँ जो बिजली की तरह इस फन्दे से निकल चुका हूँ। मुझे शादी ब्याह से क्या लगाव ? वापस जा के आदमी इस सिलसिले में फँस जाने पर मजबूर है। मैं भी जवानी की इब्तदा में ऐश की शराब में मस्त रह चुका हूँ। आख़िर सिवाय ख़ुमार के, जो तकलीफ़ों से भरा हुआ है और कुछ हासिल न हुआ। जब मुझे ख़ुदा ताला ने इस गिरफ़्तारी से छुटकारा दिलाया, मैंने अपने को मज़बूत बनाया और चिराग़ की तरह एक ही जगह पर जलता रहा। अब मैं जली हुई राख से ज़्यादा कुछ नहीं हूँ। अब वह दिल कहाँ कि लालच करूँ ? अब वह दिमाग़ कहाँ कि तमाशा देखने चलूँ ? लालच के इन चिराग़ों से तेल की बू आती है। तू जाने कैसा हिरन है कि भागता नहीं ! अगर तेरे पास समझ है तो इस जुमले की हक़ीक़त तक पहुँच कि 'अल्लाह बस, बाक़ी हवस !'

ग़रज़ वह नौजवान बीबी के घर रवाना हुआ और मेरे वालिद शहर से बाहर निकले। डेढ़ दिन बाद अकबराबाद पहुँचे और सुकून के साथ अपने घर में रहने लगे।

जवान का घर से निकल खड़ा होना

जब इस फूल जैसे गाल और सोहनी चाल वाले नौजवान को यह ख़बर मिली कि फ़क़ीर चला गया, तो उसने अपनी बीबी को अपने घर पर रखा और बग़ैर खाये पिये उसी वक़्त आँसू बहाता, परेशान हाल वालिद की तलाश में जंगल की ओर निकल खड़ा हुआ। रास्ते में जो भी मिलता उससे फ़क़ीर का हाल पूछता। कभी इधर दौड़ता, कभी उधर दौड़ता। उसे कोई ऐसा राहबर न मिला जो उसे वालिद का पता बताता।

आख़िर उस जवान ने एक आह खींची और बोला, "ऐ खिज्र! मैं तुझे ढूँढ़ने के लिए हर तरफ़ भटक रहा हूँ। किसी ओर से सामने आ जा। अगर तू इस वीराने में दिखाई दे जाय तो मेरे हाथ एक ख़ज़ाना आ जायेगा। मेरा वह जेब जिसमें मैं फूल जमा करता था, फट चुका है। मेरा वह सिर जो कभी नर्म तकिये पर रहता था मिट्टी पर पड़ा हुआ है। रहम कर कि मेरा पैर अब चलते-चलते थक गया है। मेहरबानी कर कि अब सिवाय आवारगी के मेरे साथ चलने वाला कोई नहीं है। यह ऐसा समय है कि तू मेरे साथ मेहरबानी से पेश आये। तू एक सूरज है। अपने ज़र्रा पर चमक। मेरा सुकून मुझसे क्यों छिन गया? और, दर-दर फिरना मेरा नसीब कैसे बन गया?

अपनी हालत पर आप हैराँ हूँ--
मुझ पर क्या गुज़री है इसे मत पूछ।

"मैं दीवाने के हाथों उड़ने वाली धूल बन गया हूँ। पर तेरा दिल मुझे भूल चुका है। अगरचे मैं अपनी नाताक़ती की वजह से तकलीफ़ उठा रहा हूँ, फिर भी तुझे पाने की उम्मीद रखता हूँ। मैं जंगल में दर-दर भटकने वालों का ग़म हूँ। पहाड़ पर पत्थर के दिल का दाग़ हूँ। मेरे वे गाल जो फूल की हँसी उड़ाते थे, सूरज की गर्मी से मुरझा गये

हैं। मेरी वे आँखें जो हिरन को शर्मिन्दा करती थीं देखने की ताक़त खो देने के क़रीब हैं। तू सूरज है और मैं साया में पड़ा हुआ हूँ। तू दौलतवाला है और मैं फ़क़ीर। जो भी ग़ुबार उठता है मैं सोचता हूँ तू आ रहा है। जब तू नज़र नहीं आता तो नाला करता हूँ। तू सब कुछ जानने वाला है; पर न जानने वालों की ओर क्यों नहीं देखता ?"

जवान ने यह बात कह कर रोना शुरू कर दिया। बेचैनी की वजह से वह कभी बैठ जाता कभी खड़ा हो जाता। इतने में एक ओर से एक बूढ़ा आदमी ज़ाहिर हुआ और बड़ी नरमी के साथ उसे यह बात बताई कि, "तू जिसे ढूँढ़ रहा है यानी अली मुत्तक़ी को, वह अकबराबाद में है। परेशान न हो और अकबराबाद चला जा।" जब नौजवान ने ये जुमले सुने तो बेक़रार दिल को सुकून मिला और अकबराबाद की तरफ़ ख़ुदा का शुक्र अदा करते हुए रवाना हुआ।

नौजवान का वालिद से मिलना

दूसरी रात मेरे वालिद का नाम पूछता वह नौजवान, आगरा पहुँचा और उनके पैरों पर गिर पड़ा। ख़ुशी के आँसू उसके चाँद से चेहरे पर मचलने लगे। नाकामी का रंज कामयाबी की ख़ुशी में बदल गया। वालिद ने उसे ऐसी नज़रों से देखा कि एक ही नज़र में उसे फ़क़ीरी की दौलत दे दी। इतना मेहरबानी का बर्ताव किया कि लिखा नहीं जा सकता। उसकी इस क़दर ख़ातिर की कि बताया नहीं जा सकता। उसका सिर अपने गोद में रख लिया और बड़ी मुहब्बत से फ़र्माया, "ऐ मीर अमान उल्लाह, तूने ज़माने के हाथों बड़ी सख़्तियाँ झेली हैं। अपने अज़ीज़ों से छूटने का ग़म न कर। मेरा ख़ानदान तेरा है। मैं और मेरे सारे ग़ुलाम तेरे हैं। अब तू अपने दिल को सुकून दे और कुछ दिनों तक अपनी हालत को सुधार ताकि तू ख़ुदा को अपनी ओर खींचने के क़ाबिल हो जा।"

यह दुनिया !

जवान को दुनिया के बारे में बताते हुये वालिद ने फ़र्माया कि यह जिस्म माँगा हुआ लिबास है। माँगे हुये लिबास को पाक-साफ़ रखना चाहिये। और, जान को जो तेरी पूँजी है, उसके हाथ में नहीं देना चाहिये।

एहतियाते जान कर यह जिस्म क्या-
ढेर है मिट्टी का औ कुछ भी नहीं!

अपने को ही न देख। अपने आपको सब कुछ न समझ और इसी पर भरोसा कर। नियाज़ पैदा कर क्योंकि नमाज़ हमेशा काम नहीं आती। दिल में इश्क़ की जलन पैदा कर क्योंकि जिस दिल में इश्क़ की जलन नहीं, वह बेकार है। अपनी ज़ात पर ग़ुरूर करना ऐब है। अपने कामों को ख़ुदा पर छोड़ दे। अपने से कमज़ोरों को ज़लील न समझ, क्योंकि यह ग़ुरूर है और ग़ुरूर करना बुरा है। कभी भी उसे न अपना। नियाज़ को अपना ले ताकि तुझे दिल पर क़ाबू हो जाय। जहाँ तक हो, ख़्वाहिशात की ज़ंजीर से बचने की कोशिश कर। अपने वजूद को इस बोझ के नीचे न दबा। दिल से तमाम दूसरे ख़्याल मिटा दे क्योंकि जब तक मकान की सफ़ाई नहीं होती वह किसी मेहमान के क़ाबिल नहीं होता। हर आदमी से, चाहे वह तुझे पसन्द हो या नापसन्द, आदमी की तरह पेश आ क्योंकि आदमी जब तक इख़लाक़ वाला नहीं होता उसे इन्सान नहीं कहा जा सकता। हर एक के साथ अच्छा बर्ताव कर। फ़क़ीरों का धर्म ही यही है। ग़रीबों की तरह ज़िन्दगी बसर कर, क्योंकि तुझे एक दिन इस दुनिया से जाना है। यह दुनिया सराय है। यहाँ ज़्यादा दिन तक ठहरने का रिवाज नहीं है। दुनियावाले मातम करने वालों जैसे हैं। उनकी तसल्ली को थोड़ी देर ठहर जाना काफ़ी है। यह जगह ख़ौफ़नाक जंगल की तरह है जहाँ क़दम-क़दम पर ख़तरे हैं। यहाँ से ऐसे सामान लेजा जो रास्ते में तेरे काम आवे, क्योंकि तुझे एकबारगी

जाना होगा। अगर तू चाहता है कि अच्छी तरह सफ़र कर तो इस अस्पताल में दवायें खा और परहेज़ी खाना खा, यानी यहाँ की गन्दगी से बचने की कोशिश कर। फ़क़ीर वह है जिसे उस चीज़ की ज़रूरत न हो, जो उसके पास न हो। यह जान ले कि इस बाग़ में सिर्फ़ एक फूल है, लेकिन वह हज़ार तरीक़ों से अपने को ज़ाहिर कर रहा है। यानी महबूब एक है। उसके जलवे बेशुमार हैं—

ज़माने की हक़ीक़त बस यही है—
बस एक माशूक़ की जलवागरी है।
एक को देख, एक को पहचान।
एक को ढूँढ़, एक ही को जान।

दुई कहाँ है तू जादूगरी से बाहर आ!
यह देख, आँखें हैं दो और निगाह एक ही है!

इस नसीहत के बाद फ़र्माया कि, "अब जा कुछ खा और सोजा क्योंकि सफ़र की थकान होगी। आराम से सोजा क्योंकि तुझको बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ी है।" यह कहकर एक गुलाम को इशारा किया कि एक नर्म तकिया इसके सरहाने रख दे और हर समय ख़िदमत में हाज़िर रहे!

नौजवान की फ़क़ीरी में शोहरत

ग़रज़ वह बड़े इत्मीनान की ज़िन्दगी गुज़ारने लगा। वालिद उसे अपना 'अज़ीज़ भाई' कहते थे। वह भी सुबह शाम उनकी ख़िदमत में हाज़िर होता और फ़क़ीरी की तालीम पाता। वालिद साहब कभी उसके साथ नर्मी का बर्ताव करना न भूलते। हर दिन फ़क़ीरी के दरवाज़े उस पर एक एक करके खुलते गये। वह थोड़ी सी मुद्दत में फ़क़ीरी में कामिल हो गया और इस क़दर कि आँख से इशारा कर दे तो अजीब-अजीब

बातें दिखाई दें, आस्तीन झाड़ दे तो मोजज़े ज़ाहिर होने लगें। जब उसके रिश्तेदारों को ख़बर हुई तो वे उससे मिलने को दौड़े आये। उसकी बीबी दिक़ के मर्ज़ में मुब्तिला हुई और कुछ दिनों बाद मर गई।

नौजवान की अजीब-अजीब बातें इतनी मशहूर हुई कि लोगों का जमघटा लगा रहने लगा। उसने तनहाई अपना ली और लोगों से मिलना छोड़ दिया। जब कई साल ऐसे ही गुज़र गये तो वालिद ने कहला भेजा कि अब अपनी फ़क़ीरी से दुनिया वालों को फ़ायदा उठाने दो। वालिद के इस हुक्म पर शाम को अपनी कुटी से बाहर आया और इस तरह जैसे फरिश्ते आ रहे हों। उसने वालिद को सलाम किया और पैरों पर गिर पड़ा और अदब से कहा, "ऐ मेरे सरदार, आप बड़े मज़बूत दिल के इन्सान हैं। आपने अच्छे-अच्छे काम किये हैं। आपने एक ऐसी दुनिया में जहाँ लालच इन्सान को बेचैन कर देती है और ख़्वाहिशों का फ़ितना उसे सरकश बना देता है। उन तमाम बुराइयों से अपने को बचाया है और अपनी सारी ख़्वाहिशों को एक-एक करके ख़त्म कर दिया है।

मेरे साथ नौजवान का बर्ताव

उस ज़माने में मेरी उम्र सात साल की थी। मैं उससे बहुत मानूस हो गया था। उसने भी मुझे गोद ले लिया था। एक लमहे के लिये अपने से अलग न करता। बड़ी मुहब्बत के साथ मेरी परवरिश करता मैं दिन रात उसके साथ रहता। मैंने क़ुरान शरीफ़ उस जवान से पढ़ा।

एक दिन वह नौजवान सैर के लिये बाज़ार गया हुआ था, वहाँ उसे किसी तेल के व्यापारी का लड़का दिखाई दिया। उसे देखते ही नौजवान फ़क़ीर का हाल खराब हो गया, उसके मज़बूत क़दम डगमगा गये, उसका होश हवाश रुख़सत हो गया और अपने पर क़ाबू खो बैठा। जब उस लड़के ने फ़क़ीर की ओर तवज्जह न की तो और भी बेचैन हुआ। उसने बड़ी ही कोशिश की कि अपने ऊपर क़ाबू पाये। लेकिन

बेचैन दिल उसके क़ाबू में नहीं आ रहा था। गुलाम के कांधे पर हाथ रखकर लड़खड़ाता चल रहा था और धीरे-धीरे कह रहा था कि, "ऐ दिल तूने जो ग़लत खेल खेला है, वह कोई नहीं खेलता। क्योंकि इसमें सिर्फ़ रुसवाई के कुछ हाथ नहीं आता। तुझे अपने ऊपर वह क़ाबू हासिल था कि शादी छोड़कर चल दिया! अब यह बेचैनी है! तूने जो काम किया है वह कोई बच्चा भी नहीं करेगा। तूने जो रास्ता अपनाया है उस पर कोई अन्धा भी चलने को राज़ी न होगा। दिल ऐसी चीज़ नहीं है कि एक बाज़ारू लड़के के हवाले कर दिया जाय। तूने एक ऐसे इन्सान से दिल लगाया है जो कभी घर से बाहर नहीं निकला। तू एक ऐसे महबूब पर आशिक़ हुआ है जिसे दिल की दुनिया का कोई तर्जुबा नहीं। बुरा हो इन रोती हुई आँखों का जो गोया इस बात का इन्तज़ार कर रहीं थीं कि वह नज़र आये और वह उससे लिपट जाये! और सत्यानाश हो इस तपते हुए दिल का जो गोया बहाना खोज रहा था कि मेरी आँख पड़े और जलवा शुरू करदे। अपनी आँख पर कहाँ तक क़ाबू रक्खूँ? और अपने दिल की कहाँ तक ख़बरगीरी करूँ? जवानी में कभी ऐसी ग़लती नहीं हुई, अब बुढ़ापे में मैं जवान बन रहा हूँ। अगर अपने को रोकने की कोशिश करता हूँ तो दिल की जलन क़यामत बन जाती है। अगर सब्र से काम लेना चाहूँ तो आँसुओं का सैलाब उमड़ आता है! समझ में नहीं आता किस तरह इस बला से छुटकारा पाऊँ? सिवाय पीर की ख़िदमत में हाज़िरी के और कोई इलाज नज़र नहीं आता। वहीं चलता हूँ और वहीं बैठता हूँ!"

इसी हालत में रोता आहें भरता शाम की नमाज़ के वक़्त गुलाम के कांधे का सहारा लिये मेरे वालिद के पास आया। लोग ताज़ीम के लिये खड़े हो गये। वालिद ने इशारा किया कि "मेरे क़रीब आ!" जब क़रीब आया तो पूछा, "ऐ भाई, तू कहाँ गया था? आज मेरे पास आने में बहुत देर की?" उसने अर्ज़ किया कि, "आज जुमा बाज़ार की सैर के लिये गया था।" वालिद ने फ़रमाया, "क्या तुझे यह ख़बर न थी?"

जानता है इश्क़ जानो दिल का सौदा हो गया !
देख कर बाज़ार में लड़कों को रुसवा हो गया !

उसके बाद हुक्म दिया कि, "अपने कमरे में चला जा और आठ दिन तक बाहर न निकल और जो वाक़या गुज़रा है उसकी ख़बर किसी को न दे। ख़ुदा मेहरबानी करने वाला है। हो सकता है कि वह उसे ले आये और तुझसे मिलाये।"

इत्तफ़ाक़ यह हुआ कि इस वाक़या को एक हफ़्ता भी नहीं हुआ था कि वह महबूब अपने घर से निकला और बेचैन दूकान पर बैठ रहा। वहाँ एक दलाल खड़ा था। उसने पूछा, "आज कुछ परेशान नज़र आ रहे हो ! आख़िर मामला क्या है ?"

उसने कहा, "जो कुछ मुझ पर गुज़री है वह मेरे बस की बात नहीं। चूँकि तू मेरा दोस्त है इसलिये बताने में कोई हर्ज नहीं है। आज छठा दिन है कि एक फ़क़ीर इस रास्ते से गुज़रा। मेरी ख़ूबसूरती पर उसकी नज़र पड़ी। थोड़ी देर खोया-खोया सा खड़ा रहा और फिर सर्द आहें भरता एक तरफ़ चला गया। अब मेरा यह हाल है कि उस फ़क़ीर की सूरत एक पल को भी मेरे सामने से नहीं हटती। उसका ख़्याल हर समय मेरे सामने रहता है। जागता हूँ तो उससे मिलने का शौक़ बेचैन किये रहता है। सोता हूँ तो उसे सपने में देखता हूँ। कुछ समझ में नहीं आता। दिल को कैसे सुकून दूँ ? किससे उसका नाम पूछूँ ? किस तरफ़ तलाश करूँ ?"

उस दलाल ने जवाब दिया, "वह एक बहुत ही मशहूर फ़क़ीर है और आज़ाद मर्द है और उसका आस्ताना जिसकी मिट्टी लगाना तबर्रुक समझते हैं शहर पनाह के बाहर ईदगाह के बाहर है। मेरे साथ चल और सुकून हासिल कर।" इस तरह कह दलाल नौजवान को मेरे वालिद के पास लाया। उन्होंने उससे कहा, "इश्क़ ने तुझसे लापरवाही का बदला लिया !" यह कहकर ग़ुलाम से कहा, "जाओ और

छोटे भाई से कहो, "तेरा महबूब तुझे तलाश कर रहा है।" जब यह ख़ुशख़बरी उस दुनिया छोड़ देने वाले फ़क़ीर तक पहुँची तो वह हाथ झटकता पैर पटख़ता अपने कमरे से बाहर निकला, और दौड़ता हुआ सबसे पहले अपने पीर के क़दमों में गिर गया और उसके बाद उस नौजवान को गले लगा लिया। मेरे वालिद इन दोनों को अकेला छोड़ कर चले गये। वे लोग बैठकर आपस में बातें करने लगे। जब महफ़िल गरम हुई तो उस फ़क़ीर ने उस लड़के से कहा, "ऐ ख़ूबसूरत नौजवान, मैं फ़क़ीर हूँ। मेरे दिल में कोई ख़्वाहिश नहीं। मैं अपने आप में खोया हुआ हूँ। तुझे नहीं मालूम लेकिन ख़ुदा जानता है कि मेरा दिल कहाँ अँटका हुआ है। मेरी ख़्वाहिशों से मेरी जान किसकी आरज़ूमन्द है। कभी अपने आप पर मग़रूर न होना। अपने रूप पर ग़ुरूर न करना। फ़क़ीर आसमान की गर्दिशों से आज़ाद होते हैं। लेकिन उनकी हालत कभी एक सी नहीं होती। हमारी हालत हर घड़ी बदलती रहती है।" उस लड़के ने जिसे बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ी थी फ़क़ीर को जवाब देते हुये कहा, "मैंने बड़ी तकलीफ़ें उठाई मगर एक ख़ज़ाना पा गया हूँ। मैं इस कुटी पर झाड़ू देना अपने लिये फ़ख़ की बात समझता हूँ। मुझे उम्मीद है आप मुझे मायूस नहीं करेंगे और मेहरबानी की नज़र नहीं फेरेंगे।"

यह लड़का हर सुबह आता और फ़क़ीर की ख़िदमत करता।

एक दिन फ़क़ीर ख़ुदा से लौ लगाये और उसकी याद में खोया हुआ बैठा था। लड़का उसी समय आ गया और फ़क़ीर ने उसे अपने क़रीब बुला कर अपने पास बिठा लिया और ऐसी नज़र से देखा जो उसके सीने में उतर गई। वह एक ही नज़र में फ़क़ीरी की बहुत सी मंज़िलें तै करके ज़माने में मशहूर हो गया। शहर के लोग उसकी इज़्ज़त करने लगे और फ़क़ीर के ख़ास मुरीद उस पर रश्क़ करने लगे। आख़िर उस पर ऐसी हालत तारी हुई कि वह फ़क़ीरी के मैदान का

पहलवान बन गया। इसीलिये कहा है कि जब फ़क़ीरों की नज़र असर करती है तो बेहैसियत मिट्टी को भी सोना बना देती है।

चचा का एक फ़क़ीर से लगाव

मेरे चचा यानी वही फ़क़ीर हफ़्ते में एक बार एक फ़क़ीर से जिस का नाम एहसान उल्ला था मिलने जाया करते थे। वह फ़क़ीर अपने दिल का बादशाह था। उसका मशहूर आस्ताना आगरा की ईदगाह के क़रीब सुफ़ेदी से पुता और रंगीन दीवारों से घिरा हुआ था। उसके आस्ताने पर एक शेर लिखा हुआ था। उसका मतलब यह था कि, "अगर तुझे सुकून की तलाश है तो आने जाने वालों को रोक दे, क्योंकि दरवाज़ा दीवार पर चाक की तरह है।" जो भी दरवाज़ा खटखटाता वह ख़ुद आता और जवाब देता, "एहसान उल्ला घर में नहीं है।" एक दिन मेरे चचा ने उससे मिलने का इरादा किया और मुझे भी अपने साथ ले गये। उसका दरवाज़ा खटखटाने पर हम लोगों को भी वही जवाब मिला। चचा ने कहा, "अगर एहसान उल्ला नहीं है तो अमान उल्ला है।" फ़क़ीर ने हँसते हुये दरवाज़ा खोल दिया। मैंने देखा मेरे सामने शेर की क़ूवत रखने वाला और सूरज की तरह जगमगाता चेहरा वाला एक नौजवान खड़ा है जिसकी सूरत से ख़ुदाई ताक़त टपक रही है। वह सर पर चादर लपेटे हुये था। कमर में पटका बांधे हुये था। उसकी लाल आँख में इतनी रोशनी थी जैसे सारे जहान की रोशनी उसकी आँखों में सिमट आई हो। मेरे चचा ने उससे हाथ मिलाया, और पीलू के पेड़ के नीचे बैठ कर एक दूसरे का अहवाल पूछने लगे। उस फ़क़ीर ने चचा से कहा कि, "ऐ मेरे अमान उल्ला, मैंने लोगों से मिलना जुलना इसलिये छोड़ दिया कि मुझे कोई ऐसा आदमी नहीं दिखाई दिया जो मिलने जुलने के क़ाबिल हो। हाँ, तुमसे मिलने को दिल बेचैन रहता है। जब तक तुम नहीं आते दिल परेशान रहता है।"

उसके बाद मेरी ओर इशारा करके पूछा, "यह किसका लड़का है ?"

चचा ने बताया, "अली मुत्तक़ी का लड़का है जिसे मैंने गोद ले लिया है !"

उस फ़क़ीर ने कहा, "अगरचा यह बच्चा अभी कमसिन है लेकिन ऐसा लगता है कि अगर इसे पालने पोसने में तवज्जो से काम लिया गया तो किसी दिन एक ही उड़ान में आसमान से आगे निकल जायेगा। इस लड़के से कह दो फ़क़ीरों से मिलने की आदत डाले क्योंकि इनकी मुलाक़ात में बड़ी बरकत है।" यह कहकर एक सूखी रोटी का टुकड़ा पानी में भिगो कर मुझे खाने को दिया। मैंने इतनी मज़ेदार चीज़ कभी नहीं खाई। आज भी उसका मज़ा याद आता है। तबीयत चाहती है कि फिर ऐसी ही कोई मज़ेदार चीज़ खाने को मिले !

फ़क़ीर की नसीहतें

थोड़ी देर की बातचीत के बाद वह फ़क़ीर हम लोगों को नसीहतें करने लगा। उसने कहा कि, "ऐ दोस्त, ख़ुदा का ज्ञान एक जंगली हिरन है। आदमी का जिस्म एक घोड़ा है। और जान उसका सवार है। अगर हिरन शिकार हो गया यानी ख़ुदा का ज्ञान हासिल हो गया तो घोड़े के मिट जाने का ग़म फ़ुज़ूल है। अलबत्ता अगर शिकार भी हाथ न आये और घोड़ा भी हाथ से निकल जाये तो ऐसी हालत होती है कि इससे ज़्यादा तकलीफ़ देने वाला अज़ाब दूसरा नहीं हो सकता। उस अज़ाब को क़ब्र का अज़ाब कहा जा सकता है।"

फिर उसने कहा, "ग़ुरूर और लालच से छुटकारा हासिल करो क्योंकि दुनियाबी ख़्वाहिशें भौंकनें वाले कुत्ते की तरह हैं। अगर तुम उसकी आवाज़ पर चले तो बला में गिरफ़्तार हो जाओगे। अगर उसके ख़िलाफ़ चले यानी दुनियाबी ख़्वाहिशों से छुटकारा पा लिया तो तुम अपने से आज़ाद हो जाओगे और यह रास्ता तुम्हें आदमीयत की तरफ़

ले जायेगा। जो बेवक़ूफ़ है वह आशाओं में उलझ कर रह जाता है, और जो अक़्लमन्द है वह इनमें नहीं उलझता है।

"आसमान शब बाज़ी का ख़ेमा है। इस पर्दे से अजीबो-ग़रीब तसवीरें अन्दर बाहर आती जाती हैं। यह आना जाना ख़ुद उनके अख़्तियार में नहीं है; बल्कि इसकी लगाम किसी और के हाथ में है जो उनको कठपुतली की तरह नचाता रहता है। दुनिया से प्यार मत करो क्योंकि दुनिया एक बेशर्म बुढ़िया है। जब तक बाप ज़िन्दा रहता है उसके साथ हमबिस्तरी करती है और जब बाप मर जाता है वह बेटे की सेज पर सो जाती है। जो लोग नेक दिल हैं वह कभी इसकी ओर मुतवज्जो नहीं होते।"

दुनिया के बारे में कहने के बाद उस फ़क़ीर ने उन मक्कार लोगों का ज़िक्र छेड़ा जो ख़ुद को फ़क़ीर ज़ाहिर करते हैं। उसने बताया कि, "ये लोग आम लोगों पर अपना रंग जमाने के लिये इस थोड़ी सी उम्र में जो पलक झपकते ही ख़त्म हो जाती है अपनी ज़ात पर मग़रूर हैं और आग, मिट्टी, पानी और हवा की इस चारदीवारी में जिसे दुनिया कहते हैं और जिससे जितना जल्द हो सके छुटकारा हासिल करना चाहिये, ढेले की तरह पड़े हुए हैं। ये लोग हक़ीक़त को नहीं जानते, लेकिन ज़ाहिर करते हैं कि बड़े होशमन्द हैं। उन्हें असल में हक़ीक़त की ख़बर नहीं। उनकी सोहबत मन में मैल पैदा करती है। इसलिये उनसे बचना चाहिये। असल में मिलने जुलने लायक़ फ़क़ीर वे हैं जो तमाम चीज़ों से इस क़दर बेपरवाह हैं कि वे किसी पेड़ के साये का बोझ भी पसन्द नहीं करते। ये वह नंगे बदन वाले फ़क़ीर हैं जिन्होंने अपनी ज़ात को ख़ुदा की ज़ात में गुम कर दिया है। ये वह लंगोट बाँधने वाले फ़क़ीर हैं जो हर समय बुरी ख़्वाहिश से लड़ते हैं। अगर मिलना है तो इन दुखी दिल फ़क़ीरों से मिलो, जो सब कुछ भूल गये हैं, जिनका सर हर वक़्त झुका रहता है, जो बहते हुये पानी की तरह साफ़ पाक हैं, जो इस जंगल के शेर हैं और अपने दिल का ख़ून पीते रहते हैं,

जो साग़र हैं मगर जोश नहीं मारते, जो सैलाब हैं लेकिन उमड़ते नहीं, जो मुहब्बत की गलियों के ख़ाकसार है, दिवानगी के जंगलों में फिरते रहते हैं, जिन्होंने ख़ुदा को पा लिया, जो आवारा हैं मगर दिल से नज़दीक है, जो महबूब के जलवों में खोये हैं, जो महबूब के दीवार तले सोये हैं। वे हक़ीक़त का राज़ जानने वाले पीरीमुरीदी करने वाले हैं। ये आवारा लोग हैं जो अपने मंज़िल को पहुँच चुके हैं। उनके साये से सूरज उभरता है। अगरचा ये ज़मीन पर रहते हैं, मगर उनकी शान आसमानों की तरह बुलन्द है। अगरचा ये तन्हाई में हैं मगर उनका नाम दूर तक मशहूर है। ये वफ़ा और मुहब्बत के सौदाई हैं, हया और शर्म के बाग़ की अछूती कली हैं। उनका तकिया सख़्त पत्थर है, उन के बग़ल में मुहब्बत का निशान है। ये पेट पर पत्थर बाँध लेते हैं, लेकिन शिकायत नहीं करते; रोटी की लालच नहीं रखते, अगर मज़ेदार खाना मिल जाये तो उसकी ओर देखते भी नहीं; गर्म रोटी सूखी रोटी की तरह खाते हैं। ये अजीब सूखे हुये चेहरे के लोग हैं कि इन को बीमार कहा जाता है। इतने ग़ैरतदार हैं कि जिस पर मरते हैं उसकी तरफ़ देखते भी नहीं। वे इतने ख़ुद्दार हैं कि जब तक महबूब के नाज़-अदा की तलवार न बिछा लें वह बैठते नहीं। उस हक़ीक़ी महबूब को हर वक़्त खोजते रहते हैं जिससे उन को लगाव है। वे ऐसे जंगजू हैं कि उन्होंने बेहतर फ़िरक़ों से सुलह कर लिया है। वे ऐसे कीमिया बनाने वाले हैं कि हज़ार बार मिट्टी से सोना बना चुके हैं। इस दुनिया के कारख़ाने पर कब्ज़ा रखने वाले फ़क़ीर ही हैं। तुझे जो हासिल करना हो उनके पास जा, जैसे ही दुआ के लिये हाथ उठाया सब मिल जायेगा। फ़क़ीरों की बात करो, उनका सहारा लो और जहाँ तक हो सके उनकी सोहबत में उठते बैठते रहो। क्योंकि हक़ीक़त के दरिया का रास्ता एक ताला है और उन लोगों की ज़बान उस की कुंजी है। दरिया के सीने पर ज़ॉनमाज़ बिछा देना और डूबने के अन्देशे से छुटकारा हासिल करना इन फ़क़ीरों का अन्दाज़ है।"

इस दरमियान शाम हो गई। वह हम लोगों से मुख़ातिब होकर बोला "मग़रिब की नमाज़ का समय आ गया। अगरचा दिल नहीं चाहता कि तुम लोगों को जाने दूँ, लेकिन सूरज के निकलने और डूबने से कुछ देर पहले मैं बैठ नहीं सकता। यह मेरी साधना का समय है। इसलिये अब जाओ और मेरा सलाम अली मुत्तक़ी तक पहुँचा दो।" यह कह कर सलाम किया और दरवाज़ा बन्द कर लिया। मेरे चचा लौट कर वालिद के पास गये और उस फ़क़ीर का सलाम पहुँचाया। वालिद अपने दोनों हाथ अपने सिर तक ले गये और फ़र्माया कि, "एह-सान उल्ला को ख़ुदा का एहसान समझना चाहिये, तुम लोग फिर जाना और मेरा भी सलाम कह देना।

चौथे दिन फिर मेरे चचा मुझे साथ लेकर उसके दरवाज़े तक पहुँचे और दरवाज़ा खटखटाया। उसने जवाब दिया कि, "वह घर में नहीं हैं।"

मेरे चचा ने कहा, "अगर वह नहीं है तो फिर तू कौन है जो मेरे दोस्त के घर में घुस आया है ?"

वह हँस दिया और दरवाज़ा खोल कर बाहर निकल आया। उस दिन बड़ी अच्छी बातें सुनने का मौक़ा मिला, और हम लोगों को बड़ा मज़ा आया। उसने कहा कि, "ऐ दोस्त, जिस दिन से मुझे इश्क़ हुआ है और मुहब्बत का नक़्श मेरे दिल में बैठा है, दुनिया की कोई चीज़ मेरी नज़र में नहीं जँचती और दिल यहाँ बिल्कुल नहीं लगता। मैं कुंआरा हूँ इसलिये मुझको कोई डर नहीं। अगर सारी दुनिया मुझसे नाराज़ हो जाय तो भी मुझे कोई परेशानी न होगी। अगर आसमान टूट पड़े तो भी मेरे दिल पर कोई असर न होगा। जब भी आँखें बन्द करता हूँ मुझे एक ऐसा चेहरा दिखाई देता है जो सौ पर्दों में रहने वाले फूल से भी ज़्यादा नाज़ुक है। यानी मेरा महबूब मुझ पर मेहरबानी करता है। जब मैं अपने ग़रीबान में सर डालता हूँ, एक ऐसे महबूब को वहाँ जलवा-गर पाता हूँ कि जिसका जलवा बिजली से भी हज़ार गुना शोख़ है,

यानी एक मिनट के लिये भी मेरे दिल से उनकी नहीं बनती। क़या-मत की चाल के चलने वाला मेरा महबूब अगर टहलने निकले तो यह दुनिया तबाह बर्बाद हो जाय। मेरा लम्बे क़द वाला महबूब अगर सर उठा दे तो क़यामत टूट पड़े। तुम भी उसके पैरों के नीचे आने वाली मिट्टी बन जाओ, क्योंकि इस तरह दूसरों के लिये ताज बन जाओगे। एक ऐसा दिल पैदा करो जिसे वह पसन्द कर सके। एक ऐसी जान के मालिक बन जाओ जो उसके साथ मिल जाय। अपना हाथ अपने से बेहतर ज़ात के हाथ में दे दो। इस तरह महबूब तक पहुँचने का रास्ता नज़दीक हो जाता है। कभी बेकार न रहो क्योंकि जब हाथ पैर सूख जाते हैं तो रास्ता दूर हो जाता है।

"ऐ प्यारे दोस्त, मौत तेरे सामने एक मुश्किल मंज़िल है। अपने दुश्मनों से ग़ाफ़िल न रह, यानी अपने आप को दुश्मनों की तरह देख क्योंकि यही दुश्मनी दोस्ती है। बदन से छुटकारा हासिल करने के बाद बदन पर मस्ती छा जाती है। महबूब उस समय आग़ोश में होता है। काफ़ी दिनों बाद वह मस्ती जो दुनिया के लिये लगाव कहा जाता है ख़त्म हो जाती है और यक ब यक महबूब से मिलने की ख़्वाहिश पैदा होती है। अपनी रूह को न समझने वाले उस शख़्स पर अफ़सोस है, जो इस दुनिया से दूर हो जाता है और उस दुनिया से उसे कोई लगाव नहीं होता। ऐसे लोगों पर अफ़सोस करो। यही वे दो हालतें हैं जिनको बुज़ुर्गों ने जन्नत और दोज़ख़ कहा है।

"मेरे दोस्त, दिल अगर दर्द सहने वाला है तो सच्चा दिल कहे जाने क़ाबिल है। ग़म अगर दिल को मिटा देने वाला है तो वाक़ई सब से अच्छा ग़म है। क्योंकि ख़ुदा ऐसे ग़म को अपनाता है, जो ख़ुशी का नहीं ग़मों का अपनाने वाला है। उसे ऐसी जान पसन्द है जो दर्द में मज़ा ले न कि दर्द से छुटकारा पाने के लिये रास्ते खोजती रहे। उस ज़ात की इबादत कर जिसे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं। अपनी ज़ात को उसके हवाले कर दे जो सब का काम बनाने वाला है। उसकी मदद

माँग, उस पर भरोसा कर, अपने ग़रीबान में सिर डाल, उस ज़ात की खोज कर। अगर रूह इबादत में डूब जाय तो उसका जवाब नहीं। अगर दिल में जलन पैदा हो जाय तो वह सोना बनाने वाला दिल हो जाय–

रास्ता मुश्किल है, मंज़िल गुम, कहाँ खोजें उसे ?
अब यही बेहतर कि उस पर आसरा कर लीजिये।

"अज़ीज़ दोस्त, वह अनोखे लिबास वाला महबूब जिस रंग का चाहे लिबास पहनता है। कभी फूल है, कभी रंग! कहीं वह लाल है और कहीं पत्थर! बहुत से फूल दिल ख़ुश करते हैं, बहुत से इश्क़ के रंग से खेलते हैं। कुछ लोग लाल को अच्छा समझते हैं और कुछ लोग पत्थर को ख़ुदा कह देते हैं! होश में रहना कि वह दुनिया उस की जलवागाह है। यहाँ ऐसी आँख की ज़रूरत है जो उसके अलावा और किसी पर न खुले। यहाँ ऐसा दिल चाहिये जो इधर उधर न भटके, चूँकि जितने भी दिल हैं वे सब इसके कब्ज़े में हैं, इसलिये चाहे दुश्मन हो या दोस्त, सब इसी से लगाव रखते हैं। सच्चाई और भटकाव दोनों ही उसके रास्ते में हैं। मस्त हों चाहे हुशियार, दोनों ही उसकी खोज में हैं। मस्जिद की मेहराब उसकी भवों की देन है। शराबख़ाना उस की आँखों में पैदा होता है। दुआ माँगने वाले इबादत करते हैं। शराब पीने वाले जाम चढ़ाते हैं। मस्जिद की मेहराब तले कमर झुका देनी चाहिये और शराबख़ाने में जाकर बेहोश हो जाना चाहिये। यानी हर तरफ़ की, हर जगह की एक तहज़ीब है, जिसका ख़याल करना चाहिये।

"प्यारे साथी, ख़ुदा की ज़ात के लिये किसी सुबूत की जरूरत नहीं है —

सुबूत ज़ाते ख़ुदाई की गुफ़्तगू करना।
चिराग़ लेके है सूरज की जुस्तजू करना।

"यह ऐसा ही है कि जैसे सूरज निकला और दिन हो गया। अगर कोई मालिक न होता तो आसमान गिर पड़ता, पहाड़ न खड़े रहते, सूरज न चमकता, बिजली न कौंधती, पानी न बहता, फ़सल न उगती, फूल न फूलते, बाग़ न सजता, फल न फलते, दरख़्त न होते। ख़ुदा को बख़्शने वाला कहते हैं। उसकी इस ख़ुसूसियत को देखकर उसकी इबादत से मुँह न मोड़ना क्योंकि वह ऐसी ज़ात है कि जब बख़्शिश पर आती है तो मिट्टी से आदमी बना देती है और जब नज़र फेर लेती है तो आदमी को मिट्टी में मिला देती है। हमारे पैग़म्बर यानी मुहम्मद साहब, जिनकी शान में यह कहा गया है कि, "हमने तुम्हारे लिये आसमान पैदा किये," रात-रात भर नमाज़ पढ़ते थे और ख़ुदा की इबादत में इतनी देर खड़े रहते थे कि उनके पाक पैर फूल जाते थे। एक आदमी ने उनकी जब यह हालत देखी तो कहा, 'ऐ ख़ुदा के पैग़म्बर, आप इतनी मुसीबतें क्यों झेलते हैं, क्योंकि आप तो वह हैं जिसने एक दुनिया को तकलीफ़ों से छुटकारा दिलाया है?' आप हँसे और फ़रमाया कि 'बन्दगी की दुनिया में और क्या करना चाहिये? तो मेरे दोस्त! ग़ुलाम मालिक का सम्बन्ध बड़ा नाज़ुक सम्बन्ध है। तू भी ग़ुलाम बन कर बन्दगी कर ताकि तू अपने मालिक से शर्मिन्दा न हो सके।"

अभी बात यहीं तक पहुँची थी कि शहर के सूबेदार का चपरासी आया और सूबेदार के जानिब से उसने अर्ज़ किया कि, "नुसरत खाँ हाज़िर होना चाहता है।" फ़क़ीर ने जवाब दिया कि, "उनको आने दो, अगरचे वह इस क़ाबिल नहीं कि फ़क़ीरों से मिल सकें; पर उनको बार-बार उसे लौटना पड़ा था। ख़ुदा जाने इस बार लौट जाने के बाद मुलाक़ात हो सके या नहीं?" नुसरत खाँ जब दरवाज़े के क़रीब पहुँचा तो दौड़ता हुआ आकर फ़क़ीर के क़दमों पर गिर पड़ा। उसके बाद पाँच अशर्फ़ियाँ भेंट की।

फ़क़ीर ने कहा, "बहुत अच्छा हुआ जो तू आया!"

उसने अर्ज़ किया, "मुझे हाज़िर होने का मौक़ा मिला और आपके पाक चेहरे का दर्शन मिला, यह मेरी ख़ुशक़िस्मती थी !"

बायज़ीद से मुलाक़ात

मेरे चचा को फ़क़ीरों से मिलने और उनसे बातें करने का बहुत शौक़ था। उन्होंने एक दिन किसी से सुना कि, "बायज़ीद नाम का एक फ़क़ीर जीलानी सराय में आया हुआ है। वहाँ एक कमरे में जो आशिक़ों के दिल की तरह हज़ार रास्ते रखता है रुका हुआ है।" यह सुनते ही उनके दिल में फ़क़ीर से मिलने का ख़्याल पैदा हुआ। उन्होंने मुझे अपने साथ लिया और फ़क़ीर से मिलने चल दिये। वहाँ हम लोग एक नौजवान से मिले। लम्बे क़द वाला दुनिया से बेपरवाह वह फ़क़ीर ऐसा मालूम होता था जैसे कोई फ़रिश्ता दुनिया में आ गया है। आदमी की जान से प्यारा, पत्थर का तकिया लगाये, ज़मीन को बिस्तर बनाये, टूटे दिल, खुले चेहरे वाला घुटी हुई रूह और तपते हुये दिल वाला था वह फ़क़ीर, ऐसा कि अगर तेज़ नज़र वाला भी उसके सामने पहुँच जाय तो वह भी उसकी तरफ नज़र न उठा सके। किसी से कुछ न माँगता और अपने हाल में ज़िन्दगी के दिन गुज़ारता। आँखें बन्द रहतीं, दिल ख़ुदा की याद में डूबा रहता। रोटी की ओर आँख उठाकर न देखता, पानी पीने की ज़रूरत न महसूस करता। हर बात की तह में जाता। तरह-तरह की मुश्किलें झेलता। उसका लिबास फ़क़ीरों का लिबास था। उसने हम लोगों से पूछा, "तुम कौन हो, कहाँ से आ रहे हो ! तुम्हारे चेहरे से पता चलता है कि दर्द की मिठास और दिल की जलन से वाक़िफ़ हो।"

"मेरा नाम अमान उल्ला है।"

यह सुनकर उसने बैठने का इशारा करते हुये कहा, "आओ, थोड़ी देर तुमसे बातें करें !"

बायज़ीद की नसीहतें

"ऐ अज़ीज़, अगर वह सर से पैर तक नाज़ में डूबा हुआ महबूब आँखों के सामने हो तो उसे हमेशा रहने वाली जन्नत समझो और अगर वह आँखों से ओझल हो जाय तो उसे दोज़ख़ जानो। और, यह बात जान लो कि ख़ुदाई राज़ ज़ाहिर नहीं हुआ करते। पता नहीं इबादत को पेशा बनाने वाले फ़क़ीरों के दिमाग़ में क्या है और उस महबूब के प्यार में खोये हुये लोग क्या कुछ जानते हैं! कुछ लोगों के दिल को ख़्वाहिशें बेमहल किये हैं। कुछ ऐसे लोग हैं जो नुक़सान उठाने को दुख झेल रहे हैं। जो हक़ीक़त को जानते हैं उनको न किसी चीज़ की आशा है और न वे किसी चीज़ से निराश हैं। जो ख़ुदा को पा चुके वे उसकी ख़ुशी के लिये अपना सब कुछ लुटा देते हैं। आशिक़ों की जान को सख़्तियाँ झेलने से लगाव है। उन्हें उन दुखों और सख़्तियों में मज़ा मिलता है। तुम भी दुख झेलने की आदत डालो ताकि आराम मिल सके, तकलीफ़ उठाओ ताकि आराम पा सको, इस दुनिया से अपना दिल हटाना अच्छा है, चाहे ख़ुदा का ज्ञान मिल सके या ना मिले। अगर न मिल सके तब भी अच्छा है। दुनिया को एक न एक दिन मिट जाना है क्योंकि उसकी बुनियाद वहम पर है। यह नीला आसमान एक दिन फट पड़ने वाला है क्योंकि उसे हवा में लटका दिया गया है। अगर तुम चाहते हो कि अपनी मंज़िल तक पहुँच सको तो किसी दिल में अपनी जगह बनाओ और तुम अपने हाथों से जितनी भी ख़िदमत कर सकते हो करो और ख़ुदा के लिये करो। अगर तुमने दरिया को जान लिया है और उसकी गहराइयों तक नहीं पहुँच पाये हो तो भी उसके किनारे पर खड़े रहो। अगर मर जाना तुम्हारे बस की बात नहीं है तो भी मर जाने को तैयार रहो। मन्दिर मस्जिद के बखेड़ों से छुटकारा पा लो, यानी जहाँ रहो ख़ुदा के बन जाओ।

"ख़ुदा तक पहुँच जाने वाले दो हिस्सों में बँटे हैं। एक वे हैं जो दीवार पर की तसवीरों की तरह बेजान हैं। ये लोग दुनिया को बनाने

वाले कारीगर की कारीगरी देखकर अचम्भे में पड़ गये हैं। उन्होंने जो कुछ देखा है, जो कुछ समझा है, समझा है (यानी वे किसी के बताने के कुछ क़ाबिल नहीं!) दूसरे वे हैं जिनके पास बादाम से भरी ज़बान है (यानी उनकी जो बात निकलती है वह गूदे से भरी होती है); यानी उनमें से हर एक का महबूब बोलती हुई ज़बान की बात समझता है। महबूब की पलकों की हालत सैकड़ों ज़बान से बताता है। इसलिये महबूब के जलवों में खोजने वाले इस इन्सान के कमालात गिने नहीं जा सकते। और इस होश खो देने वाले इन्सान की बातें बताई नहीं जा सकतीं।"

चूँकि यह पहली मुलाक़ात थी इसलिये चचा ने बायज़ीद को तकलीफ़ देना मुनासिब न समझा। वह वालिद के पास आये और उनसे यह सब बातें बताईं।

वालिद ने कहा, "हर फूल की रंगत अलग, बू भी अलग है। ऐसे लगन रखने वाले फ़क़ीर कहाँ मिलते हैं! उनसे बराबर मिलते रहा करो!"

एक और दिन असिर की नमाज़ के बाद मुझे साथ लेकर चचा बायज़ीद की मुलाक़ात को गये। उन्होंने बड़ी मेहरबानी के साथ हमारा स्वागत किया और अपने सामने बिठा लिया। चूँकि मैं कमसिन था इसलिये चचा से मेरे बारे में पूछा। चचा ने बताया, "अली मुत्तक़ी का लड़का है।"

बायज़ीद ने कहा, "फिर क्या पूछना है! इसके बाप तो बड़े बुज़ुर्ग हैं, राज़ों को जानने वाले हैं, वह एक ऐसे दरिया हैं जिससे क़ीमती मोती निकलते हैं। हम फ़क़ीर तो मुफ़लिस हैं। हमसे क्या हो सकता है?"

फिर मुझसे कहा, "ऐ लड़के, मेरी तरफ़ से सलाम के बाद कहना कि अब तक क़दम चूमने न आ सकने की वजह यह नहीं है कि मिलने की ख़्वाहिश नहीं थी। उसकी वजह यह है कि पैर टूटे हुये हैं और मेरी

क़िस्मत ख़राब है और ये दोनों यह चाहते हैं कि मैं उस वीराने से बाहर न निकल सकूँ। आप बड़े बुज़ुर्ग हैं और मैं आपके सामने एक छोटा सा फ़क़ीर ? किसी ख़ास वक़्त अगर मौक़ा मिले तो मुझ जैसे मुफ़लिस के लिये दुआ कीजियेगा।''

यह कहकर बात बदली और चचा से कहा कि, "ऐ अज़ीज़, फ़क़ीरों की बात ग़ौर से सुनो—

हम ख़ुदा की जो इबादत करते हैं वह हमारे अपने लिये है। ख़ुदा को हमारी इबादत की जरूरत नहीं है। वहाँ तो ख़ुदाई है। उसे हमारी क्या परवाह ? हमारी इबादत सिर्फ़ यही नहीं है कि अपनी इबादत का घमंड कर लें और ख़ुदा पर भरोसा करके बैठे रहें। अगर ख़ुदा हमारी इबादत क़ुबूल करे तो बड़ा एहसान है। हम तो उसके बन्दे हैं। अगर वह हमें किसी क़ाबिल न समझे तो हम इसके सिवा क्या कर सकते हैं कि हम अपने किये पर शरमिंदा हों यह जो तुझे तेरे नफ़स ने धोके में डाल रखा है कि तू भी कुछ है यह तेरी बदनसीबी है। जब तू अपने आप को जान लेगा तो तुझे मालूम होगा कि तुझे कुछ भी नहीं मिल सका है। तूने जिस महबूब से दिल लगाया है वह अपनी सुन्दरता में खोया हुआ है। तूने क्या सोच लिया है। क्या तै कर लिया है, किस ख़्याल में पड़ गया है, किससे दिल लगा लिया है। वह महबूब कभी तूफ़ान उठाता है और कभी इज़्ज़त देता है। इसका ख़्याल रख कि कभी भी किसी का दिल तुझसे न दुखे और कभी तेरे ज़ुल्म से किसी का दिल चूर न हो सके। दिल को आसमान कहा जाता है क्योंकि दिल उस चाँद (ख़ुदा) के रहने की जगह है।

नहीं दुखाता कोई दिल इसी खयाल से मैं
कि कौन जाने वहाँ तेरी अंजुमन निकले।

ऐ अज़ीज़, वह महबूब से दोस्ती रखता है यानी आशिक़ों का दोस्त है, और ज़ाहिर में उनसे बेपरवाह है। जब वह तराक़बे में होते हैं

तो वह महबूब उनके दिल में आ जाता है, और जब आँखें बन्द कर लेते हैं तो उनकी सूरत नज़र के सामने आ जाती है। जिस दरवाज़े से चाहते हैं वह आता है। जिस रंग में उसकी खोज करते हैं उसे पा लेते हैं। दुख और सुख उन आशिक़ों की हालत के साथ हैं। जब वह ख़ुश होते हैं तो दुनिया से दुख दर्द दूर हो जाता है। जब वह ग़म में डूब जाते हैं तो कली भी नहीं खिलती। लेकिन उन का चलन जग से निराला है कि महबूब उनकी गोद में है और खोज में खून बहाते हैं ख़ुदा जाने यह ख़ुदा से क्या लेना चाहते हैं? कहने को कोई ख़्वाहिश नहीं मगर हर वक़्त घुलते रहते हैं।

क्या तूने नहीं सुना कि हज़रत मूसा के ज़माने में काल पड़ा और लोग मरने लगे। लोगों ने हज़रत मूसा से कहा कि आप ख़ुदा से दरख़्वास्त करें कि पानी न बरसने से परेशान हैं और अब उनमें इतनी ताक़त नहीं रह गई है कि वह मुसीबतें झेल सकें। हज़रत मूसा तूर पर गये और यह सब बातें ख़ुदा से कहीं। उन्हें जवाब मिला कि ऐ मूसा एक घूरे पर एक फ़क़ीर बैठा हुआ है। मुझको उसकी बकवास बहुत पसन्द है जब तक वह नहीं बोलेगा हम भी पानी नहीं बरसायेंगे, यह सुनकर जब हज़रत मूसा उस ढेर पर गये तो देखा एक फ़क़ीर काला कम्बल ओढ़े पड़ा है उसका अंग इश्क़ के दरया में डूबा है। हज़रत मूसा को देखते ही बोला, "ऐ मूसा तुम यहाँ कैसे आये? क्या तुम्हारा दिल भी किसी से अटका हुआ है?" मूसा ने कहा, "पानी न बरसने के कारण काल छा गया है, किसी की दुआ का असर नहीं हो रहा है। मैंने ख़ुदा से बात की मालूम यह हुआ के वह सब जान लिये हैं कि तुमने अपनी बकबक बन्द कर दी है जब तक अपनी खाज के मुताबिक़ बक-झक न करोगे न हवा बादल लायेगी और न पानी बरसेगा। ख़ुदा के लिये थोड़ी देर को आसमान की ओर मुँह कर के बैठ रहो, कुछ बको-झको और इस बला को हमारे सिर से टालो।" उस फ़क़ीर ने मूसा से यह बात सुन कर कहा कि तुम इस धोकेबाज़ को नहीं जानते और न तुमने मेरी तरह इससे दिल लगाया

है। इसकी बातों में बड़ी गहराई होती है, ख़ुदा की पनाह मैं उसकी बातों में कहीं आने वाला हूँ। अलबत्ता तुम उसके रसूल हो अगर उसके रसूल का हुकम न मानू तो काफ़िर हो जाऊँ।

खुदा के साथ खोजाओ, नबी से होश में रहना,

ग़रज़ मूसा के कहने पर ख़ुदा के इश्क में खोये इस फ़क़ीर ने आसमान की ओर मुँह उठाया, और कहने लगा, "ऐ धोकेबाज़ और सुकून को लूटने वाले अब से पहले बादल, हवा, पानी सब तेरे क़बज़े में थे, और अब मेरे ग़ुलाम हो गये हैं। अब यह धोका देना छोड़ दे और लोगों के हाल पर रहम कर, दो तीन बार उसने बकवास की कि हवा चलने लगी और अदे-अदे बादल घिर आये और टूट-टूट कर पानी बरसने लगा। इस तरह की बात चीत होती रही कि असिर का वक़्त आगया, हम सब उठे और बायज़ीद के साथ नमाज़ पढ़ी, नमाज़ के बाद वह पूरब की तरफ़ मुँह कर के बैठ गये, और चचा से कहने लगे आज मैंने वह चीज़ खाई है जो कभी नहीं खाई थी। और कभी इतनी मज़ेदार चीज़ नहीं चखी थी। मेरे चचा कई बार मिलने के कारण बेझिझक हो गये थे, उन्होंने कहा कि बात बढ़ाने की भी एक इन्तेहा होती है फ़ाक़ा की वजह से आप का बदन सूख गया है। आपके पेट पर सब्र का पत्थर बँधा हुआ है। बूँट पानी और रोटी का आसरा नहीं है। हर रोज़ मरने के लिये तैयार हैं और किसी गिरी हुई हालत में इस हुजरे में पड़े हैं। मुफ़त में डींग न मारिये। कहाँ आप और कहाँ मज़ेदार खाना, बायज़ीद ने जवाब दिया न मैं उड़ाई डकाई मारता हूँ और न डींग मारता हूँ, जहाँ झूट का अंदेशा भी होता है वहाँ से भाग जाता हूँ। क़िस्सा यह है कि आज सुबह बड़ी भूख लगी हुई थी, और पेट बेकल किये हुए था, मज़बूर हो रहा था कि शहर जा कर किसी के आगे हाथ फ़ैलाऊँ। मैं अपनी इज़्ज़त बचाने के लिये पत्थर सिर के नीचे रख कर सो रहा। इतने में एक चूहा अपने मुँह में रोटी का टुकड़ा दबाये हुये आगया। मैं जो अशल में शेर हूँ लेकिन भूख के कारण बीमार बिल्ली दिखाई पड़ता हूँ लेटा हुआ था। उसने मुझे

देखा तो रोटी का टुकड़ा छोड़ कर भाग गया। मुझे कुछ ख़ुशी हुई और वह टुकड़ा ले लिया पानी था नहीं कि उसे धो लेता, किसी ऐसे आदमी के इन्तज़ार में बैठ गया जो मेरी मदद कर सके। थोड़ी देर बाद भिशती की आवाज़ आई, मैंने अपना टूटा कुल्हड़ उठाया और उसमें पानी भर कर रोटी का टुकड़ा भिगो लिया, जब मैंने उसे खाया तो ख़ुदा की क़सम ऐसा मज़ा आया जैसे मैं जन्नत की नेमत खा रहा हूँ।

उसके बाद चचा से कहा के मेरे दोस्त! फ़क़ीरी की बातों में बनावट नहीं होती, यह उस आसमान के थैले नहीं हैं कि सौ आबखोरे बनाता है लेकिन एक भी ठीक नहीं होता है। उनके साथ बैठकर फ़बती कसना अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारने के बराबर है। अपनी ज़बान को क़ाबू में रखना चाहिये, क्योंकि उनका ख़फ़ा होना बेअदब लोगों की मौत का सबब बन जाता है। मेरे चचा उनकी बातें सुनकर बहुत पछताये और अपनी बदतमीज़ी पर माफ़ी चाही। फ़क़ीर उनको पछताते देखकर बड़े प्यार से बोला, "ऐ अज़ीज़ मैं तुझको अपनी जान से ज़्यादा चाहता हूँ, लेकिन तेरे लिये यह डाँट ज़रूरी थी क्योंकि बेहूदा बातें करना फ़क़ीरों के लिये बहुत बुरी बात है।"

बातों बातों में रात हो गई, हम लोगों ने वापस आने की इजाज़त माँगी, उसने हमें रुख़सत किया। मैं वहाँ से लौटकर वालिद की खिदमत में गया, और बायज़ीद का सलाम उनको पहुँचा दिया, वालिद ने कहा यह उनकी मेहरबानी है अब फिर जब अपने चचा के साथ उनके पास जाना तो मेरी ओर से भी सलाम कह देना।

बायज़ीद का देहान्त

तीसरी बार जब हम उनसे मिलने गये तो उनको बीमार पाया, हमने देखा वह एक करवट झुके हुये आह-आह कर रहे थे, जब उन्होंने चचा को देखा तो एक आह भरी, और अपने सामने बुला कर फ़ारसी शायर शफ़ाई का यह शेर पढ़ा।

पीरस्तोर नदारम, बरसरे बालीं बीमारे,
मतर अहम अज़ीं पहलू बआँ पहलू बगर दां।

(मैं वह रोगी हूँ जिसका देखने वाला नहीं कोई) बस एक यह आह इस करवट से उस करवट लिटाती है। चचा ने पूछा आपकी तबियत कैसी है, जो इस तरह तड़प रहे हैं। बायज़ीद ने कहा, "ऐ पज़दी सीने में इस क़दर जलन है जैसे किसी ने सीने में आग लगा दी है। मेरी आहें इस आग को लपेटे हैं और मेरे नाले इस आग के लू के-

मैं नहीं जानता दिल जलता है मेरा कि जिगर,
धुवाँ उठता है कहीं आग लगी है शायद।

अगर मौत इस वक़्त मेरी मदद कर दे तो मेरे लिये जन्नत होगी वरना एक जहन्नुम जल रहा है जो मेरे गुनाहों का नतीजा है। अब मर जाना ही बेहतर है क्योंकि सांस लेने में तकलीफ़ होती है। न दिन को चैन मिलता है और न रात को, समझ में नहीं आता कि क्या करूँ ताकि बेकली से छुटकारा पा जाऊँ।

दिन को तो रात करता हूँ दिल की जलन के साथ,
किस दिन के आसरे पे गुज़ारूँ यह दुख की रात।

हवा चलती है तो आग और भड़कती है, पानी पीता हूँ तो तेल का काम करता है, मुझे बाग़ में ले जाओ तब भी बेकल रहूँगा, ठंडी जगह पर पहुँचा दो तब भी दिल की आग इसी तरह जलती रहेगी। काश कोई मेरा सीना चीर डाले या मुझे यहाँ से ले जाये और जीते जी मिट्टी के नीचे दबा दे।

ग़रज़ सूरज ढलने तक वह बेकल फ़क़ीर इसी तरह तड़पता रहा, कभी खड़ा हो जाता कभी बैठता, कभी गिर जाता कभी आँखें खोलकर मायूसी से इधर उधर देखता और कभी पानी से निकाली मछली की तरह तड़पने लगता। इतने में मेरी ज़बान से निकला "ज़ोहर की नमाज़

का वक़्त हो गया है यह सुनकर बड़े डूबे हुये अंदाज में सज़दा किया और "ऐ सबसे बड़े पालने वाले ख़ुदा" कहते हुये मर गया।

इश्क़ की आग ने बहुतों को जलाया लेकिन
हमने कम देखें है इस तरह से जलने वाले।

चचा ने चन्द नौकरों के साथ उनके कफ़न दफ़न का इन्तज़ाम किया, और उसी गिरे-ढाये हुजरे में उनको दफ़न कर दिया। मेरे वालिद ने जब उनकी मौत की ख़बर सुनी तो उन्हें बड़ा दुख हुआ। उन्होंने कहा ऐसे आदमी बहुत दिनों में पैदा होते हैं। दुख इसका है कि वह बहुत जल्दी मर गये। एक रात मेरे चचा ने एक सपना देखा, बायज़ीद उनके पास आये और बोले, "तुमने देखा इश्क़ ने मेरे सीने में कैसी आग जलाई और मुझे कैसे फूँका! मेरी इस जलन का इलाज मौत थी, जब मेरे महबूब ने मेरी बेकली देखी मुझे अपने रहमत के समुद्र में डाल दिया, और मुझे मेरी मांगी हुई चीज़ दे दी। मेरी बेकली दूर हो गई और मुझे आराम मिल गया। यह सपना देखकर उनका दिल उचाट हो गया। लोगों से मिलना जुलना बन्द कर दिया, कभी-कभी कहते बायज़ीद अजीब दिलजले इन्सान थे, जब तक जिन्दा रहूँगा उनके छुटने का ज़ख्म हरा रहेगा। उन्होंने मेरे वालिद से भी इस सपने का ज़िक्र किया। वालिद ने कहा इसमें अचंभे की क्या बात है, ख़ुदा बख़्शने वाला है।

सुनो तुम्हें एक क़िस्सा सुनाऊँ--

"एक बहुत मशहूर फ़क़ीर हज़रत बायज़ीद उस्बतामी के पड़ोस में एक पारसी रहता था। चालिस वर्ष से उसकी फ़क़ीर से मुलाक़ात थी। हर सुबह वह तख़्ते बजा कर पूजा करता था, हर रोज़ बायज़ीद कहते कि तख़्ते बजाने से तू जन्नत में नहीं जायगा, अगर तू जन्नत में जाना चाहता है तो तू मुसलमान हो जा! एक दिन उसने सोचा बायज़ीद पागल नहीं है जो चालिस वर्ष से मुझसे लगातार मुसलमान हो जाने को कह रहे हैं। इसमें ज़रूर कोई फ़ायदा होगा, यह सोच कर वह उनके पास आया और कहा कि तुम हर सुबह मुझसे मुसलमान हो

जाने के लिये कहते हो, क्या तुम यह भी कर सकते हो कि मुझे जन्नत में जगह दिलाने का वादा करलो। हज़रत बुस्तामी उस वक़्त बेहोश थे उन्होंने कागज़ मँगाया और उसे जन्नत की ज़मानत लिख कर दे दी"–

वह चला गया और उसी वक़्त मुसलमान हो गया। उसी हफ़्ते वह मर गया, उसके घर वालों ने उसके कहने के मुताबिक़ कागज़ का वह टुकड़ा कफ़न में चिपका कर उसे दफ़न कर दिया। जब फ़क़ीर होश में आया तो उनको एहसास हुआ, बेचैन हो गये। उनके एक मुरीद ने वजह पूछी तो बताया कि बेहोशी में एक ऐसा वादा कर लिया है जिसका पूरा करना मेरे बस में नहीं है। मुरीद ने कहा, हाँ उस दिन एक पारसी अपने बख़्शने की ज़मानत लिखा कर ले गया था, लोग कहते हैं वह मुसलमान हुआ और मर गया। यह सुनकर फ़क़ीर बेहोश हो गये, जब उनके मुँह पर पानी छिड़का गया तो होश में आये और बोले कि मुझे अपने बख़्शे जाने का विश्वास नहीं है। यह दिल कहाँ से लाऊँ कि किसी और को बख़्शवाने की हिम्मत करूँ। आख़िर गिरते पड़ते उस पारसी की क़ब्र पर गये और मुराक़बे में गये, देखा कि पारसी हाथ में वह कागज़ लिये बैठा है, उन्हें देखकर बोला, "ऐ यज़ीद तुमने जो कुछ लिखकर दिया था वह मेरे किसी काम का नहीं है, तुम्हारा परचा दिखाने से पहले ही उस बख़्शने वाले ने मुझे खुद से इतना क़रीब कर लिया कि फ़िरशते भी दंग रह गये, परेशान न हो। लो यह रहा तुम्हारा कागज़, इसे लो और चले जाओ।

तो भाई—जब ख़ुदा ऐसे लोगों को बख़्शता है तो तुम्हारे बायज़ीद तो दुनिया के अच्छे आदमियों में थे। अगर वह ख़ुदा की रहमत के समुन्दर में न डूबते तो जो कुछ उन्होंने तकलीफ़ उठाई थी वह उनके किस काम आती।

मीर मुलक़ी की फ़क़ीराना बातें

मेरे वालिद ने चचा की नसीहत करते हुये कहा, "ऐ प्यारे भाई,

जब तुम जानते हो कि वह सदाबहार फूल हज़ार रंग में अपने को ज़ाहिर करता है। यह बाग़ उसका सजाया हुआ है, यह रंग उसी के हाथों भरे हुये हैं तो आँखें देखभाल कर खोलो। इस संसार के ज़र्रे-ज़र्रे में उसकी परछाई है, अगर तुमने उसकी अदा पहचान ली है तो तुम्हारा दिल जीता हुआ है। जिस आदमी की आँख खुली हुई है वह जानता है बुलबुला और लहरें दरया ही से हैं। अगर इन्सान अनजान रहे तो उसे ज्ञान नहीं हो सकता है। इसी तरह जैसे किनारे पर खड़ा हुआ आदमी दरया के बारे में कुछ नहीं जानता है। आओ इस धोके की टट्टी से निकल कर उसकी ज़ात में गुम हो जायें।

जवानी बीत गई उसके साथ जिन्दगी का मज़ा भी चला गया। साठ साल का दिन हुआ, बुढ़ापा सिर पर आ पहुँचा। कमर झुक गई, बदन कमज़ोर हो गया मिज़ाज की उमंग चली गई। आँखों में देखने की ताक़त नहीं, दिल खट्टा हो गया, दाँत हिलने लगा, बाल सफ़ेद हो गये, दिल बेआस हो गया, अब बनाव-सिंगार छोड़ दो-फ़क़ीरी की सजावट के दिन बीत गये, क़लंदरी चोंचले का ज़माना गया।

दूसरी दुनिया के लिये सूझ-बूझ के साथ काम करो, यानी तुम जैसे हो अपने को वैसा ही दिखाओ, अपने को अक़ल की रोशनी में सजाओ, अगर महबूब काबे में जलवागर है तो मुसलमान हो जाओ, अगर उसका जलवा मन्दिर में नज़र आये तो काफ़िर हो जाना कोई बुरा नहीं, वह जहाँ मिले अपनाओ।

कभी मन्दिर में हो आओ कभी मसजिद में हो आओ।
कि मक़सद तो उसे पाना है जिस महफिल में हो, पाओ॥

थोड़े दिनों के लिये एक कोने में बैठ रह दुनिया से अलग थलग हो जाओ, लोगों की नज़र से छुप जाओ, किसी की ओर तवज़्ज़ो न करो सिर्फ़ ख़ुदा का ध्यान रखो। अब वह घड़ी है कि पलक झपके और मौत आ जाये। कब तक बेहोश रहोगे? न जाने तुम किस सोच में गुम हो के

अपने ज़ख्म की पपड़ियाँ नहीं उतारते। बस अब लालच के पीछे न भागो। अपनी सफ़ेद दाढ़ी की लाज रखो, अगर तुमसे कोई करामात हो भी जाये तो घमंड न करना क्योंकि जो भी घमंड करता है उसे शरमिन्दा होना पड़ता है। जब चचा यह बातें सुनकर उन के पास से उठे तो उन्होंने तै कर लिया कि अब कहीं आऊँ जाऊँगा नहीं, सिर्फ़ दिन में दो बार अपने पीर (मेरे वालिद) से मिल लिया करूँगा। एक दिन मेरे वालिद ने मेरे चचा से कहा कि भाई दिमाग़ दिन ब दिन कमज़ोर होता जा रहा है। कैसा रहे अगर उसे क़ुरान शरीफ़ याद करने में लगाया जाये। चचा ने कहा यह बड़ी अच्छी बात आप के दिल में आई, उसके बाद डेढ़ साल के अन्दर दोनों ने क़ुरान शरीफ़ याद कर लिया।

मेरे वालिद की मौत के बारे में पेशन गोई

एक दिन चचा और वालिद क़ुरान शरीफ़ पढ़ रहे थे कि असद उल्ला नाम के एक फ़क़ीर नीला कपड़ा पहने और टोपी ओढ़े आया। वालिद ने कहा कि ऐ नीले कपड़ों वाले सौदागर तुमने इतने दूर का सफ़र क्यों किया, और रास्ते की कठिनाइयाँ किस लिये झेलीं? वह फ़क़ीर सामने आकर पैरों पर गिर पड़ा। वालिद ने उसका सिर छाती से लगाया, और अपने पास बिठाया। मेरे चचा ने पूछा यह कौन हैं वालिद ने कहा यह मेरे बहुत पुराने दोस्त हैं। उन्हें और ज़्यादा हैरत हुई, जब उन्होंने कहा कि मैंने आज से पहले उन्हें कभी नहीं देखा, वालिद ने कहा हम आते दोनों एक ही गुरु के चेले हैं। यह फ़क़ीर हर साल गुरु की ख़िदमत में थे, एक बार मैंने गुरु से कहा कोई ऐसा तरीक़ा बताइये के मैं जान लूँ के अब मैं मरने वाला हूँ ताकि मरने की तैयारी कर लूँ और दूसरे तमाम नाते तोड़ डालूँ। गुरु ने कहा जब तुमसे मिलने यह नीले कपड़ों वाला फ़क़ीर आये तो समझ लेना के तुम दूसरे साल तक जीवित नहीं रहोगे, और जान लेना कि तुम्हारी मौत को कम दिन रह गये हैं। चचा ने जब यह सुना तो उन को बड़ा दुख हुआ, कहने लगे अगर ख़ुदा ने

चाहा तो मैं यह सब देखने को जिन्दा नहीं रहूँगा, मैं दुनिया से चला जाऊँगा ताकि मैं यह दुख न उठाऊँ। जब आने वाले फ़क़ीर से बातें होने लगी तो उसने बताया के कुछ दिनों से मेरा काम मन्दा है। दुकान चल नहीं रही थी, माल का कोई गाहक नहीं था। रात भर लग कर माल बनाता फिर सुबह को योंही डाल देता, जो कुछ पूँजी थी वह घाटे में चली गई। आख़िर मायूस होकर बैठ रहा।

एक दिन इसी दुख में जमीन पर लेटा था कि आँख लग गई। देखा कि मेरे गुरु सिरहाने खड़े हैं और कह रहे हैं कि असदुल्ला अगरचे सफ़र में बड़ी कठिनाइयाँ हैं और रास्ता भी बहुत लम्बा है लेकिन तुम्हारा एक बार आगरे जाना और अली मुत्तक़ी से भेंट करना बहुत ज़रूरी है। मेरे उनसे एक बात के बारे में यह तय हुआ था के जैसे ही तुम पहुँचोगे वह सब कुछ जान लेंगे सो तुम्हें चाहिये के जल्दी चल निकलो और इसका ग़म न करो के तुम्हारा व्यवपार मन्दा है। जब वहाँ से लौटोगे तो तुम्हारा माल हाथों हाथ बिक जायेगा। मेरी आँख खुल गई। मैंने दुकान अपने चेले को दी और जो कुछ रूखा फ़ीका मिल सका रास्ते के लिये ले लिया और चल खड़ा हुआ। थोड़े ही दिनों में एक दुनिया से दूसरी दुनिया में आ गया। यानी कबूद जामे से आगरे पहुँच गया। और तुम से भेंट की। अब मेरा लौटना तुम्हारे हाथ है जब कहोगे चला जाऊँगा। वालिद हँसे और कहा असदउल्ला हवा के घोड़े पर क्यों सवार हो तुम्हारा माल सड़ तो नहीं जायेगा जो इतने बेचैन हो। तुम ऐसे कठिन सफ़र से आये हो और रास्ते में इतने दुख-सुख झेले हैं अगर हमारे साथ रहने का शौक नहीं तो अपने आराम ही के लिये कुछ दिन रुक जाओ, जल्दी काहे की है लौट भी जाना। एक नौकर से कहा के चचा के कमरे में उनका बिस्तर लगा दे और अच्छी तरह उनकी देख भाल करे। मेरे बाप एक घड़ी के लिये भी उनसे अलग न होते और सदा उनके साथ हँसी मज़ाक में शामिल रहते।

एक दिन उस आने वाले मेहमान ने कहा कि मैं ख़ुदा के बारे में

कुछ उलझा हुआ हूँ। फ़क़ीर लोग दो तरह की बात करते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि एक दिन हम ख़ुदा को उस तरह देखेंगे जैसे पूर्णमासी के चाँद को देखते हैं। दूसरे लोगों का यह विचार है कि उस सूरज का देखना आदमी के बस की बात नहीं। आपका क्या विचार है। वालिद ने कहा कि हम लोगों को कोई उलझन नहीं जब हम यह मानते हैं कि सारा संसार उसी का प्रकाश है तो फिर क्या ? हम जिधर देखते हैं वह दिखाई देता है और जिस किसी में चाहते हैं उसका जलवा देखते हैं। वह हर शब्द में मानी (अर्थ) की तरह मौजूद है। देखने की ताक़त हो तो उसे हर जगह देखा जा सकता है।

बाद कुछ दिन रहने के वह फ़क़ीर असदुल्ला वापस चले गये।

चचा का देहान्त

ईद के दिन सुबह सवेरे मेरे चचा नये कपड़े पहन कर नमाज़ के लिये गये जब वापस आये तो उनके सीने में दर्द हो रहा था। और दर्द इतना तेज़ था के रंग उड़ा जा रहा था। मेरे वालिद को बुलाया और कहा कि मेरे बहुत तेज़ दर्द है ऐसा लगता है कि जान निकली जा रही है शायद अब न बचूँगा। मेरा कपड़ा बदन से नोच लो कि इससे उलझन होती है। मेरी टोपी उतार फेंको, यह बोझ लगती है। मैं कमज़ोर हूँ और यह बीमारी सख़्त है। शाम तक दुख और बढ़ गया। आह-आह करने लगे और बहुत दुखी दिखने लगे, सब्र करते तो कली के समान मुर्झा जाते, आह भरते तो फूल की तरह बिखर जाते। जब दुख बहुत बढ़ता तो आहें भरते और ऐसी कि आहों का धुआँ आसमान पर पहुँचता। कभी जब बोलते तो यह रुबाई पढ़ते।

वक्त अस्त के रू ब मर्ग यक बारा कुनेम।
आं दर्द न दारेम के मा चारा कुनेम।
बीमारिये सोबे इश्क़ दारद दिले मा।
गर जामा गुज़ारेम कफ़न पाए कुनेम॥

यानी —

इस वक़्त हमें जीने से मरना अच्छा।
इस दुख की दवा कोई न करना अच्छा।
इस दिल को ग़मे इश्क़ की बीमारी है।
इस रोग में दुनिया से गुज़रना अच्छा।

जब रात ढली तो कमज़ोरी और बढ़ी अपने पीर से कहने लगे के दिल ने बड़े दुख झेले, आंखे ग़म से पथरा गईं आप इस शराबख़ाने का भेद जानने वाले हैं अगर मेरे जीवन के प्याले में कुछ शराब बाक़ी हो तो वह किसी और को दे दीजिये क्योंकि इस दर्द में अब और नहीं जिया जाता। मैं मौत की कड़वाहट को ज़िन्दगी की मिठास से सौ बार ज़्यादा गवारा समझता हूँ। बस अब नज़र कीजिये कि इस दुख से नजात मिले, रहम कीजिये कि आराम हो। रात गुज़रे रात को पहनने वाली अपनी टोपी मुझे दी और कमज़ोरी की वजह से आँखें मूँद ली।

सुबह होते होते उनकी जान भी होटों पर आ चुकी थी। उधर अज़ान देनेवाले ने अल्ला-ओ-अकबर कहा और इधर यह रातों को जागने वाला बीमार हमेशा के लिये सो गया यानी दिल पर हाथ रक्खा और जान बख़्शने वाले पर अपनी जान भेंट कर दी।

उनके पीर ने पगड़ी उतार फेंकी, गरेबान फाड़ डाला। इस दुख में जो जान लेवा था छाती पीटने लगे। उनके मुरीद दिलों पर उनके बिछड़ने का दाग़ लिये सर पर धूल उड़ाते फिर रहे थे। इसी दुखों से बोझिल फ़िज़ा में मय्यत की तैयारी भी होती रही। आख़िर उसका दर्द रखने वाले इन्सान का जनाज़ा तैयार हुआ।

इश्क़ इक दर्दे बे दवा ठहरा।
जानो दिल के लिये बला ठहरा॥

जब लोग नमाज़े जनाज़ा पढ़ने खड़े हुये तो बहुत से निढाल होकर

ज़मीन पर गिर पड़े। मेरे वालिद ने कहा "ऐ! मुहब्बत का रिवाज न समझने वाले। बहुत देर में पता चला के तू बेवफ़ा है। इस तरह साथ छोड़ा कि मेरा सीना फूँक दिया। दोस्त ऐसे तो नहीं जाया करते और साथ वाले इतने बे मुरउव्वत तो नहीं होते।"

कभी हमने मने निबाह का जो किया था वादा कहाँ गया ?

बुजुर्गों ने जनाज़े को कांधे पर उठाया, पीर की आहें झन्डे की तरह आगे-आगे चल रही थीं। उनके मानने वाले आठ आठ आँसू रोते हुये जनाज़े के संग थे। जनाज़ा इस तरह शहर से बाहर लाया गया। वहाँ एक बाग़ के कोने में उन्हें दफ़न कर दिया गया। फूल बरसाये गये बहुत दुख हुआ पर सब्र के सिवा चारा ही क्या था।

तीजे के दिन जब शहर के लोग फ़ातेहा के लिये आये तो मेरे वालिद ने कहा कि जिसका ऐसा अज़ीज़ मर गया हो उसे अगर अज़ीज़ मुर्दा कहें तो बेजा है इसलिए आज मुझे अज़ीज़ मुर्दा कहा जाये। चुनानचे शहर के लोग उनको अज़ीज़ मुर्दा कहने लगे। वह दिन में सौ-सौ बार रोते और इस तरह रोते जैसे जान न रह गई हो। मैं, जिसे चचा ने पाला था और उनसे बहुत ज़्यादा मानूस था अब उन्हें दिन भर याद करता और रात रात भर उनकी याद में आँसू बहाता। मेरे वालिद मेरा बहुत बहुत जी बहलाते और मुझे कभी परेशान न होने देते कभी कहते बेटे मैं तुमको बहुत चाहता हूँ मगर मुझे यह ग़म खाए जाता है कि अब मेरा भी चल चलाओ है। कभी कहते मेरे चाँद अब तुम गोद के बच्चे नहीं दस साल के हो गये जी भारी न करो। तुम फ़क़ीर के लड़के हो दिल मज़बूत रक्खो अपने आप को खुदा को सौंप दो खुश रहा करो और मुझे अपना नाज़ उठाने वाला जानो! मेरी जान! तुम दूध पीते बच्चे नहीं जो हर वक़्त रोते हो। अपने बारे में न सोचो तुम्हारा निगहबान तो खुदा है। जाने वाले कभी नहीं लौटते गुज़रने वाले मुँह नहीं दिखाते। बेटे यह दुनिया आनी जानी है। यह जो भी है वह चलने पर कमर कसता है। यह मत समझो के दुनिया तुम्हारे रहने की जगह है।

यह महफिल तो उखड़ने के लिये जमी है जो लोग आये थे चले गये। जो बैठे थे उठ खड़े हुये। कली की तरह उदास न हो फूल की तरह हंसो यह बाग़ तो एक दिन उजड़ने वाला है इसके लिये अपना दिल मैला न करो। यह दुनिया जुआँखाना है इसमें तुम्हारी तरह कितने दिल हार चुके हैं। तुम जब तक यहाँ के रिवाज को न जान लो हरगिज़ इस रास्ते पर न चलो! वह हर दिन ऐसी ही बातें करते और बड़े लाड से मुझे पालते पोसते।

अहमद बेग का आना

एक दिन जब मेरे वालिद चचा की मौत का हल्वा बाँट रहे थे के एक अच्छी सज-धज वाला नौजवान जिसका नाम अहमद बेग था आया और अंगूर के कुछ दाने हथेली पर रखकर पेश किये! उसके बाद बोला कि विलायत से आ रहा हूँ और हज करने जाने का ख़्याल रखता हूँ। इस शहर में आया तो आपका नाम सुना मिलने की आरज़ू लिये हाज़िर हुआ हूँ। वालिद ने कहा तुमने शायद यह नहीं सुना है—

काबे के जाने वाले ख़ुद अपने क़दम पे झुक।
तू ही है इतनी दूर पे काबा बना हुआ॥

पहले अपने को पाओ फिर काबे जाओ। काबा फ़क़ीरों के दिल का नाम है और मक़्सद फ़क़ीरों से नज़दीक होना है अगर फ़क़ीरों के दिल को अपना बना लो तो वह बिना दौड़ भाग के उस काबे तक पहुँचा देंगे जो असिल काबा है इसीलिये तो किसी ने कहा है—

काबे से आ रहा हूँ मगर रश्क है मुझे।
उन आँसुओं पे देख के जो दिल को आये है॥

तुम जो कुछ कहते हो काबे वाले भी वही कहते हैं। जिसकी तुमको खोज है काबा भी उसी को खोज रहा है—

जिसको भी देखा उसी को खोज में डूबा हुवा।
काबा भी इह खोज में डूबा हुवा हमको मिला॥

दिलों का फेरा लगाओ यही काबे का फेरा है! अपनी जान को ढूँढों सब से अच्छा मक़्सद यही है। ख़ुदा के सिवा कोई चीज़ नहीं और जो कुछ नज़र आता है वह ख़ुदा के बिना नहीं है।

मैंने काबे से कहा इस घर का मालिक कौन है।
उसने धीरे से यह पूछा कौन इस घर का नहीं॥

उसके बाद बोले मुझे तुम्हारी जवानी पर तरस आता है कि दुख उठाओगे लेकिन जिसकी खोज है, उसे न पाओगे। अच्छा तो यह है कि फ़क़ीरों की बातें जी लगाकर सुनो कुछ दिन ठैहरो और यहाँ से न जाओ। उस जवान ने जब देखा के फ़क़ीर मेहरबान है तो उनका कहा किया और जाने का इरादा छोड़ ठहर गया। उसने पीर के कहे पर जी जान से अमल किया और सात महीनों में फ़क़ीरी में कमाल हासिल कर लिया। वह रात दिन दोस्तों की तरह साथ रहते थे और दोनों में बड़ी दोस्ती थी। वह जवान एक पल के लिये भी अपने पीर को न छोड़ता और इसीलिये लोग उसे जवाने अज़ीज़ कहने लगे थे।

वह नौजवान काफ़ी दिनों रहा! आखिर एक दिन उसके पीर को कहीं से कुछ रुपया मिला उन्होंने वह रुपया जवान को दे दिया और कहा इसे ख़र्च करो और काबे चले जाओ। सुबह की नमाज़ के बाद उसके सर पर पगड़ी बाँधी और रुख़सत कर दिया।

वालिद का देहान्त

एक दिन की बात है के वालिद दिन चढ़े मीर अमानुल्लाह के भान्जे मुहम्मद बाइस को देखने गये जो एक पढ़े लिखे फ़क़ीर थे और आगरे के मशहूर मुहल्ले आलमगंज में रहते थे। शाम होते घर की ओर लौटे मग़रब और ऐश की नमाज़े अपनी मसजिद में पढ़ीं। जब सोने

के लिये लेटे तो मुझसे कहने लगे बेटे आज मुझे धूप लग गई है सर में दर्द हो रहा है और ऐसा लगता है कि बुख़ार आयेगा। रात का खाना नहीं खाया और सो रहे सुबह उठे तो बुख़ार बहुत तेज़ था। हकीम अबुल फ़तह जो सदा उनकी देखभाल करने और दवा-दारू के लिये हाज़िर रहते आये और ठन्डाई पिलाई मगर कोई फ़ायदा नहीं हुआ बुख़ार ठहर गया। यानी हर दिन शाम को चढ़ आना और सारी रात रहना, बुख़ार दूर कर देने की जितनी कोशिशें की गई सब उल्टी होती गई बहुत हाथ पैर मारा गया लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

एक महीने बाद यह तय हुआ के बुख़ार ने दिल में घर कर लिया है और हड्डी में बैठ गया है। यानी यह कमज़ोर फ़क़ीर जो मुट्ठी भर हड्डियों का ढाँचा है दिल की बीमारी में गिरफ़्तार है।

एक दिन वालिद ने कहा ऐ बेटे मेरी जान किसी पर मिटी जा रही है और जिस्म घुलता जा रहा है। याने ज़रा भी जी नहीं चाहता। अगर खा लेता हूँ तो पेट भारी हो जाता है जो दवा हकीम रात को खिलाता है वह तो अगली सुबह तक पेट में रहती है। अब जी यही चाहता है कि मरने तक सब खाना पीना छोड़ दूँ। तुम बाज़ार से नर्गिस के चार पाँच गुलदस्ते ला दो ताकि जब तक जीवित रहूँ उसी को सूँघ लिया करूँ! मैंने उनका कहना किया, जब भी उनकी आँख खुली–गुलदस्ता हाथ में लिया सूँघते और कहते ख़ुदा का शुक्र है कि सैर हो गया। जब वालिद ने खाना पीना छोड़ दिया तो हम बिलकुल ना उम्मीद हो गये। हाथ पाँव की ताक़त ख़त्म हो गई, कमज़ोरी बहुत बढ़ गई, अब बात कम करते, नमाज़ भी इशारों में पढ़ते २१ रजब को हकीम ने जब ठंडाई का प्याला आगे बढ़ाया तो नाक भौं चढ़ाकर दवा पीने से इन्कार कर दिया। हकीम के हाथ से प्याला छीनकर जमीन में फेंककर बोले––बेवक़ूफ़ दवा जिस तरह काम कर रही है वह तो पहले दिन से मालूम है। तेरे ख़्याल से पी लिया करता था, अफ़सोस कि तू अब भी नहीं समझा अब चला जा

और मुझे मेरे हाल पर छोड़ दे, मौक़े को न समझा यह एक ऐसी बिमारी है जिसका कोई इलाज नहीं।

उसके बाद मेरे सौतेले भाई को बुलाया और कहा कि मैं ग़रीब आदमी हूँ, मेरे पास ले देकर तीन सौ किताबें हैं उन्हें मेरे सामने लाओ और भाईयों में बाँट लो। उन्होंने जवाब दिया मैं पढ़ने लिखने वाला आदमी हूँ और किताबों से मेरा सबक़ है। उन छोटे भाईयों को किताबों से कोई लगाव नहीं, किताबों के वर्क़ फाड़ डालेंगे, अगर आप यह सारी किताबें मुझे दे दें तो बेहतर है वरना आपकी मरज़ी––वालिद को उनकी नियत का हाल मालूम था, बिगड़ कर बोले तूने फ़क़ीरों का भेस बना लिया है लेकिन दिल की खोट बाकी है तेरा मतलब है मेरे बाद इन बच्चों को धोका दे। याद रख खुदा बड़ा गैरतवाला है, वह उनसे ही प्यार करता है जिनको लाज है। मुझे विश्वास है कि मीर मुहम्मद तक़ी तेरा मोहताज न होगा। अगर तू बुरा वर्ताव करेगा तो ख़ुद ज़लील होगा और तेरी इज़्ज़त उस बच्चे के आगे क़ायम न हो सकेगी। तूने जो कुछ ठानी है वह कर भी गुज़र तो जान ले कि यह एक जिल्द किताब के बदले तेरी खाल खींच लेगा। छिछला आदमी इस क़ाबिल नहीं कि उस पर भरोसा किया जाये। कंजूसी और हसद ज़लील आदमी की निशानी है, अच्छा ले यह किताबें तू ही लेजा रख ले। फिर मेरी तरफ़ मुँह किया और बोले कि बेटे बाज़ार के बनियों का तीन सौ रुपया देना है। मुझे उम्मीद है जब तक तुम उन्हें रुपया न दोगे, मेरा ज़नाज़ा न उठाओगे क्योंकि मैं सदा साफ़ आदमी रहा हूँ और मैंने आज तक किसी को धोका नहीं दिया। मैंने कहा ले देकर घर में यही किताबें थीं। वह भी बड़े भाई ले गये अब मैं कहाँ से रुपये का इन्तज़ाम करूँ? यह सुनकर उनकी आँखों में आँसू आ गये, मुझे तसल्ली देते हुये कहने लगे कि आदमी को निराश न होना चाहिये, खुदा बड़ा मेहरवान है रुपया रास्ते में है और आया ही चाहता है। चाहिये तो यह था के मेरे जीते जी रुपया आ जाये लेकिन उम्र की चन्द घड़ियाँ बाक़ी हैं अब रुकना मेरे बस में

नहीं। यह कहकर मुझे दुआ दी, ख़ुदा को सौंपा, दो चार बार साँस ली और हमेशा के लिये मुझे छोड़कर चल दिये।

वालिद के मरने के बाद भाई का बुरा बर्ताव

फ़क़ीर ने आँखें बन्द की तो मुझे सारी दुनिया अँधेरी दिखाई देने लगी। यह एक बड़ी घटना थी। मुझ पर आसमान टूट पड़ा, आठ-आठ आँसू रोता, सब्र की ताक़त नहीं रह गई, दीवार से सिर टकराता ऐसा लगता जैसे क़यामत आ गई हो। मेरे बड़े भाई ने आदमीयत से गुज़र कर मेरे साथ सुलूक किया। जब देखा के बाप के पास कुछ नहीं था और अब जिसका रुपया है वह मुझे पकड़ लेंगे तो अपने को बचाने को कहने लगे कि जो उनके लाडले हैं वह जाने और उनका काम, मैंने जब बाप के जीते जी किसी काम में हिस्सा न लिया तो अब मुझे कुछ नहीं लेना है। उनके जाँनशीन जिन्दा रहें जो सिर पीट रहे हैं जैसा उनकी समझ में आयेगा करेंगे।

मैंने जिस पर नई-नई आफ़त टूटी थी उनकी यह बातें सुनी तो मुझे बहुत ग़ुस्सा आया। मैंने उसके बाद उनसे किसी बात के लिये नहीं कहा ख़ुदा के सहारे बैठ रहा। बाज़ार के बनिये दो सौ रुपये और लाये और मुझे देना चाहा लेकिन मैंने वालिद के कहने का पास किया और उनसे कुछ नहीं लिया, अलबत्ता उनको दुख न हो इसलिये साफ़ इन्कार भी नहीं किया। इस बीच मेरे चचा के मुरीद सैय्यद मुकम्मल खाँ का नौकर पाँच सौ रुपये लाकर दे गया और दुखों में मेरा साथ दिया। मैंने तीन सौ बनियों को देकर उनसे अदायगी लिखवाई और सौ में फ़क़ीर का कफ़न दफ़न किया, उनको उनके पीर के बग़ल में दफ़न कर दिया।

बाप की मौत के बाद

बाप की मौत के बाद मुझ पर क्या-क्या न बीती, आसमान की बे मुरव्वती देखी, ज़माने के दुख झेले, नहीं-नहीं आसमान और ज़माने

का क्या दोष मेरी ही क़िस्मत का फेर था कि ऐसे सूरज का साया मेरे सर से उठ गया। जो कुछ किया मेरी क़िस्मत ने किया। कोई ऐसा न रहा जो मेरे सर पर साया रखता। मगर मैंने ग़ैरत को हाथ से न जाने दिया। किसी के दरवाज़े पर हाथ नहीं फैलाया, किसी से भीख नहीं माँगी, किसी चीज़ की लालच नहीं की। न मैंने किसी का सहारा ढूँढ़ा और न किसी ने मुझे सहारा दिया। ख़ुदा का करम था कि न मैंने किसी और का एहसान उठाया और न तो मुझे भाई के आगे हाथ फैलाना पड़ा। रात दिन फ़क़ीर का मातम करता और सब कुछ ख़ुदा पर छोड़, भाई को अपनी जगह बिठा, रोज़ी की खोज में गली-गली की ठोकर खाता। लेकिन कोई सहारा न पाया। जब स्वदेश में कोई सहारा न मिला तो परदेस जाने का इरादा करके निकल खड़ा हुआ। रास्ते के हरज-मरज खींचे, सफ़र के दुख-सुख झेले और आख़िर शाहजहानी दिल्ली पहुँच गया। यहाँ भी बहुत हाथ पैर मारे लेकिन कोई ऐसा न पाया जो उस बुरे वक़्त मेरे काम आता।

———

२

मीर दिल्ली में

बाद काफ़ी दुख उठाने के दिल्ली में ख़्वाजा मोहम्मद बासित जो कि अमीरों के अमीर, समसामुद्दौला के भतीजे थे मेरे हाल पर इनायत की नज़र की और मुझे नवाब की पेशी में ले गये। नवाब ने मुझे देखकर पूछा कि यह किसका लड़का है। वह बोले मीर मुहम्मद अली का। यह सुनकर नवाब ने कहा कि इसका यहाँ आना बताता है कि वह इस दुनिया से सिधार गये। फिर बहुत अफ़सोस करने के बाद कहने लगे कि उस आदमी के मुझ पर बड़े हक़ हैं। एक रुपया रोज़ मेरी सरकार से इस लड़के को दिये जाया करें। मैंने अर्ज़ किया कि अगर इतनी मेहरबानी और हो कि मुझे दस्तख़त करके दे दें तो रोड़ा अटकाने वालों का डर न रहे। मैंने वह दर्ख्वास्त, जो लिख छोड़ी थी जेब से निकाली ही थी के यकायक उनके मुँह से निकला, यह क़लमदान का वक़्त नहीं है। मैंने यह सुनते ही शट्ठा मारा। नवाब ने मेरी ओर देखा और वजह हँसी की पूछी। मैंने कहा कि आपकी बात मेरी समझ में नहीं आयी। अगर यह कहते कि क़लमदान रखने वाला मौजूद नहीं तो एक बात भी थी, या यह भी कह सकते थे कि यह नवाब की दस्तख़त करने का समय नहीं है। क़लमदान का वक़्त नहीं है, कहना तो जुबान का नया रूप है। क़लमदान क्या है, लकड़ी का एक टुकड़ा, वह वक़्त और बेवक़्त नहीं जानता। जिसे भी हुक्म दिया जाय उठा लायेगा। नवाब यह सुनकर हँस दिये और बोले कि बात तो ठीक कह रहा है। गरज़ मेरी यह बात मानकर क़लमदान मँगवाया और इस

दख्वांस्त पर दस्तख़त कर दिये। वह बादशाह के दरबार का दिन था, वह तैयार होकर खड़े हुए और मुझे भी बड़ी अपनाइयत के साथ रवाना किया। इस दिन से नादिर शाह की मुहम्मद शाह पर जो कि फ़िर्दौस आरामगाह (जन्नत में रहनेवाले) के लक़ब से मशहूर हैं चढ़ाई तक जिसमें नवाब साहेब मुकाबला करते हुए मारे गये यह रोज़ाना की रकम मुझको मिलती रही, इसी से नान व नमक चलता रहा और गुज़र होती रही।

मीर फिर देहली आए

बाद इस इन्क़लाब के पथ्थर दिल ज़माने ने मुझे फिर सताया, वह लोग जो फ़क़ीर के जीते जी मेरे पैरों तले की मिट्टी भी सुर्मे की तरह आँखों से लगाते अब मुझ से आँखें चुराने लगे। लाचार फिर दिल्ली पहुँचा और बड़े भाई के मामा सिराजउद्दीन अली खाँ आर्ज़ू का एह-सान उठाया यानी कुछ दिनों उनके साथ रहा और शहर के दोस्तों से कुछ किताबें पढीं! अभी इतना ही पढ़ पाया था कि लोगों के बीच अच्छी तरह उठ बैठ सकूँ कि बड़े भाई का ख़त पहुँचा कि मीर मुहम्मद तक़ी आफ़त का परकाला है इसके पालने पोसने की तकलीफ़ मत मोल लीजिये और दोस्ती के पर्दे में उसका काम तमाम कर दीजिये। वह अज़ीज़ भी पक्के दुनियादार थे अपने भान्जे की दुश्मनी जानकर मेरा बुरा चाहने लगे। दिखाई दे जाता तो डाँट फटकार सुननी पड़ती, दूर दूर रहता तो औल फ़ौल बकते। हर वक़्त मेरे पीछे पड़े रहते और दुश्मनों जैसा बर्ताव करते। अब क्या कहूँ कि उनके हाथों क्या कुछ झेला! जो कुछ बीती, बीत गई, हर चन्द सबर से काम लेता लेकिन वह अपने किये से हाथ न उठाते! हज़ार ज़रूरत पड़ती मगर उनसे एक कौड़ी का रवा-दार न होता फिर भी वह दुश्मनी न छोड़ते। उनकी सितमरानियों का अगर खुल कर बयान करूँ तो एक दफ़्तर जमा हो जाये। मेरा दुखी दिल और ज़ख़्मी हो गया। यहाँ तक दुख उठाये कि दिमाग़ क़ाबू में न रहा और पागल हो गया।

मेरा परीशान दिल और परीशान हो गया। दीवानापन पैदा हुआ! जो कोठरी मेरे रहने की जगह थी उसका दरवाज़ा बंद कर लिया और ग़म के बोझ में अकेले बैठ रहा। जब चाँद निकलता तो मेरे सर पर आफ़त टूट पड़ती। अगरचे मैं चाँद को उस समय से देखता आया था कि दाई मेरा मुँह धुलाती और चाँद चाँद कहती और आसमान की ओर सर उठाता लेकिन न इस तरह कि पागल हो जाऊँ, और मेरा पागलपन इतना बढ़ जाए के लोग मुझसे डरने लगें। मेरी कोठरी खोलें तो डरते डरते और मुझसे दूर रहने लगे।

मीर का पागलपन

जब चाँदनी फैलती तो एक हसीन जिस्म अपनी सारी सुन्दरता के साथ चाँद की दुनिया से मेरी ओर आता और मुझे बेहोश कर देता। जिस ओर भी मैं देखता इसी पर नज़र पड़ती। जिधर भी आँख उठती मुझे वही वह दिखाई देता, मेरे घर के दर-दिवार और आँगन गोया तस्वीर का वरक़ हो गए थे कि जिधर देखिये वही होश उड़ा देने वाला चेहरा नज़र आता। कभी चौदहवीं के चाँद जैसा सामने और कभी दिल के बाग़ में टहलता हुआ। अगर फूल जैसे चाँद पर नज़र पड़ जाती तो जी और बहकने लगता। हर रात उस परियों जैसे बदन से मुलाक़ात होती और हर सुबह उसके चले जाने से पागलपन बढ़ता। जब सुबह की सुफ़ेदी फैलने लगती दिल से ठंडी आहें निकलतीं यानी दिल मचलता और चाँद की ओर लपकता। दिन भर यही जुनून रहता और उसकी याद में मेरा दिल ख़ून होता मैं दिवानों की तरह थूक में लुथरा हाथ में पत्थर लिये लड़खड़ाता फिरता। लोग मेरी सूरत देखकर भागते। चार महीनों तक वह रात को जगमगाने वाला फूल नई नई छबि दिखाता रहा और अपनी चाल ढाल से क़यामत उठाता रहा। नागाह बहार के दिन आए जुनून के दाग़ और भी हरे हो गये। ऐसा लगने लगा जैसे मुझ पर परी का साया पड़ गया हो यानी इतना बेहोश हुआ कि किसी

काम काज का न रहा। उसकी मोहनी सूरत हर समय नज़र के सामने रहती उसके बालों का ख़याल सर में समाया रहता। लोग मुझसे भागने लगे और आख़िर मुझे कोठरी में बन्द कर दिया गया और पैरों में ज़ंजीर डाल दी गई।

फिर होश में आना

फ़ख़रउद्दीन ख़ाँ की घरवाली मेरे वालिद की मुरीद और क़रीबी रिश्तेदार थी मेरे इलाज पर बहुत पैसा बहाया ! झाड़ फूँक करने वालों ने झाड़ फूँक की हकीमों ने रग़ खोली और ख़ून निकाला। यह सारी कोशिशें कामयाब हुईं जब मौसम बदला बहार का ज़माना बीता तो मेरा जुनून भी कम हुआ। वह सूरत जो मेरे ख़याल में समा गई थी मिट गई और जनून ने जो सबक मुझे पढ़ाया था मैं भूल गया। अब ज़बान, बन्द रहने लगी और वाही तबाही बकना ख़त्म हो गया। दिमाग़ की ठन्ढक के लिये दवाएँ खिलाई तो नींद आने लगी अब मैं अपने आप में आया। वह सूरज जैसा चेहरा भी निगाहों से ओझल हो गया बाद एक मुद्दत के पूरी तरह होश में आ गया और पढ़ना लिखना भी शुरू कर दिया !

मीर जाफ़र की शागिर्दी

एक दिन बाज़ार में एक किताब के कुछ हिस्से लिये बैठा था कि मीर जाफ़र नाम के एक जवान का गुज़र उधर से हुआ उसने मुझे देखा तो मेरे पास आया और थोड़ी देर के बाद कहने लगा कि ऐ अज़ीज़ भाव स्वभाव से पता चलता है कि तुमको पढ़ने का शौक है। मैं खुद भी किताबों का कीड़ा हूँ लेकिन कोई ऐसा नहीं मिलता जिससे बात चीत कर सकूँ अगर तुम चाहो तो कभी कभी आ जाया करूँ। मैंने कहा मेरे पास कुछ नहीं है कि आप की ख़िदमत कर सकूँ अगर ख़ुदा वास्ते पर यह तकलीफ़ उठा सकें तो मेहरबानी होगी। उन्होंने कहा कि इतना

चाहिये कि थोड़ा सा नाश्ता मिल जाये मुझे और कोई लालच नहीं। मैंने कहा अगरचे मेरे पास कुछ भी नहीं है लेकिन यह मुश्किल ख़ुदा आसान कर देगा। उन्होंने इन तितिर-बितिर वर्क़ों को सिरे से लगाया और चले गये। उस दिन से अक्सर उस आदमी-सूरत फ़रिश्ते से अक्सर मुलाक़ात होती। बड़ी मेहरबानी का बरताव करते यानी अपना दिमाग़ खपाते और मुझे कुछ सिखाते। मैं भी जितना हो सकता उनकी खिदमत में खरच करता! इसी बीच उनके देश, अजीमाबाद पटना से कोई ख़त आया और वह उधर चले गये!

सआदत अली की शागिर्दी

बाद कुछ दिन के सआदत अली नामक अमरोहा के एक सय्यद से मेरी मुलाक़ात हुई। इस अज़ीज़ ने मुझे रेख्ता में शेर कहने की ओर लगाया जो फ़ारसी शायरी की तरह बादशाह के क़िले और लश्कर की ज़बान में शायरी है। और इन दिनों रवा पा रही है। मैंने बहुत जतन किया और लिखते लिखते इस मरतबे पर पहुँच गया कि शहर के शाएरों में सनद माना जाने लगा, मेरे शेर सारे शहर में फैल गये और हर छोटा बड़ा उसे सुनने पढ़ने लगा।

रेआयत खाँ की मुलाज़मत

एक दिन मामू ने मुझे खाने पर बुलाया और डाटना फटकारना शुरू कर दिया मैं जी में बहुत कुढ़ा और खाने से हाथ खींच उठ खड़ा हुआ! जब उनसे किसी तरह निभती न देखी तो शाम को उनके घर से निकला और जामे मस्जिद का रास्ता लिया। भटकता भटकता क़ाज़ी हौज़ पर आ निकला जो वज़ीरुल मुमालिक एतेमादुद्दौला की हवेली के पास एक छोटी सी नहर है यहाँ रुककर पानी पिया। इतने में अलीम उल्लाह नाम का एक आदमी सामने आया और उसने मुझसे पूछा कि क्या तुम मीर मुहम्मद तक़ी हो? मैंने पूछा, "तुमने कैसे जाना?" कहने लगा

"तुम्हारी दीवानगी तो काफ़ी मशहूर है"। उसके बाद बोला कि अज़ीम उल्लाह खाँ के लड़के और एतेमादुद्दौला क़मरउद्दीन खाँ के भान्जे अज़ीम उल्लाह खाँ ने जबसे तुम्हारे शेर सुने हैं तुमसे मिलने को बेचैन है अगर तुम मेरे संग चलकर उनसे मिलो तो इसी बहाने मुझे भी हाज़री का मौका मिल जायेगा। मैं उसके संग हो लिया और उनसे मिला भलमन्सी से बातें की और मुझे अपना दोस्त बना लिया। मुझे इस दोस्ती से बड़ा फ़ायदा हुआ और मुफ़लिसी से छुटकारा मिला।

अहमद शाह का हमला

अहमदशाह दुर्रानी जिस समय लाहौर गया और शाह नवाज़ खाँ जो ज़करया खाँ का लड़का और वहाँ का सूबेदार था भाग निकला तो वज़ीर सफ़दर जंग और राजा जयसिंह का बेटा इशर सिंह जो एक बड़ा ज़मींदार था शाहज़ादा अहमदशाह को साथ लेकर उससे लड़ने निकले। सर हिंद के पास वज़ीर को गोला लगा और ज़मींदार भाग खड़ा हुआ! मरने वाले वज़ीर का बेटा मुईनुल मुल्क और सफ़दर जंग शहज़ादा अहमद शाह के साथ अफ़ग़ानों से भिड़े रहे! मैं इस सफ़र में रेआयत खाँ के साथ था और उनकी चाकरी में जुटा हुआ था। जब अफ़ग़ानों का लश्कर हार कर भाग गया तो मुईनुल मुल्क लाहौर का सूबेदार बन बैठा और रेआयत खाँ उसका साथ छोड़ सफ़दर जंग के संग शहर यानी दिल्ली चला आया।

मुहम्मद शाह की मौत

पानीपत के पास जो देहली से चालीस कोस पर एक मशहूर शहर है यह ख़बर मिली के मुहम्मद शाह की मौत हो गई। इस ख़बर से बड़ा तहलका मचा। सफ़दर जंग ने बड़े घमंड के साथ अहमद शाह के आगे बादशाही तख़्त और ताज़ पेश किया और उसे बादशाह बना दिया। वह बड़ी धूम धाम के साथ शहर में आया और मरने वाले बादशाह

के ख़ज़ाख़ा जावेद खाँ को नव्वाव वहादुर का ख़िताव देकर सारी हुकूमत का करता धरता बना दिया।

हर रोज़ इख़्तयारे जहाँ पेशे दीगरेस्त।
दौलत मगर गदास्त के हर रोज़ बर दरेस्त॥

यानी दुनिया का अख़्तयार हर दिन एक से दूसरे को मिलता रहता है यह दुनिया फ़क़ीर जैसी है कि रोज़ नये-नये दरवाज़े पर आवाज़ देती रहती है।

सफ़दरजंग की वेज़ारत

जव निज़ामुलमुल्क आसिफ़ जाह की दकन में मौत हो गई तो सफ़दरजंग वज़ीर हुये और वख़्शीगीरी सादात खाँ ज़ुल्फ़ेक़ार जंग को मिली। नये वज़ीर की शान और ठाठ वाट का यह आलम था कि बादशाह भी उसके आगे कुछ न लगता। नये वख़्शी ने राजा वख़्त सिंह को जो एक जाना माना ज़मींदार था अजमेर के सूवे की सूवेदारी देकर अपने बड़े भाई अभय सिंह से लड़ने भेज दिया जो जोधपुर का राजा था! राजा ने रेआयत खाँ को भी अपने साथ ले लिया, शायर के पास जो अजमेर से बीस कोस इधर एक मशहूर क़स्वा है दोनों लश्करों का सामना हुआ और तोपख़ानों के साथ लड़ाई छिड़ गई। उधर के लोगों ने नमक हरामी की जान देना तो दूर। एक दिन भी जी-जान से न लड़े। आख़िर उधर के सरदार ने दकन के जाने माने सरदार मलहार को वीच में डालकर सुलह करली और लौट गया। सुलह के वाद मैं ख़ाजा साहव की मशहूर दरगाह की यात्रा के लिये चला गया और इधर-उधर घूम फिरकर वापस लौट आया!

यहाँ अमीरों के बीच तल्ख़ी पैदा हो गई। एक वात पर राजा वख़्त सिंह ने नाक भौं चढ़ाई और ख़ान से उसकी तू-तू मैं-मैं हो गई। सत्तार कुली खाँ कशमीरी ने जो कि वड़ा फेकैत था उसे गालियाँ दीं और वात

हाथापाई तक पहुँच गई। ख़ान ने जब देखा के बात बिगड़ना चाहती है तो मुझे माफ़ी के लिये भेजा मैं गया और कहा कि जो कुछ हुआ उसे भूल जाइए अब ऐसा न होगा मगर राजा का दिल साफ़ न हुआ। उसने लश्करियों को कुछ दे दिला कर चले जाने के लिये कह दिया। बारे यह बला गुज़र गई, ख़ान भी उस पर लानत भेज शहर यानी दिल्ली आ गया और अपने घर बैठ रहा।

मीर की बेदिमाग़ी

एक चाँदनी रात में ख़ान के आगे एक डोम का लड़का चबूतरे पर बैठा गा रहा था ख़ान ने मुझे देखकर कहा कि मीर साहब इसे अपने दो तीन शेर याद करा दीजिये तो यह बाजे पर गा लेगा। मैंने कहा यह मुझसे नहीं हो सकता। बोला मेरे कहे से ऐसा कर दीजिये चूँकि मुलाज़मत का पास था इसलिये मैंने उसका कहा कर तो दिया लेकिन यह बात मुझे बहुत खली। आखिर दो चार दिन बाद घर बैठ रहा। उसने बहुत-बहुत बुलाया मैं न गया और उसकी नौकरी छोड़ दी। मगर उसकी भलमन्सी ने यह न चाहा के मैं भूँके मरूँ। मेरे भाई मुहम्मद रज़ी को मेरी दोस्ती का ख़्याल करते हुये अपने पास से घोड़ा देकर नौकर रख लिया। जब मैं काफ़ी दिनों बाद जाकर मिला तो उसने बहुत माफ़ी माँगी मैंने कहा खैर जो कुछ हुआ, हुआ अब ऐसा न हो।

नवाब बहादुर की नौकरी

कुछ दिन इसी तरह बीते फिर मैंने नवाब बहादुर के यहाँ नौकरी ढूँढी और नौकर हो गया। असदयार ख़ाँ ने जो उसकी फ़ौज का बख्शी था मेरी बिपदा उसे सुनाकर घोड़े और नौकरी से माफ़ी दिला दी। नवाब मेरा बहुत पास करता था ख़ुदा उसे इसका बदला दे।

वज़ीर की अफ़ग़ानों से लड़ाई

यह उन दिनों की बात है जब मुहम्मद खाँ बंगश का बेटा क़ायम

ख़ाँ रोहीलों की जंग में मारा गया और सफ़दर जंग उसका घर माल ज़ब्त करने गया तो मैं भी इसहाक़ ख़ाँ नज़मुद्दौला के साथ घूमने-फिरने की ग़रज़ से हो लिया। क़ायम ख़ाँ के छोटे भाई अहमद ख़ाँ से बड़ी भारी लड़ाई हुई। वज़ीर की फ़ौज ने मुँह की खाई और इसहाक़ ख़ाँ भी मारे गये। मैं उस हारे हुये लशकर के साथ हरज मरज खींचता देहली आ गया। वज़ीर फिर लश्कर लेकर निकला और अफ़ग़ानों को पछाड़ कर शानदार जीत के साथ बादशाह के हुज़ूर में आया।

ग़ाज़ीउद्दीन फ़ीरोज़ जंग

मैं उन दिनों सारी चीज़ों से हाथ खींच मुतव्वल पढ़ने में लगा रहा जिन दिनों नवाब बहादुर की दुश्मनी के हाथों ज़ुल्फ़िक़ार जंग अपनी जगह यानी मीर बख्शी से हटाया गया और आसिफ़ जाह के बेटे ग़ाज़ी-उद्दीन फ़ीरोज़ जंग को अमीरुलउम्रा बनाया गया। वह दकन का बन्दो-बस्त करने के लिये चला मगर रास्ते ही में उसे हैज़ा हुआ और मर गया उसकी जगह उसका बेटा इमादुलमुल्क बख़्शी हुआ।

जब सफ़दर जंग ने धोका देकर नवाब बहादुर को मौत के घाट उतार दिया तो बड़ी आफ़त मची और मैं भी बेकार हो गया। इसी बीच वज़ीर के दीवान महानारायन ने अपने दीवानख़ाने के दरोग़ा मीर नजमउद्दीन सलाम के हाथों जो मीर शरफ़उद्दीन पयाम के बेटे थे मेरे पास कुछ रुपया भेजा और मुझे बुलाया। मैंने उसकी बात पूरी की और कुछ महीनों इससे फ़ायदा उठाया।

वज़ीर की बग़ावत

अभी ख़्वाजा सरा के ख़ून का मामला चल ही रहा था कि एक और फ़ितना उठ खड़ा हुआ और एक बड़ी आफ़त टूट पड़ी यानी वज़ीर के दिल में कुछ ऐसी समाई कि उसने बादशाह से बग़ावत कर दी। लोगों ने बहुत चाहा के मेल करा दिया जाय मगर उसने ताक़त के

घमंड में अपना सर नहीं झुकाया आख़िर बादशाह ने उसे सज़ा देने का इरादा किया। वह शहर से बाहर निकल अपने आक़ा से लड़ने पर तुल गया इधर एमादलमुल्क ने जो आसिफ़ जाह का पोता और बख़्शी था अपने मामूँ शहीद एतेमादुद्दौला के लड़के इन्तेज़ामुद्दौला और शाही फ़ौज के दूसरे सरदारों को साथ लेकर शहर का बचाव किया। पुराना शहर इस लड़ाई की नज़र हो गया। छः महीने तक यह लोग लड़ते रहे अगरचे इस लड़ाई में कोई फ़ायदे का सवाल न था फिर भी शाही फ़ौज ऐसा जी जान से लड़ी के मैदान उसी के हाथ रहा। बाग़ी वज़ीर के पैर उखड़ गये आख़िर मजबूर होकर उसने सुलह की बातचीत की बादशाह ने उसकी हार को ही बहुत जानकर उसे उसके सूबे की सूबेदारी दे दी। और उसकी जगह इन्तेज़ामुददौला को वज़ीर बना दिया।

इन्हीं दिनों मैंने ज़माने के हाथों तंग आकर मामूँ के मकान के पास रहना छोड़ दिया और यह सोचकर कि वह मुझे गिरी नज़रों से न देखें अमीर ख़ाँ की हवेली में उठ आया। अमीर ख़ाँ मुहम्मद शाही ज़माने के एक बड़े अमीर थे और इलाहाबाद की सूबेदारी और हुकूमत की रग उनके हाथ में थी। उनका तख़ल्लुस "अन्जाम" था और बहुत मशहूर शायर थे। उन्हीं ने मुहम्मद अली रोहीला को हराकर उसे क़ैद किया था और बादशाह को निकाल लाये थे। यह आख़िर में अपने नौकर के हाथों दीवानेख़ास के दरवाज़े पर मारे गये।

एमादुलमुल्क ने थोड़े ही दिन बाद मरहठा सरदारों को अपने साथ ले भारी फौज के साथ सफ़दर जंग की मदद करने के जुर्म में सूरजमल पर चढ़ाई कर दी जो एक बड़ा ज़मींदार था। इन लोगों ने चारों ओर से उसके क़िले को घेर लिया मल्हारराव का बेटा इसी लड़ाई में मारा गया। सूरजमल की सफ़दर जंग से लिखा पढ़ी थी और इस लड़ाई की वजह यही थी, बादशाह भी शहर से बाहर निकला और यमुना से बीस कोस उधर सिकन्दराबाद के क़रीब डेरे डाले। एक शाम यह ख़बर उड़ी के एमादुलमुल्क ने सूरजमल से गठजोड़ कर लिया है और वे शाही

लश्कर को लूटने आया चाहते हैं। बादशाह ने सम्सामुद्दौला और दूसरे नमकहरामों के कहे में आकर जो बख़्शी के लोगों से मिले हुये थे अपना सब कुछ छोड़ छाड़ रास्ता लिया। सुबह होते-होते दक्खनी फ़ौज आ गई और सारे लश्कर को लूट लिया। फिर भागने वालों का पीछा करते आये और दरिया के उधर पड़ाव डाल दिया।

अब इन्तज़ाम यह हुआ कि बादशाह का कोई आदमी क़िले में न रहे अगरचे वह नमक हराम पहले ही निकल भागे थे। इसके बाद एमादुलमुल्क वज़ीर बना। बुद्धू वज़ीर डर के मारे कोने में जा छुपा और बादशाह परेशान होकर बाग़ की ओर निकल गया। कुछ देर बाद बदमाशों ने लूटमार शुरू कर दी। बादशाह की आँखों में सलाई फेर कर बहादुर शाह के पोते को आलमगीरे सानी का नाम देकर बादशाह बना दिया। ऐसे लोगों का अमल दख़्ल हुआ जो कमीने और किसी काम के न थे। जो कुछ हुआ ठीक नहीं हुआ। सम्सामुद्दौला जो निरा अहमक़ था अमीरुल उमरा बन बैठा। मैं इस दुखभरे सफ़र में अहमद शाह के साथ था। वहाँ से लौटकर तनहाई में बैठा रहा।

यही हाल चाल था जब सफ़दरजंग की मौत हुई और सूबेदारी उसके बेटे शुजाउद्दौला को मिली। मेरे मामू ख़ान आरज़ू लालच के मारे निकल पड़े और यह ख़्याल सर में लिये उसके लश्कर में पहुँचे कि इसहाक़ ख़ाँ शहीद के भाई वहाँ हैं। पुरानी नातेदारी को सोच कर कुछ कर देंगे। मगर कुछ हाथ न आया। ज़माने की लात खाई और वहीं मर गये। उनकी मिट्टी वहाँ से लाकर उन्हीं की हवेली में दफ़न कर दी गई।

राजा जुगुल किशोर

बाद दो तीन महीनों के राजा जुगुल किशोर जो मुहम्मद शाही ज़माने में बंगाल के वकील थे मुझे मेरे घर से ले गये और अपने शेर बनाने को दिये। मगर मैंने उनको इस लायक़ न पाया और उनके ज़्यादा अशआर काट दिये।

राजा नागरमल

इस बीच राजा नागरमल जो एक ज़माने में दीवान थे वज़ीर के नायब बने और महाराजा उम्दतुलमुल्क का ख़ेताब पाया। चूँकि वह शहर के दुखी लोगों को अपने घर में पनाह देते और उनका दुख दर्द सुनते थे इसलिये बहुत से लोग उनके दुश्मन हो गये। मगर वह चौकन्ने रहते और उनके आदमी भी पूरी देखभाल करते। इसलिये जलने वालों की धोका-धड़ी न चल पाती। इसी ज़माने में सम्सामुद्दौला जो मीर बख़्शी थे मर गये और उनकी जगह उनका जाहिल बेटा मीर बख़्शी हुआ।

शाह दुर्रानी का दूसरा हमला

इसी ज़माने में शाह दुर्रानी ने हमला किया। वह इससे पहले सरहिन्द में हार कर भाग चुका था। लेकिन हिन्दुस्तान जीत लेने का ख़्याल उसे बेचैन किए हुए था। वह एक भारी फ़ौज के साथ लाहौर तक पहुँच गया। वहाँ के रहने वालों को लूटता मारता किसी रुकावट के न होने की वजह से शहर की तरफ़ बढ़ा। मोइनुलमुल्क पहले ही हार कर मर चुका था और उसके हमले का शोर सुनकर लोगों के होश-हवास पहले ही उड़ चुके थे। बादशाह और वज़ीर के बनाये कुछ न बना। आख़िर उसके स्वागत के लिए आगे बढ़े और क़ैद हो गये। राजा नागरमल सादउद्दीन ख़ाँ और दूसरे अमीरों के साथ अपनी हिफ़ाज़त के लिए सूरजमल के क़िले में चला गया। क़रीब एक महीने तक दिल्ली वालों ने सख़्तियाँ झेलीं। कुछ दिनों दिल्ली में रहने के बाद शाह दुर्रानी ने आलमगीर को दिल्ली का तख़्त देकर वज़ीर के साथ अकबराबाद की तरफ़ क़दम बढ़ाया। उसकी फ़ौज़ ने फिर लूटमार शुरू कर दी। इस लूटमार की वजह से मथुरा जो आगरा से अट्ठारह मील पर एक आबाद शहर था तबाह व बरबाद हो गया। इतने लोग क़त्ल हुए कि हवा ख़राब हो गई।

ताऊन[1] के डर से दुर्रानी ने यकबयक सूरजमल की ओर जाने का इरादा छोड़ दिया और मुहम्मद शाह की लड़की से शादी करके बाहर ही बाहर वापस चला गया। अमादुल मुल्क आगरा के इलाक़े में रहा और नजीबुद्दौला जो सफ़दर जंग की लड़ाई में वज़ीर का नौकर हुआ था तरक़्क़ी कर के मीर बख़्शी हो गया और इस तरह हुकूमत का सारा इन्तज़ाम उसके हाथ में आ गया।

राजा नागरमल का बहाने से दकन की फ़ौज को बाहर निकाल देना

राजा नागरमल ने दकन के सरदारों से मिलकर उन्हें वज़ीर और अहमद ख़ाँ के साथ नजीबुद्दौला पर हमला करने के लिए उकसाया। जब यह लोग पहुँचे तो नजीबुद्दौला ने शहर के दरवाज़े बन्द कर दिए और बैठ रहा। दोनों तरफ़ से तोपे चलनें लगीं कुछ सरदारों ने शहर में लूटमार शुरू कर दी। राजा जो वज़ीर की नेकनामी की ख़्वाहिश रखता था इन लोगों को लूटमार से रोकने के लिए निकल खड़ा हुआ। उसनें इन सरदारों से कहा कि शहर में लूटमार करना बेहूदगी है और इस ग़लत काम से दक्खिनी फ़ौज बदनाम हो जायगी। तुम लोगों को लूटमार नहीं करनी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि शहर बरबाद हो जाय और तमाम दुनिया में बदनामी हो। अच्छा यही है कि रोहिलों को बहला-फ़ुसला कर सुलह कर ली जाय और शहर को आबाद रखा जाय। आख़िर नजीबुद्दौला ने सुलह कर ली और शहर से बाहर निकलकर सहारनपुर चला गया जहाँ का वह फ़ौजदार था। वज़ीर और दूसरे लोग शहर में दाख़िल हुए दक्खिनी फ़ौज को वापस कर दिया गया। राजा के लड़के बहादुर सिंह को तोपख़ाने का दरोग़ा बनाया गया और अहमद ख़ाँ बंगश मीर बख़्शी हुआ।

१—प्लेग

मीर का राजा के दरबार में पेश होना

एक दिन मैंने राजा जुगुल किशोर के सामने अपनी परेशानियाँ बयान कीं वह बहुत शर्मिन्दा हुआ और बोला कि जो कुछ मेरे पास है वह आपका है। मैं जो कुछ कर सकूँगा आपके लिए वह सब करने में मुझे कोई हिचकिचाहट न होगी। एक दिन वह सवार होकर राजा नागरमल के घर गया और उससे मेरा ज़िक्र किया। राजा ने मुझे बुलाया मैं गया और उससे मिला। उसने बड़ी मेहरबानी का बरताव किया और मुझसे कहा कि मेरे पास जो कुछ है वह हाज़िर है। तुम्हारा हिस्सा तुम्हें ज़रूर मिलेगा। उसकी इस बात से मुझे इत्मीनान हुआ और मैं चला आया। दूसरे दिन शेर सुनने-सुनाने का मौक़ा मिला। उसने कहा कि 'मीर' का हर शेर मोतियों की लड़ी जैसा है। मुझे इस जवान का अन्दाज़ बहुत पसन्द आया। कुछ दिनों तक इसी तरह आता-जाता रहा, लेकिन कुछ हाथ नहीं आया चूँकि मेरी हालत बहुत ख़राब हो चुकी थी इस लिये बहुत परेशान हुआ। एक दिन सुबह की नमाज़ के बाद उनके दरवाज़े पर पहुँचा, वहाँ के चोबदारों का अफ़सर जिसका नाम जयसिंह था सामने आया और मुझसे कहने लगा कि, "यह मिलने का कौन सा वक़्त है?" मैंने जवाब दिया कि ग़रीबी की वजह से बहुत ज़्यादा परेशान हो गया हूँ। उसने कहा कि, "लोग तुम्हें फ़क़ीर कहते हैं। क्या तुम नहीं जानते कि ख़ुदा के हुक्म के बग़ैर एक पत्ता भी नहीं हिलता? यहाँ अमीरी की वजह से किसी को किसी की परवाह नहीं है। सब्र से काम लो और ख़ुदा का शुक्र करते रहो। हर काम अपने वक़्त पर होता है। यहाँ थोड़ी सी देर है। मेरे ख़्याल में तुम्हें राजा के बड़े बेटे से मिलना चाहिए।" मैं शर्मिन्दा होकर वहाँ से लौट आया।

एक रात जयसिंह के इशारे पर राजा के बड़े बेटे राय बहादुर सिंह के यहाँ गया। वहाँ एक चौकीदार ने बाहर ही रोक दिया और कहा कि इस वक़्त मुलाक़ात नहीं हो सकती। लाचार वापस लौट आया। दूसरी बार ऐशा की नमाज़ के बाद फिर गया। देखा कि चौकीदार मौजूद नहीं है।

पूछने पर मालूम हुआ कि आज उसके सर में इतना दर्द है कि बैठ भी नहीं सकता। मैंने समझ लिया कि यह ख़ुदाई मदद है। फ़ौरन दीवान-ख़ाने में दाख़िल हो गया देखा तो शेर-व-शायरी की मजलिस जमा थी। वहाँ ख़्वाजा ग़ालिब भी मौजूद थे। जिनसे मेरी जान पहचान थी। उन्होंने राय बहादुर सिंह से पूरी तरह मेरी हालत बयान की और कह सुनकर मेरी तनख़्वाह मुक़र्रर करा दी जो मैं एक साल तक पाता रहा। एक रात फिर मैं राजा की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। उन्होंने मुझे एक साल की पूरी तनख़्वाह दी और कहा कि कभी-कभी मुझसे मिलते रहा कीजिए। उसी दिन मैं एशा की नमाज़ के बाद नौकरों की तरह उनके बाग़ में हाज़िर हुआ और रात गए तक उनके साथ रहा। इस ख़िदमत से सिर्फ़ इतना हुआ कि मेरा वक़्त अच्छी तरह गुज़रने लगा।

अब मैं यह कहानी एक दूसरे अन्दाज़ से बयान कर रहा हूँ। दकन के सरदार हिन्दोस्तान को अपनी जायदाद समझते थे और बादशाह से लड़ने का ख़्याल उनके सर में समाया हुआ था। उन्होंने जब यह सुना कि शाह दुर्रानी का लड़का तहमूरशाह और फ़ौज का सरदार जहाँ ख़ाँ बहुत कम फ़ौज के मालिक रह गये हैं तो उनके पुश्तपनाहों से बेफ़िक्र होकर हमला करते हुए लाहौर तक पहुँच गये। बादशाह की थोड़ी सी फ़ौज ने लड़ाई लड़ने की हिम्मत न की और भाग निकली। ये लोग अटक के बारूदख़ाने तक कब्ज़ा करके अपने वतन यानी दकन की ओर चले गये। उन लोगों ने उस इलाक़े की देखभाल के लिए एक सरदार को जिसका नाम साहबा था छोड़ दिया।

कुछ बिपताओं का मुख़तसर बयान

चूँकि मुझे इस ज़माने में गुज़रने वाली विपताओं को मुखतसर तौर पर बयान करना है इसलिए सिर्फ़ मैं इशारा करना चाहता हूँ। ये विपतायें अनगिनत हैं—जैसे इबादुल मुल्क का शुजाउद्दौला से इख़्ते-लाफ़ ज़ाहिर करना और इन बीच सुलह कराने के लिए राजा नागर-

मल की कोशिशें, कुछ लोगों का ख़िराज अदा करने से इन्कार करना वज़ीर, राजा और नजीब खाँ की बहादुरी के हाथों इनकी हार, वज़ीर का अपने ससुर मोइनुलमुल्क की जायदाद को ज़ब्त करने के लिए लाहौर जाना, वहाँ के सूबेदार की बीवी को शहर से बाहर लाना और आख़िरकार महमूद कशमीरी को क़त्ल करना, सितारकुली खाँ कश्मीरी का मारा जाना , कुछ ऐसे लोगों के हाथों जिन्होंने लूट मार को पेशा बना लिया था दिल्ली और दिल्लीवालों की तबाही व बरबादी, इन गधों का ख़ुदाई इन्तेक़ाम से ग़ाफ़िल रहना और आलीगौहर का दकन के सरदारों के साथ बादशाहत की लालच में बाहर जाना और अंग्रेज़ों के हाथ में गिरफ़्तार होना, कुछ दिनों के बाद बादशाह की ख़िदमत में हाज़िर होने के लिए उसका दिल्ली लौटना, उसकी पेशवाई के लिए राजा का बाहर जाना, लोगों का ग़दर करना उसका ज़ख़्मी होकर पूरब की तरफ़ भाग जाना और ज़माने की सख़्तियाँ झेलना। उसका बादशाह होना और इन्तज़ामउद्दौला ख़ानख़ाना का क़ैद करना और क़िले और बादशाहों का इस तरह निकलना जिसे न लिखना ही ज़्यादा बेहतर है। यह सब बातें इतनी दिल को तकलीफ़ देने वाली हैं कि मेरी क़लम इन्हें पूरी तरह नहीं लिख सकती। इसीलिए मैंने मुख़्तसर तौर पर यह तमाम विपतायें बयान कर दीं।

दक्खिनी फ़ौज की दिल्ली पर चढ़ाई

अभी ये तमाम बलायें पूरी तरह दूर भी नहीं हो पाई थीं कि एक ताज़ा फ़ितना उठ खड़ा हुआ, यानी एक सरदार जिसका नाम जंगू था दकन से एक बड़ी फ़ौज के साथ दिल्ली पहुँच गया और शहर के बाहर पड़ाव डाल दिया। इस नये फितने की वजह से लोगों के दिल दहल गये, एक कयामत बरपा हो गई। रईसों के चेहरे पर हवाईयाँ उड़ने लगीं। बादशाह और वज़ीर दोनों बदहवास हो गये। उस लश्कर का एक सरदार जिसका नाम दत्ता था और जो बड़ा ताक़तवर जवान और

उस बहादुर सरदार का मदारुलमोहाम[1] था अपने आप नजीबउद्दौला की तरफ़ दौड़ पड़ा जो गंगा के किनारे एक जगह अपना पड़ाव डाले हुए था। वहाँ बड़ी सख़्त लड़ाई हुई।

यहाँ यानी दिल्ली में लोग वज़ीर के घर जमा हुए और यह सोचने लगे कि अगर यह ज़बरदस्त फौज शहर में दाख़िल हो गई तो क़यामत आ जायेगी, दुनिया तबाह व बरबाद हो जायेगी और दिल्ली हमेशा के लिए वीरान हो जायेगी। इस लिए बेहतर यही है कि उसके साथ मिल कर नजीबउद्दौला से छुटकारा हासिल किया जाय और अगर यह न हो सके तो भी किसी न किसी तरह सुलह कर ली जाये। यह तै पाया कि वज़ीर बाहर निकले और दरिया के उस किनारे अपना ख़ेमा लगा दे। वज़ीर ने उनकी राय पर अमल किया और बादशाह के पास भी इसी ग़रज़ से गया। बादशाह ने अपनी बीमारी का बहाना करके उसे लौटा दिया। ये लोग चूँकि बादशाह से मुतमईन न थे इसलिए इन्होंने आपस मे तै किया कि शहर जायें और बादशाह को दरमियान से हटा दें; साथ ही साथ इन्तेज़ामउद्दौला को भी जिन्दा न छोड़ें।

धोके से आलमगीर द्वितीय और इन्तज़ामुद्दौला खानखाना का क़त्ल

उसी रात राजा दरिया के उस पार चला गया। सुबह के वक़्त वह स्याह दिल लश्कर से अलग होकर शहर आये और बादशाह के सामने जाकर यह क़सम खाई कि हम लोग वज़ीर के मुख़ालिफ़ हैं लेकिन उसके डर से उसका साथ दे रहे हैं। अब एक अच्छा मौक़ा हाथ आया है। अगर हूज़ूर चाहें तो उसे इस्तेमाल करें। सीधे सादे बादशाह ने जिसे इन लोगों की धोखेबाज़ी की खबर नहीं थी पूछा, कि यह मौक़ा कौन सा

१—वज़ीर या इन्तजाम करनेवाला।

है ? इन लोगों ने उसे बताया कि, "एक बहुत बड़ा फक़ीर जिसने दुनिया छोड़ दी है फ़िरोज़शाह के क़िले में दो तीन दिन से आया हुआ है। कल वह वापस चला जायेगा। अगर कल आप उससे मिलें तो यक़ीन है कि उसकी दुआ से हमलोग इस बला से छुटकारा पायेंगे और वज़ीर पर ग़ालिब आ जायेंगे।" बादशाह इन लोगों के धोके से बेख़बर था। उसने वादा कर लिया कि, "उस फ़क़ीर से मिलने ज़रूर चलूँगा। आख़िर शाम के क़रीब उसे सवार करा कर क़िले में ले गये और वहाँ उस बेगुनाह को छूरी मार कर क़त्ल कर दिया और उसकी लाश को क़िले की दिवार के नीचे फेंक दिया। शाम के बाद वहाँ से वापस लौटे। ख़ानख़ाना उस वक़्त नमाज़ पढ़ रहा था। उसके गले में रस्सी डाल कर उसे घसीटा और बड़े ज़ुल्म के साथ उसे क़त्ल कर के उस लाश को लोगों से छुपा कर दरिया में डाल दिया। बादशाह की लाश दिन भर उसी जगह मिट्टी पर पड़ी रही। आख़िर उसके वारिसों ने हिम्मत की और रातों-रात उसे दफ़न कर दिया। इन लोगों के डर से बादशाह के वारिस मातम भी न कर सके। दूसरी सुबह ये लोग क़िले में दाखिल हुए और एक जवान शहज़ादे को जिसका नाम शाहजहाँ था उन्होंने तख्त पर बैठा कर उस के सामने नज़रें पेश कीं। आलमगीर द्वितीय ने सात साल तक दिल्ली पर राज्य किया।

दुर्रानियों का दकनवालों को हरा देना

जब इन लोगों को बादशाह और इन्तज़ामुद्दौला के क़त्ल से छुटकारा मिला तो इन्होंने वज़ीर को आगे बढ़ने का इशारा किया। वह भी मंजिलें तै करता दकन की फ़ौज से जाकर मिल गया और नजीबउद्दौला के साथ सख़्त लड़ाई होने लगी। इन लोगों को लड़ते हुए अभी एक हफ़्ता भी न गुज़रा था कि यह ख़बर मिली कि नादिरशाही फ़ौजों ने अटक पहुँच कर साहबा को हरा कर भगा दिया है। दकन के सरदारों ने नजीबउद्दौला की लड़ाई छोड़ दी और परीशान हाल नादिरशाही फ़ौजों को रोकने के लिए निकल खड़े हुए और पानीपत के सामने जौन पार

करके डेरा डाल दिया। उन्हें रास्ते में बड़ी सख़्त तकलीफ़ों का मुक़ाबला करना पड़ा, लेकिन इन तकलीफ़ों से बेपरवाह अपनी क़ूवत पर घमंड करते हुए यह लोग करनाल तक पहुँच गये जो एक मशहूर क़सबा है और जहाँ शाहशरफ़ बूअली कलंदर की मशहूर दरगाह है। इन लोगों ने वहाँ पड़ाव डाल दिया। शाम को यह ख़बर मिली कि नादिरशाही लश्कर भी दरिया तक पहुँच गया है। इन लोगों ने भी अपना लश्कर तैयार किया। दूसरे दिन सूरज निकलने से पहले आठ हज़ार सवारों का एक जंगजू लश्कर अपने एक सरदार की कमांड में देकर मुक़ाबले के लिए भेजा। जब दोनों लश्कर आमने सामने खड़े हुए तो एक ही हमले में उन में से बहुत से लड़ाई में काम आ गये। वे बहादुर जो पहाड़ की चोटी की तरह अटल थे ज़मीन पर आ रहे। बड़ा बोल बोलने वालों के जबड़े टूट गये। ख़ूँख़ार दुर्रानियों ने कुछ इस तरह हमला किया कि ज़्यादातर लोगों का ख़ून बहा दिया। दक्खनी लश्कर के फ़ौजी डर के मारे काँप रहे थे। अगर कहीं दुर्रानी फ़ौज लश्कर पर टूट पड़ती तो उसी दिन लड़ाई का फ़ैसला हो जाता और हम में से एक भी सलामती के साथ शहर तक न पहुँच पाता। दक्खनी फ़ौज तबाह होकर भाग निकली और वह लोग लड़ाई ख़त्म करके दरिया पार कर गये।

बादशाही फ़ौजें पूरब की तरफ़ आगे बढ़ गईं और नजीबउद्दौला भी उनके साथ शामिल हो गया। दकन वालों ने वज़ीर को लश्कर और शहर की हिफ़ाज़त के लिए छोड़ दिया और ख़ुद दरिया के किनारे-किनारे छः मंज़िलों पर जाकर ख़ेमा डाल दिया। यहाँ वज़ीर ने शहर की हिफ़ाज़त का इन्तज़ाम किया और मोर्चे बनाये और दाराशिकोह की हवेली को जो दरिया के किनारे थी राजा के हवाले करके नये बादशाह शाहजहाँ से मुलाक़ात करने चला गया।

चार दिनों के बाद नजीबउद्दौला और दुर्रानियों की फ़ौज मंज़िलों पर मंज़िलें तै करती दरिया के किनारे पहुँच गई। लड़ने का बहाना ढूँढ़ने वाले बहादुर सवारों ने सज़ा देने का इरादा किया। रोहिला प्यादों

ने आगे क़दम बढ़ाया और जंग छेड़ी और सख़्ती के साथ मैदान में डट गये। इस तरफ़ से दत्ता जो कि दक्खनी फ़ौज का सरदार था अपने फ़ौजियों के साथ उनके लश्कर के एक हिस्से पर टूट पड़ा। पहली ही तोप जो उस तरफ़ से दाग़ी गई दत्ता तक पहुँची और उसकी बग़ल को ज़ख़्मी कर दिया। दक्खनियों के होश व हवास उड़ गये। उसकी लाश को उन्होंने दरिया के किनारे छोड़ा। दुर्रानी दरिया के इस पार आये और लूटमार में मशग़ूल हो गये और ये लोग मैदान से भाग निकले। वज़ीर ने अपने सरदारों को मोर्चे पर छोड़ा और ख़ुद दकनवालों के साथ रवाना हो गया। बदक़िस्मती ने बुरे दिन दिखाये, दुर्रानियों ने भागनेवालों का पीछा किया और उनमें से ज़्यादातर को मौत के घाट उतार दिया। वहाँ से वापस लौटकर वे शहर की बर्बादी में जुट गये।

दुर्रानियों के हाथों शहर की बर्बादी

राजा ने शाम को शहर से बाहर आकर सूरजमल के क़िलों की तरफ़ रुख़ किया और सलामती के साथ वहाँ पहुँच गया। मैं अपने घरवालों की हिफाज़त के लिए शहर ही में रह गया। शाम के बाद यह एलान हुआ कि बादशाह ने सब को पनाह दे दी है। रियाया को परीशान नहीं होना चाहिये। लेकिन अभी थोड़ी ही रात गुज़री थी कि लूटमार करने वालों ने ज़ुल्म व सितम पर कमर बाँधी। शहर में आग लगा दी, घरों को जलाया और सामान ढोने लगे। दूसरे दिन वह सुबह आई कि जो क़यामत की सुबह थी। दुर्रानियों की सारी फ़ौज और रोहीले सिपाही क़त्ल व ग़ारतगरी में मशग़ूल हो गये उन्होंने दरवाज़े तोड़ डाले। लोगों को बाँधा, ज़्यादातर लोगों को जला दिया या सर काट लिये। ग़रज़ एक दुनिया को ख़ाक व ख़ून में मिला दिया। तीन दिन तक रात दिन क़यामत का यह सिलसिला जारी रहा। खाने और पहनने की चीज़ों में से कोई चीज़ बाक़ी न रही। छतें ढाह दीं, दीवारें गिरा दीं। दिल जला दिये, सीनों को ज़ख़्मी कर दिया। उन सख़्तदिलों ने

अमीरों को बेइज़्ज़त किया। शहर के फ़क़ीर तबाह हो गये। बुज़ुर्ग लोग पानी की एक-एक घूँट को तरस गये। न बैठने को जगह रह गई और न किसी के पास खाने को एक कौड़ी। शरीफ़ और वफ़ादार लोग नंगे हो गये। कुनबेवाले बेघरबार हो गये। ज़्यादातर लोग इस बला में गिरफ़्तार होकर गली-गली बेइज़्ज़त हुए उनकी औरतें व बच्चे पकड़े गये। शहर में हर जगह लोगों का गरोह लूटमार में मशगूल नज़र आता। ज़्यादातर लोग तबाह हो गये। बहुतों की जान होटों तक पहुँच गई। यह लोग ज़ख्म लगाते और गालियाँ देते। दौलत छीनते और सलाख़ों से दाग़ते जिस शख़्स पर टूटे लंगोटी तक छीन ले गये। एक दुनिया इस दुनिया से नामुराद चली गई। हज़ारों की इज़्ज़तबरबाद हो गई। नये शहर में हलचल मच गया। तीसरे दिन अमन क़ायम हुआ अनज़ला ख़ाँ इन्तज़ाम करने के लिए पहुँचा जिसकी टोपी और अंगरखा देखकर लोगों को कुछ ढारस बँधी। उसके फ़ौजियों ने लूटमार करने वालों को शहर से बाहर निकाला और इन्तज़ामात में जुट गये और वह बेरहम लोग पुराने शहर पर टूट पड़े। वहाँ भी उन्होंने एक दुनिया को क़त्ल किया। सात-आठ दिनों तक यह हंगामा जारी रहा। किसी के घर में एक दिन के लिए भी रोटी कपड़ा नहीं रह गया। मर्दों की टोपियाँ छिन गईं, औरतों के रुमाल छिन गये।

चूँकि तमाम रास्ते बन्द कर दिए गए थे इसलिए लोग दिन भर ज़ख्म खाते फिर रहे थे। एक बड़ी संख्या ऐसे लोगों की थी जिनका ठंडक के मारे दाँत पर दाँत जम गया और इस तरह मर गए। डाकुओं ने बड़ी बेरहमी का बरताव किया। लोगों को बेइज़्जत किया। भूखी आँख वालों से अनाज छीन लिया और ज़बरदस्ती उसे ग़रीबों के हाथ औने-पौने बेच डाला। लूटमार का शोर आसमान तक पहुँच गया। लेकिन उस बादशाह को जो ख़ुद फ़क़ीर हो गया था कोई ख़बर नहीं हुई। क्योंकि वह अपने हाल में खोया हुआ था। कितने तबाह घर लोगों ने उसी वक़्त जबकि शहर में आग लगी हुई थी बनबास ले लिया और सुबह

के चिराग़ की तरह रास्ते ही में ठंडी हवा के हाथों जान दे दी। बहुत से बेकसों को इन स्याह दिलों ने पकड़ लिया और क़ैदी की तरह अपने लश्कर में ले गए। चूँकि वे ज़ालिम थे इसलिए उन्होंने उन पर भी ज़ुल्म किया। उनको लूटा, उनके सरों पर डंडे मारे, उनकी औरतों के बाज़ू मसले, तलवारें चलाई और इसी तरह अपनी बड़ाई का इज़हार किया। शहर वालों से इसलिए कुछ भी न हो सका कि उनकी हिम्मत जवाब दे चुकी थी। कोई बेचैन फिरता था। कोई घबराया-घबराया दर-दर की ठोकरें खा रहा था। हर दरवाज़े पर अँधेरा था। हर गली में कचहरी क़ायम थी। लोग पकड़े जा रहे थे। उनसे पूछताछ हो रही थी। हर तरफ़ खून बह रहा था, हर मोड़ पर सज़ा दी जा रही थी, पैरों में बेड़ियाँ डाली जा रही थीं, गालों पर तमाचे लगाए जा रहे थे। लोगों के मुँह डर की वजह से उतरे हुए थे और फ़ौजी उनसे मज़ाक़ कर रहे थे। घर अँधेरे हो गए थे, गलियाँ वीरान हो गई थीं। सैकड़ों आदमी डंडे की मार से मर गए, कपड़े खून में तर हो गए, लेकिन किसी का हाल नहीं पूछा। एक दुनिया ज़ुल्म व सितम के हाथों मौत के घाट उतर गई, लेकिन किसी के कान पर जूँ नहीं रेंगी। पुराने शहर की ज़मीन जिसको ताज़ा दुनिया कहते थे अजीब मंज़र पेश करने लगी यानी जहाँ भी नज़र जाती मरने वालों के सर, सीने, हाथ और पैर पड़े दिखाई देते। घरों में आग लगी हुई थी, लोगों के सीने आग पूजने वालों के मंदिर दिखाई देते यानी जहाँ तक आदमी की नज़र जाती कोयला ही कोयला नज़र आता। इस आफ़त में जो मर गया उसे आराम मिल गया; जो बाक़ी रहे उसे तकलीफ़ उठानी पड़ी। मैं यूँही फ़क़ीर था और ज़्यादा फ़क़ीर हो गया। मेरी हालत ग़रीबी और मुफ़लिसी की वजह से और खराब हो गई। मेरी वह कुटी जहाँ बादशाह भी आया करते थे मिसमार हो गई। ग़रज़ कि इन बेमुरव्वतों को जो कुछ मिल सका लूटकर ले गए और शहर के सब लोग बेइज़्ज़त होकर मौत के घाट उतर गए।

दुर्रानियों से दकनवालों की झड़प

अभी इन लोगों ने ज़ुल्म व सितम का सिलसिला बन्द भी न किया था कि यह ख़बर दखन की भागी हुई फ़ौज़ के आने की मिली और यह मशहूर हुआ कि यह फौज़ मेवात के इलाक़े में रहने वाली फ़ौज के साथ मिलकर हमला करने वाली है। दुर्रानी बादशाह यह ख़बर सुनकर शाहजहाँ को जिसे सिर्फ़ चन्द महीने की बादशाही नसीब हुई थी दुबारा बादशाह बना कर और आली घर के लड़के जवाँ बख़्त को उसका वली-अहद मुक़र्रर कर के उनसे निपटने चल दिया। अमादुल मुल्क ने दक्खनी सरदारों का साथ छोड़ दिया और सूरजमल के क़िले में आकर बैठ रहा। जब दुर्रानी फ़ौज मेवात के क़रीब पहुँची और दकनवालों ने देखा कि हमारी तलवारें काम नहीं कर रही हैं और फ़ौजी दुर्रानियों से डर रहे हैं तो उन्होंने लड़ाई का ख़्याल छोड़ दिया और अपने पुराने तरीक़े पर अमल करते हुए शाहजहाँबाद (दिल्ली) लूट कर दरिया पार उतर आए। दुर्रानी भी इनका पीछा करते हुए शहर के क़रीब पहुँच गए और डेरा डाल दिया। फ़ौज का सरदार जहाँ खाँ आगे बढ़ कर सिकन्दराबाद के क़रीब उनसे उलझ गया। बादशाह भी थोड़ी देर बाद तीन हज़ार सवारों के साथ उससे जा मिला। उधर के सरदारों ने मुक़ाबले की ताब न लाकर दकन के एक सरदार के हाथों में कमान दे दी और ख़ुद भाग निकले। उस बहादुर ने मुक़ाबला किया और क़त्ल हुआ। इसके बाद किसी और ने मुक़ाबले की हिम्मत न की और दुर्रानी फ़ौजियों का सामना करने की ताब न लाकर वह लोग भी भाग गए। बादशाह ने एक मशहूर क़सबे कोल तक उन लोगों का पीछा किया। भागनेवालों ने सूरजमल के क़िलों में पनाह ली और दो तीन दिन बाद वहाँ से आगे निकल गए। बादशाही फ़ौज ने इन क़िलों में से एक पर जो जौन के इस तरफ़ था घेरा डाल दिया। किसी ने उन की मदद न की। इसलिए मजबूर होकर क़िलेवाले मौक़ा देख कर एक रात भाग निकले और किसी को बीच में डालकर दुर्रानियों से सुलह कर ली।

अभी शाही लश्कर दोआबा से बाहर भी न निकला था कि यह बात सुनी गई की दकन से एक बड़ा लश्कर लड़ाई के इरादे से आया है और आगरा तक पहुँच गया है। लोगों ने यह भी बताया कि बहुत जल्द यह लश्कर दिल्ली पहुँच जायगा। नजीबुद्दौला ने बाज़ पूरबी सरदार जैसे शुजाउद्दौला, अहमद खाँ और हाफ़िज़ रहमत वग़ैरा से बातचीत की और उन्हें एक-एक मुल्क देने की लालच के ज़रिए जंग पर तैयार कर लिया।

इसी दरमियान मरहठों का सरदार भाऊ एक बड़े लश्कर के साथ सूरजमल के इलाक़े से गुज़रा, वज़ीर और राजा को अपने साथ लेकर शहर पर क़ाबिज़ हो गया। याक़ूब अली खाँ जो दुर्रानी बादशाह के वज़ीर शाह वली खाँ का अज़ीज़ था इस उम्मीद पर कि बादशाही लश्कर दरिया के उस पार मौजूद है और उसकी मदद को आएगा बादशाही क़िले में बैठा रहा और जंग की तैयारी करने लगा। मरहठों ने क़िले को घेर लिया और लड़ाई में जुट गए। उन्होंने बहुत से ऐसे बादशाही महल बरबाद कर दिए जिनकी मिसाल मिलनी मुश्किल है। चूँकि दरिया बरसात की वजह से इतना भरा हुआ था कि उसे पार करना मुमकिन न था इसलिये बादशाह उसकी कोई मदद न कर सका। याक़ूबअली खाँ ने आख़िर राजा से बातचीत की और क़िला उसे देकर बाहर निकल आया। चूँकि पहले से बातचीत हो चुकी थी इसलिए किसी ने उसे रोकने की कोशिश न की!

मैं इस ज़माने में राजा के साथ था। मैंने राजा से कहा कि ज़माने की ऊँच नीच के हाथों मुझे बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ रही है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि इस शहर से बाहर निकलूँ और किसी दूसरी ओर चला जाऊँ। हो सकता है कि वहाँ मुझे इस तबाही से छुटकारा मिल जाए। उन्होंने मेरे साथ क़रीबी लगाव की वजह से मुझे इजाज़त दे दी। अपने घरवालों को साथ लेकर बाहर निकला, चूँकि यह नही मालूम था कि कहाँ जाना है इसलिए ख़ुदा के भरोसे पर चल दिया। तमाम दिन बड़ी

सख़्तियाँ झेलता आठ-नौ मील तक चला। रात एक सराय में पेड़ के नीचे गुज़ारी। सुबह को राजा जुगुल किशोर जिसका हाल लिख चुका हूँ उधर से गुज़रा। हम थके हुए लोगों को ज़मीन से उठाकर वह अपने साथ बरसाना तक ले गया जहाँ हिन्दुओं का बहुत मशहूर मंदिर है। यह जगह सूरजमल के क़िलों से आठ मील इधर एक मशहूर क़सबा है। वहाँ राजा जुगुल किशोर ने हर तरह हम लोगों की ख़ातिर की और बड़ी मुहब्बत का बरताव किया।

मीर का राजा के साथ कामाँ जाना

हम लोग बक़राईद की चाँद रात को राजा जुगुल किशोर के साथ कामाँ गए जो बरसाना से तीन कोस पर राजा जयसिंह के इलाक़े में एक शहर है। मैंने अपने घर वालों के साथ मुहर्रम के दस दिन वहीं गुज़ारे। दसवीं के दूसरे दिन वहाँ से कंभीर चला गया।

यहाँ लाला राधाकिशुन के लड़के बहादुर सिंह ने जो काफ़ी दिनों तक सफ़दरजंग के ख़ज़ानची रह चुके थे अब राजा के साथ थे, मेरी सरपरस्ती की। मैं उसका यह एहसान कभी न भूलूँगा क्योंकि सिवाय अपने दोस्तों के और किसी पर मेरा कोई हक़ नहीं है। कुछ दिनों आराम से रहा और सुकून के साथ रात दिन गुज़रते रहे।

एक दिन खाने पीने के सामान की कमी की वजह से उदास बैठा हुआ था कि एकाएक मेरे दिल में यह ख़्याल आया कि आज़म ख़ाँ अव्वल के लड़के आज़म ख़ाँ से जो मरहूम बादशाह के ज़माने में छः हज़ारी मनसबदार था और मेरे क़रीबी दोस्तों में था, मुलाक़ात करूँ थोड़ी तबियत बहल जाएगी। मैं उससे मिलने के लिए सूरजमल की सराय में गया जो दिल्ली से लुट लुटाकर आने वालों के लिए पनाह की एक जगह थी। उसने मुझे पहचान लिया। मेरी ख़ैरियत पूछी। मैंने जो कुछ गुज़री थी सब सुना दी। सुननेवालों के होश उड़ गए। जब हुक़्क़े और क़हवे का दौर चला तो मैंने यह शेर पढ़ दिया—

इमरोज़ कि चश्म मन व उरफ़ी बहम उफ़्ताद,
बाहम न गुरिस्तेम व गुरिस्तेम व गुज़श्तेम।

(आज जब मेरी और उरफ़ी की आँखें मिलीं तो हमने मिलकर एक दूसरे को देखा रोए और मर गए।)

साथ ही साथ मैंने इसी तरह के कुछ और शेर भी पढ़े और रो दिया। थोड़ी देर के बाद मैंने आज़म ख़ाँ को कुछ परेशान सा पाया, पूछा कि, "यह परेशानी क्यों है?" ख़ान ने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने फिर पूछा तो उसने कहा कि, "दिल्ली में जब कभी तुम आते तो मैं कई तरह की मिठाइयाँ और हलुए लाता और हम लोग साथ बैठकर खाते। आज यह दिन है कि घर में गुड़ भी नहीं कि एक गिलास शरबत ही तुम्हें पिला सकूँ।" मैंने कहा कि, "मेरा यह मतलब नहीं था। मैंने तो सिर्फ़ दिल बहलाने के लिए यह बातें की थीं। वरना तुम जानते हो कि कभी कभी ऐसा भी हुआ है कि मुझे एक रोटी भी नहीं मिली। यह तो वक़्त की बात है। वह ज़माना शरबत और मिठाइयों का था। यह ज़माना मुसीबतें झेलने का है।" ग़रज़ इसी क़िस्म की बातें होती रहीं। अभी ये बातें ख़त्म भी नहीं हुई थीं कि एक औरत सिर पर सेनी लिए दाख़िल हुई और बोली कि सईदउद्दीन ख़ाँ खानसामाँ की बहन ने दुआ कहा है और यह थोड़ा सा हलुआ और मिठाई भेजी है। ख़ान आज़म ने सेनी खोली और हलुए पर नज़र डाली। उसका चेहरा खिल उठा और मुझसे बोला कि, "मैं अपनी क़दर अच्छी तरह जानता हूँ। फ़ाक़ा करते हुए एक उमर गुज़र गई किसी ने एक घूँट पानी और एक टुकड़ा रोटी भी नहीं भेजी, हलवा और मिठाई तो दूर की बात है। आज तुम मेहमान हो। यह मेहमानी तुम्हारे लिए है। थोड़ा सा मुझे दे दो और बाक़ी अपने घर भेज दो।" मैंने कहा कि, "यह बहुत ज़्यादा है मैं इतना बहुत सा लेकर क्या करूँगा?" उसने जवाब दिया कि तुम्हारे लड़के मीर फ़ैज़ अली के काम आएगा। यह कहकर उस अच्छे आदमी ने बड़ी ख़ुशामद के साथ

हलवे की रकाबी और मिठाई की सेनी मेरे घर भेज दी और हँसते-खेलते मुझे रुख़सत किया। दो दिन तक हमलोग उसी मिठाई पर गुज़र करते रहे। तीसरे दिन राजा के छोटे बेटे राय बिशन सिंह ने मुझे बुलाया, मेरी ख़ैर ख़बर पूछी और कहा कि जब तक राजा साहब आवें आप मेरे साथ रहिए। मैंने उसे बताया कि खाने पीने को कुछ नहीं है। उसने कहा घबराइए नही यहाँ सब कुछ है। ख़ुदा सख़ावत के बाग़ के इस नये उगे हुए फूल को हमेशा ताज़ा रक्खे। उसने मेरी ज़रूरत पूरी की और मुझे परेशानी से छुटकारा दिलाया।

पानीपत में मरहठों और दुर्रानियों का टकराव

इसी ज़माने में दिल्ली भर में मशहूर हो गया कि सरहिन्द का फ़ौजदार समद खाँ कुछ ज़मीनदारों और बहुत बड़ी फ़ौज के साथ आ रहा है और नादरी लश्कर का इरादा रखता है। मरहठों के घमंडी सरदार भाऊ ने जो अपने सामने किसी को सेटता नहीं था अपनी ज़रूरत से ज़्यादा असबाब शाहजहाँबाद के क़िले में छोड़ दिया और अपने जोश की लहर में उस तरफ़ चल खड़ा हुआ। उसके दिल में यह बात भी थी कि वज़ीर के पास बहुत सारे जवाहरात हैं और सूरजमल भी एक बड़ा ज़मींदार है। अगर मौक़ा मिल जाय तो इन लोगों से कुछ हथिया ले। राजा नागरमल की उसके सरदारों से दोस्ती थी और इस तरह उसकी नियत का हाल उसे मालूम हो गया। भाऊ ने एक दिन राजा के पास कहला भेजा कि मैं अपने क़ब्ज़े के इलाक़े तुम्हें सौंपता हूँ। चूँकि उसे पहले से यह सब मालूम था इसलिये उसने जवाब दिया कि मैं एक ज़माने से वज़ीर के साथ हूँ। यह अच्छा नहीं लगता कि वज़ीर के हाथ कुछ न आये और मैं अपना उल्लू सीधा कर लूँ। मेरे ख़्याल में यह ठीक रहेगा कि आप उसे भरतपुर की सरदारी दे दें। मैं और सूरजमल दोनों उसके साथ जाएँ और इस तरह से उसे टालकर आपके कहने पर अमल करें। ग़रज़ चापलूसी के ज़रिये उसे टीक-ठाक कर दक्खनियों के रवाना होने के दिन इसी बहाने से वह और सूरजमल लश्कर के साथ

सवार होकर बलमगढ़ में जो शहर से बारह कोस की दूरी पर एक मज़बूत क़िला है बैठ रहे। वज़ीर, उसका सामान और ख़ेमे वग़ैरा आगे बढ़ गये। दक्खनियों ने इनकी बड़ी खुशामद की लेकिन इन लोगों ने कोई बात न सुनी और बादशाह के साथ सम्बन्ध क़ायम कर लिया। दकन का जियाला सरदार अपनी भारी फ़ौज, लड़ाई के हथियार और सामान को देखते हुए इनको किस खेत की मूली समझता? उसने जब यह सुना तो बिगड़ कर कहा कि यह हैं क्या? इनकी हुकूमत का चिराग़ तो ख़ुद टिमटिमा रहा है। मैं इनके भरोसे पर तो दकन से आया नहीं हूँ। जब भी चाहूँगा पलक झपकते इन्हें मिट्टी में मिला दूँगा। इनसे फिर कभी निपट लेने का फ़ैसला करके वह आगे बढ़ा और नजाबत खाँ के रोहिला क़िले पर क़ब्ज़ा करके समद खाँ को मार डाला और उन लोगों को तितर-बितर कर दिया। इस फ़ौज की तबाही ने दकनवालों की हिम्मत और बढ़ा दी। वह वहाँ से वापस लौटे और पानीपत के क़रीब पड़ाव डालकर जम गये और बादशाह की फ़ौज से मैदान की लड़ाई लड़ने की तैयारी कर ली। जब जाना की बाढ़ कुछ कम हुई तो बादशाह पूरब के सरदारों को साथ लिये बड़े जोश के साथ दरिया उस पार आया और मुक़ाबले पर डट गया। अभी लड़ाई छिड़ने में कुछ दिन बाक़ी थे कि गोविन्द पण्डित के एक बड़ी फ़ौज लेकर मरहठों की इमदाद के लिये आने की ख़बर मिली। एक सरदार भारी फ़ौज के साथ बादशाह के लश्कर से अलग होकर उसकी खोज में दौड़ा और अनजाने में उसे मार कर सारा सामान लूट लिया और उसकी फ़ौज को तहस-नहस कर दिया।

इसी बीच कुम्भीर में जहाँ सूरजमल का क़िला है राजा नागरमल आये क़िस्मत की ख़ूबी मैं भी उन दिनों वहीं था। उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि मैं अब तक आपकी राह देख रहा था। अब आप आ गये। मुझे इजाज़त दीजिये ताकि किसी ओर निकल जाऊँ क्योंकि ज़माने की सख़्तियों का मुक़ाबला करने की अब मुझ में

ताक़त नहीं रही है। राजा ने जो मेरी बड़ी सरपरस्ती करता था जवाब दिया कि शायद तुम मौत के जंगल में क़दम रखना चाहते हो, लेकिन जब मैं छोड़ दूँ तब। उसी दिन ख़र्च के लिये कुछ भेजा और मेरा वज़ीफ़ा मुझे एनायत किया।

शाहजहाँबाद चूँकि अब एक खंडहर से ज़्यादा नहीं रह गया था, लोग साल में दो-दो बार उजड़ते, कोई कब तक इस लूट मार से निबाह कर सकता इसलिये राजा यहीं बस गये। यह जगह फिर भी एक सुकून का ग़ोशा थी और यहाँ का रईस भी बड़ा मेहरबान और अच्छी हैसियत वाला था। हम लोग भी उसके साये तले अपना ठिकाना बनाकर बैठ रहे।

अब इन दोनों फ़ौजों का हाल सुनिये, हुआ यूँ कि अगर मरहठे अपने रिवाज़ के अनुसार छापामार लड़ाई लड़ते तो ज़्यादा उम्मीद हो सकती थी कि जीत इन्हीं की होती। उन्होंने छापामार लड़ाई न लड़ते हुए तोपों का घेरा बनाया और बैठ रहे। शाही फ़ौज ने यह जतन किया कि किसी तरह का सामान इन तक न पहुँच सके। इस नाका-बन्दी ने मरहठों को परेशान कर दिया। जब बेचैनी ज़्यादा फैल गई तो मरहठा फ़ौज लड़ाई के लिये उठ खड़ी हुई। मरहठे मोर्चे से निकले और मैदान में अड़े। शाही फ़ौज के वीर भी इन्हें तहस-नहस करने के लिये इन पर टूट पड़े। सिपाहियों ने कन्धे जोड़ कर इन पर हमला बोल दिया और इन पर तीर बरसाने लगे। सूरमाओं ने बन्दूकें तान लीं और गोलियों की बौछार कर दी। कुछ सिपाही तलवारें लेकर कूद पड़े और मरहठों को मूली गाजर की तरह काटने लगे। मरहठों ने भी जोश दिखाया, घोड़ों से उतर पड़े, भारी ज़ख्म खाने और मरने से निडर होकर शाही फ़ौज की तबाही में जुट गये। जैसे-जैसे जंग में तेज़ी आती गई दोनों तरफ़ के बहादुरों का जोश बढ़ता गया। इन्हीं बीच मरहठों का सरदार मैदान में उतरा और शाही फ़ौज के कई दस्तों को मार भगाया। लेकिन जीत तो शाही फ़ौज के नाम लिखी जा चुकी थी। इनकी तमाम

बहादुरी बेकार गई। मरहठे बिफर-बिफर कर हमला करते लेकिन कुछ न होता। इनकी गोलियाँ बेकार जातीं, शाही फ़ौज के किसी आदमी को घायल न करतीं। दूसरी ओर शाही फ़ौज की गोलियाँ सूरमाओं को बुरी तरह घायल कर रही थीं। चुनांचे पहले ही हमले में मरहठों के राजकुमार विश्वास राव के एक गोली लगी। वह घोड़े से गिरा और मर गया। लोग बताते हैं कि इससे मरहठा सरदार भाऊ जो बड़ा शक्तिशाली नौजवान था और जमकर लड़ रहा था जब उसने यह दुर्घटना देखी तो कहा कि अब दकन लौटने का मुँह नहीं रह गया। यह कहकर शाही फ़ौज में घुस गया यानी जान बूझ कर अपने आपको मौत के मुँह में डाल दिया। होशियार मल्हार राव ने जब यह सब देखा तो दो-तीन हज़ार सवार साथ लेकर भाग निकला। बाक़ी तमाम मरहठा लश्कर तबाह हो गया। जो सरदार इस लड़ाई में बच रहे वह भिखमंगों की तरह नंगे सर नंगे पैर आवारा फिरते थे। भागने वाले सिपाहियों के हज़ारों घोड़े और लड़ाई के सामान शहर के इर्द-गिर्द रहने वाले ज़मींदारों के हाथ लगे।

इस क़ौम पर जो बुरा दिन पड़ा उसे किस तरह लिखूँ? हज़ारों बर्बाद सिपाही रोते हुए इस तरह रास्तों से गुज़रते कि उन्हें देखकर रोना आता। गाँववाले चना भुना-भुनाकर एक-एक मुट्ठी उन लोगों को बाँटते और उनके हाल को देखते हुए अपनी हालत पर ख़ुदा का शुक्र अदा करते। ऐसी कमर तोड़ देने वाली हार शायद ही किसी ने झेली हो। बहुत से भूखे मर गये, बहुत से ठंडी हवा में अकड़ गये, जिस फ़ौज को इन लोगों ने क़िले में छोड़ दिया था वह भी शाही फ़ौज के डर से रातोरात भाग निकली। करोड़ों का सामान दुर्रानी सिपाहियों और पूर्वी सरदारों के हाथ लगा। जिसे उन्होंने आपस में बांट लिया। रुपये पैसे के अलावा तोपख़ाना, हाथी, बैल, घोड़े और दूसरे जंगी सामान शुजाउद्दौला वग़ैरा ने हथिया लिये। दुर्रानी जो भिखमंगे थे मालदार हो गये। हर देहाती को सौ ऊँट मिले और हर एक को एक गधे के

बोझ के बराबर सामान मिला। ग़रज़ बड़ी दौलत हाथ आई, लोग फूले न समाते थे।

बादशाह ऐसी बड़ी जीत के बाद जो कि उसके पुरखों को नसीब नहीं हुई थी बड़ी धूमधाम से शहर में आया और इधर उधर के तमाम सरदारों को हुक्म हुआ कि दरबार में आकर हाज़री दें।

राजा नागरमल के पास भी एक ख़त पहुँचा। राजा नागरमल ने यह सोचा कि अब शाह अब्दाली हिन्दुस्तान का बादशाह हो गया है और इस सोना उगलने वाली धरती से वापस न जायेगा। इसलिये इससे हमें मेल रखना चाहिये। यह सोचकर वह दरबार में आये। नजीबउद्दौला ने उनका स्वागत किया और बादशाह की ख़िदमत में उसके वज़ीर शाह-वली ख़ाँ के हाथों पहुँचे। यह मुलाक़ात बड़ी अच्छी हुई। बादशाह ने उन्हें अपनी मुहर दी और उप-मंत्री मुकर्रर किया, चुनांनचे राजा के द्वारा बहुत से बड़ी-बड़ी उम्मीदवारों का काम बना।

शुजाउद्दौला और दुर्रानियों का मिलाप

दुर्रानी वज़ीर ने एक बार राजा से कहा कि शुजाउद्दौला के बाप तुम्हें बहुत मानते हैं। यह अभी बच्चा है और घमंड का शिकार है। यह नहीं समझता कि यह बादशाह है और ज़रा सा खटक जाय तो सारी बड़ाई मिट्टी में मिलाकर रख दे। इसलिये सूझ-बूझ से काम लेना चाहिये इस तरह के घमंड से इसे बड़ी चिढ़ है। वह अगरचे साथ रहने की वजह से कुछ नहीं कहता लेकिन इस पर फूलना नहीं चाहिये। क्योंकि बादशाह और अच्छे लोग दो अजीब गिरोह हैं। उन्होंने न किसी को माना है न मानेंगे। इसलिये अच्छा यही है कि तुम और नजीबउद्दौला जाकर इसे समझाओ वरना कल कुछ हो जाय तो हमें कुछ न कहना। यह दोनों शुजाउद्दौला के पास गये और उसे समझा बुझाकर वज़ीर के पास लाये। उनकी कोशिशों से आपस में मिलाप हो गया और दिलों में जो मैल पड़ गया था दूर हुआ। मैं भी इस काम में इन लोगों के साथ था।

लुटी हुई दिल्ली

एक दिन मैं घूमता फिरता शहर के खंडहरों में हो लिया। हर क़दम पर मुझे रुलाई आती और दुख होता। जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता मेरा दुख भी बढ़ता जाता। मकान पहचाने नहीं जाते थे। न आबादी का पता था, न महलों का निशान और न इनमें रहने वालों की ख़बर।

मैंने जिस शख़्स को पूछा उसे ग़ायब पाया
जिसको ढूँढा, यह सुना, उसका पता कोई नहीं।

घर के घर मिसमार, दीवारें गिरी पड़ीं, खानक़ाहों में फ़क़ीर न मिले, शराबखानों में पीनेवाले न दिखाई दिये, जिस तरफ़ देखिये एक हू का आलम था।

हर ईंट की ज़बान पर था किस्सा दुःख भरा,
क्या कुछ गुज़र गई है यहाँ रहने वालों पर !

न वह बाज़ारों की भीड़-भाड़ थी कि इनका बयान करूँ, न वह बाज़ार में घूमने-फिरने वाले खूबसूरत लड़के थे ! हुस्न कहाँ रह गया कि उसकी खोज करूँ ? इश्क़ में घुलने वाले किस ओर चले गये ? हसीन जवान गुज़र गये, अल्लाह वाले बूढ़ों का पता नहीं, महल लुट गये, गलियाँ मिट गईं हर तरफ़ वहशत बरस रही है ! कहीं इन्सान का नाम व निशान नहीं। यह देखकर मुझे एक उस्ताद की रुबाई याद आ गई।

एक रोज़ जो मैं तूसे के वीराने से गुज़रा,
खंडहरों पर मुझे एक परिंदा नज़र आया।
पूछा कि जो वीराने पर गुज़री है बता दे,
यह सुन के.............

इसी बीच में उस मुहल्ले में आ निकला जहाँ कभी रहता था।

जलसे होते, शेर पढ़े जाते, इश्क़ करता, रातों को रोता, अच्छी शक्लों से प्यार जताता, उनके हुस्न की तारीफ़ें करता, लम्बे-लम्बे बालों वाले महबूबों से बातें करता, उनकी पूजा करता, ज़रा देर के लिये उनसे अलग होता तो बेकल हो उठता, उन्हें बुलाता, उनकी मेहमानदारी करता; ग़रज़ इसी तरह ज़िन्दगी गुज़ारता। पर अब कोई ऐसा जाना पहचाना चेहरा नज़र नहीं आया जिससे दो बातें करता। कोई ऐसा मुनासिब आदमी न मिला जिसके पास जा बैठता। दिल इतना घबराया कि इस गली से बाहर निकला और सुनसान रास्ते पर आ खड़ा हुआ। दुःखभरी निगाहों से इधर उधर देखता रहा, जो कुछ देखता उससे दिल पर बड़ी चोट लगी। आख़िर यह अहद किया कि अब कभी इधर न आऊँगा और जब तक रहूँगा शहर की ओर मुँह न करूँगा।

अब्दाली की वापसी

कुछ दिनों बाद यह तै हुआ कि शाह वली खाँ राजा के साथ जाकर कुछ और इलाक़े जीत ले तो शाही फ़ौज ने जो लूट के माल से अमीर बन चुकी थी, क़िले के दरवाज़े पर इकट्ठा होकर यह ग़ुल मचाया कि हम अपने देश सिधारते हैं। अगर बादशाह रहना चाहे तो रहे। युग बीत गया। हम इसके साथ मुल्क मुल्क की ठोकरें खाते फिर रहे हैं। न बच्चों की सुध, न बीवी की ख़बर। बादशाह ने जब सोचा तो यही समझ में आया कि पराये देश में बिना फ़ौज के नहीं रहना चाहिये। लाचार कंधार को जो उसकी राजधानी थी वापस लौट जाने का फैसला किया। वज़ीर को जो अपना डेरा-खेमा लेकर आगे बढ़ चुका था वापस बुला लिया। इस तरह यहाँ के सरदारों के आगे शर्मिन्दगी उठाई। रवानगी से दो दिन पहले शुजाउद्दौला और राजा को छुट्टी थी। शाहज़ादा जवाँ-बख़्त को शाहआलम का राजकुमार बनाया और शहर का इन्तज़ाम नजीबउद्दौला को सौंप कर चल खड़ा हुआ। रास्ते में ज़ीन खाँ नाम के एक अफ़ग़ानी को जो उसी की क़ौम और क़बीले का सरदार था सरहिन्द की फ़ौजदारी दे दी और लाहौर की ओर बढ़ा। चूँकि इनका घमंड बहुत

बढ़ गया था इसीलिए ख़ुदा ने इन्हें अनसिखों के हाथ से बेग़ैरत कराया। उस इलाक़े में जूलाहों, कम हैसियतों, धुनियों, कपड़ा बेचने वाले, दलालों, बनियों, लुहारों, डाकुओं, किसानों, गरीबों, जंगलियों, बाज़ारियों, कमीनों और मुफ़लिसों की टोली थी। चालीस पचास आदमियों ने इकट्ठा होकर इस लश्कर से टक्कर ली। कभी इस तरह सामने आते कि ज़ख्म पर ज़ख्म खाते लेकिन पीठ न दिखाते और कभी इधर उधर बिखर कर सौ दो सौ अब्दालियों को घेर लेते और मार डालते। हर सुबह फ़ितना उठाते और शाम होती तो चारों ओर से टूट पड़ते। उन्हों-ने लश्करियों के नाक में दम कर दिया था। उनके लिए जान बचा कर भागना दूभर हो गया था। कभी सामने आते और लश्कर पर टूट पड़ते, कभी अँधेरे में शहर पर हल्ला बोल देते और ईंट से ईंट बजा देते। बाल बिखेरे चोटियाँ बांधे लश्कर में घुस आते, रात भर शोर व गुल की आवाज़ आती रहती और दिन भर चीख़ पुकार की गूँज रहती। इन के पैदल सवारों पर तलवार मारते और घोड़े की ज़ीन को ख़ून में डूबो देते। इन के छोटे मोटे सिपाही तीर चलानेवालों को पकड़ ले जाते और तरह तरह की सज़ायें देते। ग़रज़ इन बेइज़्ज़त व बेदौलत लोगों ने इन कमीनों को इतना ज़लील किया कि यह सब सुन कर इर्द गिर्द के सरदारों ने भी अब्दालियों को नज़र से गिरा दिया। अब्दालियों में रुकने की ताक़त न रही। सलामती के साथ भाग जाने को ग़नीमत जान कर, इस शहर का इन्तज़ाम एक हिन्दू को सौंप कर भाग निकले। सिख भी इनके पीछे पीछे लूटते खसोटते दरिया अटक तक आ गये और इन्हें अच्छी तरह सज़ा देकर उस सूबे पर क़ब्ज़ा कर लिया जिसकी आमदनी दो करोड़ रुपये थी। कुछ दिन बाद क़िस्मत के मारे हिन्दुओं को जो शहर में जमा हुए थे मार कर सारे मुल्क को अपना लिया। चूँकि अब आमदनी का कोई दूसरा मालिक न रह गया था इसलिए इन लोगों ने मुल्क को आपस में बाँट लिया और रियाया पर एहसान करने लगे। यानी राज्य करने का गुर न जानने की वजह से किसानों को अँधाधुन्द छूट देने लगे और लूट का माल ख़ुद हथिया लिया।

सूरजमल की बग़ावत

इस वर्ष सूरजमल ने जो बड़ा ताक़तवर ज़मींदार था और जिसके बाप-दादा हमेशा मुग़लिया बादशाहों की इनायतों के साये में फलते-फूलते रहे हैं और दिल्ली व आगरे के बीच की ज़मीनें जिनके क़ब्ज़े में थी मुसलमान रईसों की कमज़ोरी से फ़ायदा उठाकर बग़ावत कर दी और अक्सर जगहों पर क़ब्ज़ा कर लिया। बदमाश क़िलेदार की नमकहरामी की वजह से इसने आगरे का क़िला भी हथिया लिया। शाहआलम शुजाउद्दौला के कहने से जो इन दिनों इसका वज़ीर था भारी लश्कर के साथ उस ओर चल पड़ा। सब में मशहूर हो गया कि बादशाह सूरज-मल को निकालने आ रहा है। ज़मींदार भी शहर व क़िले के बाहर निकल लड़ाई के लिए तैयार हो गये और राजा को लिखा कि तुम्हारा आ जाना ज़्यादा अच्छा है। उन्होंने जो दोस्ती पैदा करने में बड़े तेज़ थे एलची भेजकर सुलह कर ली और इस फ़ौज को वापस कर दिया।

'मीर' आगरे में

इसी सिलसिले में मैं तीन बरस बाद आगरे गया, और बाप चाचा की क़ब्रों पर हाज़िर हुआ। वहाँ के शायरों ने मुझे इस कला का माहिर जानकर अक्सर मुझसे मुलाक़ात की।

वहीं मैंने एक आलिम का शुहरा सुना, मैं गया और उसे देखा, वह एक बेवक़ूफ़ मुल्ला निकला यानी बात का मतलब भी न समझता था। अभी मैं साँस भी न ले पाया था कि उसने बेवक़ूफ़ी की बातें शुरू कर दीं। कहने लगा कि, "इन दिनों ज़्यादातर नौजवान राफ़ज़ी[1] होते हैं और बुज़ुर्गों के बारे में झूठी व मनगढ़न्त बातें कहते हैं। तुम्हारी यह

१—शिया।

ख़ाक़ेशफ़ा[1] की तहबीद जो हम साफ़ दिलवालों के तबियत पर ग़ुबार की तरह है यह बताती है कि तुम भी राफज़ियों के से विचार रखते हो। अगर ऐसा है तो तुम मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।" मैंने उससे कहा कि, "मुझे भी यही डर था। ख़ुदा का शुक्र है कि आप सुन्नी[2] निकले।" मेरी बात उस अहमक़ के पल्ले न पड़ी। वह बहुत ख़ुश हुआ। जब मुझे भी अपनी तरह का जान लिया तो और भी बेसर पैर की उड़ाने लगा। मुझे बड़ी कोफ़्त हुई, उठा और वापस चला आया।

मैं साँझ-सवेरे दरिया के किनारे चला जाता और सैर किया करता। यह जगह बड़ी अच्छी है। उस पार बाग़ है और इस पार क़िला व अमीरों की कोठियाँ। ऐसा लगता जैसे जन्नत की नहर है। मेरी शायरी का शुहरा तो पूरी दुनिया पर छाया था। वहाँ के अल्हड़, हसीन, काली पलकों वाले, अच्छी सज-धज वाले, निगाहों में जँचने वाले और नेक दिल शायर मुझे हर वक़्त घेरे रहते और बड़ी इज़्ज़त करते। दो एक बार पूरे शहर का चक्कर लगाया। वहाँ के आलिमों, फ़क़ीरों और शायरों से मिला। पर ऐसा एक शख़्स भी न मिला जिस से मिल कर बेकल दिल को सुकून मिलता। मैंने सोचा ख़ुदा की शान! यह वही शहर है जहाँ की हर गली में फ़क़ीर, पढ़े लिखे, दीवाने शायर, मुन्शी अक्लमंद, बात करने में मश्शाक़, सोचने में बेज़बान, पढ़ाने वाले शेख़, मुल्ला, हाफिज़, इमाम, अज़ान देनवाले, तकिया सराय, मकान और बाग थे। और आज कोई भी ऐसी जगह नहीं जहाँ ज़रा बैठ कर जी ख़ुश कर सकूँ, ऐसा आदमी नहीं मिलता जिस से कुछ देर हँस बोल सकूँ! मैंने शहर को एक जुनून बढ़ाने वाला खंडहर पाया और अफ़सोस करता लौट आया। इसी तरह चार महीने अपने देश में गुज़रे। लौटते समय आँखें भर आईं और सूरजमल के क़िलों में वापस आ गया।

१—करबला की मिट्टी जहां इमाम हुसैन शहीद हुए।

२—जो रसूल के चारों खलीफ़ा को उनका जानशीन मानते हैं।

मीर क़ासिम और शुजाउद्दौला

वहाँ से लौट कर सुना कि बंगाल के नाज़िम मीर क़ासिम और उन अंग्रेज़ व्यापारियों के बीच जो काफ़ी दिनों से वहाँ रहते थे लड़ाई छिड़ गई है। उस मुल्क की रियाया व ज़मींदार उसके बेइन्तहा ज़ुल्म से तंग आ गये थे। उन्होंने इसका साथ नहीं दिया। आख़िर हार कर अपनी बिखरी हुई फ़ौज व ज़रोमाल लेकर आज़ीमाबाद का यह सूबा भी जो इसी के हाथ में था आ रहा अंग्रेज़ भी पीछा करते आ पहुँचे। उसने चाहा कि शहर बंद कर ले और जंग करे। लेकिन लश्कर ने लड़ाई से मुँह मोड़ लिया। फिर हार हुई। अपना लाव-लश्कर लेकर नौ दस हज़ार आदमियों के साथ शुजाउद्दौला की सरहद तक पहुँच आया। अँग्रेज़ों ने वक़्ती तौर पर जंग से हाथ रोक लिया और आगे क़दम न बढ़ाया। जब वह बनारस के क़रीब पहुँचा तो पड़ाव डाल दिया और वज़ीर को लिखा कि, "मैं आप से मदद की आशा लेकर आया हूँ। अगर मेरा साथ दें और अंग्रेज़ों से लड़ने के लिए आ जायें, जो हमारे धर्म के दुश्मन हैं, तो आपके लश्कर व मुलाज़िमों का ख़र्च मैं अदा करूँगा।" वज़ीर ने लिखा, "पहले तुम यहाँ आओ और बादशाह की मुलाज़मत करो। जो कुछ उनके सामने तय होगा वही किया जायगा।" वह शामत का मारा और साज़िश से बेख़बर अपने सारे सामान, जंगी हथियार और पाँच सौ हाथियों के साथ कुछ ऐसे शातिरों के भरोसे पर जो कि बीच में पड़े थे दरिया से जो शहर के नीचे बहता है पार उतर कर लश्कर में आ गया। इन लालचियों की नज़र जब इसके शाहाना सामान पर पड़ी तो स्थिति डाँवाडोल हो गई! कुछ मक्कारों को भेज कर धोकाधड़ी से उसे गिरफ़्तार कर लिया। दो तीन दिन बाद वज़ीर ने बेवक़ूफ़ों के कहने सुनने पर ज़री नक़द जमा पूँजी जवाहरात हाथी-घोड़ा बैल ऊँट ओढ़ना बिछौना जो कुछ उस के पास था कुछ न रहने दिया। इन बदअहदों ने जो कि बीच में पड़े थे अहद को भुला दिया। अपने लिखे का भी कुछ पास न किया और अपनी बात से फिर गये।

वह इस सोच में आया था कि यहाँ कोई उसे सहारा देगा, यहाँ उलटा लुट गया। जब इसने ज़माने के दुखों से बचने के लिए वज़ीर का दरवाज़ा खटखटाया तो बेगम की सरकार से, जो कि शुजाउद्दौला का ही दूसरा नाम है, कुछ रोज़ीना मुक़र्रर हो गया। अब मैं बाक़ी कहानी यहीं छोड़ कर दूसरा क़िस्सा बयान करता हूँ।

सूरजमल की झड़प

सूरजमल बड़ा ज़ीदार सरदार है। इसका बड़ा लड़का जवाहर सिंह बहुत दिनों से रियासत का ख़्वाब देख रहा था। वह बाप से लड़कर बड़ा ख़ून ख़राबा कर चुका था और ख़ुद भी ज़ख़्मी हो चुका था। इन दिनों वह फ़र्रुख़नगर गया जो शाहजहाँबाद से पश्चिम की ओर तीन मंज़िल के फ़ासले पर एक शहर है और जिसकी सीमा उसके बाप के मुल्क से मिलती है और वहाँ के ज़मींदार से जिसका बाप देहली के क़रीब फ़ौजदार था उलझ गया। झगड़ा बढ़ा। वह भी अपनी बेइज़्ज़ती पर तैयार न हुआ और लड़ाई के मैदान में कूद पड़ा। जब दो महीने गुज़र गये तो सूरजमल भी एक बड़ी फ़ौज के साथ उधर चला और राजा नागरमल से रुख़सत होने आया। राजा ने कहा, "तुम न जाओ। ऐसा न हो कि तुम्हारे जाने से बात और बढ़ जाय। नजीबुद्दौला भी वहीं आस-पास है अगर वह ज़मींदार के मुसलमान होने का पास कर गया तो मुफ़्त की लड़ाई छिड़ जायेगी। फिर उसके पास क़िला भी है और फ़ौज भी, अगर उसने जमकर बचाव किया और काफ़ी दिन लग गये तो तुम्हारी आन-बान जाती रहेगी। रियासत के बारे में लोगों ने लिखा है कि जब तक काम हुकुम अहकाम से चल सकता हो उसमें लड़के को नहीं डालना चाहिये और जहाँ तक हो सके लड़के को चाहिये कि ख़ुद न जाये।" लेकिन जब मौत क़रीब आ जाती है तो इन्सान क़ायदे की बात नहीं सुनता। उसने भी राजा के कहने को नहीं माना और चल दिया। वहाँ पहुँचकर ज़मींदार को क़ैद कर लिया और उसके सिपाहियों ने

ज़ुल्म पर कमर बांधी, वहाँ के शरीफ़ों को लूट कर तबाह कर दिया। ज़मींदार के भाईयों ने जो नजीबुद्दौला के साथ थे उससे फ़रयाद की और अपने कमज़ोर होने का माजरा बयान किया। उसने उनके कहने पर सूरजमल को लिखा कि, "ये लोग अपना किया भुगत चुके हैं। अब इन्हें मुआफ़ी दे दीजिये।" लेकिन उसने एक न सुनी और दिलेरी के साथ शाहजहाँबाद की ओर बढ़ा। नजीबुद्दौला ने शहर के दरवाज़े बन्द कर लिये और ख़ून ख़राबे से बचना चाहा। लेकिन इसे अपनी ताक़त पर बड़ा घमंड था। इसने दरिया पार उतर कर लूट मार शुरू कर दी। नजीबुद्दौला ने बड़ी आदमियत से काम लिया। बार-बार कहला भेजा कि, "मैं तुमसे लड़ना नहीं चाहता। इसीलिये अपनी फ़ौज बाहर नहीं ला रहा हूँ। शहर के लोग बेवजह मारे जायेंगे। यहाँ घेरा डालना अच्छा नहीं।" मगर सूरजमल ने ज़रा भी आदमियत नहीं बरती। उलटा यह कहला भेजा कि, "मैं तो नवाब की फ़ौज देखकर वापस जाऊँगा। अगर जल्दी निकल आयें तो अच्छा है, मुझे और भी काम हैं। अगर नहीं निकलते हैं तो यह फ़ौज जो मेरे वश में नहीं है सुबह शाम में शहर पर टूटा ही चाहती है।" यह सुनकर नजीबुद्दौला ने कहा कि, "यही चाहते हो तो सुबह हम निकलेंगे और तुम्हें अपनी फ़ौज का रंग-ढंग दिखा देंगे।"

एक आदमी ने जो वहाँ हाज़िर था मुझसे बताया कि रात गये उस ने फ़ौज को दरिया पार उतरने का हुक्म दे दिया और ख़ुद लम्बी तान कर सो गया। थोड़ी देर बाद जागा और कहने लगा कि, "मैंने अजब ख़्वाब देखा है। लोगों के पूछने पर उसने बताया कि मुझे एक पेड़ पर एक कौआ बैठा दिखाई दिया जिसके चारों ओर बहुत से कौए बैठे काँव-काँव कर रहे थे। मैं उस रास्ते से गुज़रा और एक ही तीर में उस कौवे को ढेर कर दिया। दूसरे कौवे उसे मरा हुआ देखकर उड़ गये। इस ख़्वाब से लगता है कि मैं जीतूँगा। ख़ुदा ने चाहा तो सुबह सवार होकर इस बदमाश को ख़त्म कर डालूँगा।"

जब सुबह हुई क़यामत टूटती दिखाई दी। जंग का नक़्क़ारा बजा,

नजीबुद्दौला हाथी पर सवार होकर दरिया पार उतरा और मुक़ाबले में डट गया। सूरजमल ने बड़े घमंड के साथ अपनी फ़ौजें बढ़ाईं, बन्दूकें चलने लगीं और सिपाहियों ने दाँव फेर दिखाने शुरू किये। यह सरदार तो पहले ही से जला बैठा था बड़ी दिलेरी से लड़ा। सूरजमल ने भी कोई कसर न उठा रक्खी।

जब रोहीले मारने मरने पर उतर आये तो सूरजमल ने अपने को फ़ौज में छिपा लिया और छिपे छिपे यह बात भूलकर कि मौत ताक में है उस फ़ौज पर टूट पड़ा जो शहर की ओर थी। एक शोर बरपा हुआ। इधर से कुछ फ़ौज उनकी मदद के लिये भागी और इस बला को दूर किया। इसी भाग दौड़ में सूरजमल को एक करारी घाव लगी। वह घोड़े से नीचे गिरा और तड़प कर ठंडा हो गया लेकिन किसी ने न जाना कि यह सूरजमल है। लोग आपस में बातें करते थे कि जब वह सामने आयेगा तो क़यामत बरपा होगी। न जानते थे कि वह इसी पहली लड़ाई में मारा गया है। उसके बाद शाम तक लड़ाई बंद रही। वहाँ तो वह मारा गया और यहाँ यह लोग परेशान कि रात हो गई है, कहीं ऐसा न हो कि रात को टूट पड़े और हम सब को मौत के घाट उतार दे। शाम के बाद वह फ़ौज जो सामने पड़ी हुई थी बिखर गई। यह लोग आधी रात तक घोड़े और हाथी पर सवार लड़ने की नियत से खड़े रहे। सब हैरान थे कि आख़िर क्या बात है जो उधर से कोई आवाज़ नहीं आती! ऐसा न हो कि ग़फ़लत में टूट पड़े और क़यामत मचा दे। जासूसों को इधर उधर दौड़ाया गया। लेकिन तीन चार कोस तक किसी चिड़िये के पूत का निशान न मिला। रात के आख़िर पहर जासूस ने आकर बताया कि कुछ देहाती यह कह रहे थे कि एक गिरोह डरा सहमा इधर से गुज़रते हुये यह कहता जा रहा था कि, "अफ़सोस सूरजमल जैसा सरदार मारा जाय और हम बेमुरव्वत अपनी जान के डर से उसकी लाश मैदान में छोड़ भाग निकले!" इससे यह पता चलता है कि वह उस जंग में मारा गया जो शहर की देख भाल करने वाली फ़ौज से हुई थी और उसकी फ़ौज भाग गई।

अभी ये बातें चल ही रही थीं कि सुबह हो गई और एक सवार कटा हुआ हाथ लाया और बताया कि यह हाथ उसी का है जिसमें नासूर था। दूसरों ने भी उसे पहिचाना और शदियाने बजने लगे। जब उसकी मौत का यक़ीन आ गया तो भागने वालों का पीछा करने निकले। अगर दरिया पार उतर जाते तो एक दुनिया को तबाह कर डालते। लेकिन राजा नागरमल ने लिखा कि नवाब ने यह दौलत यानी जीत गोया जंगल में पड़ी पाई है। अब अच्छा यही है कि उसे बहुत जाने और आगे न बढ़े। यहाँ काफ़ी फ़ौज जमा है। अगर लड़ने पर तुल गई तो मुसीबत हो जायेगी। चूँकि नवाब समझदार था इसलिये राजा का ख़त देखा तो वापस लौट गया।

जवाहिर सिंह जिसने यह ख़बर सुनकर होश उड़ा दिये थे अगरचे देखने दिखाने के लिये अपने को बहुत संभाले हुए था आया और रियासत का काम-धाम संभाल कर फ़ौज जमा करने में लग गया। वह हिम्मत, बहादुरी और मुरव्वत में अपने बाप से सौ गुना अच्छा है। ख़ुदा किसी ग़लत आदमी को दौलत नहीं देता।

बादशाह और वज़ीर के लश्कर का हाल

हुआ यह कि शुजाउद्दौला ने कुछ नातजवाकारों और नाअहलों के समझाने से जो उसकी नाक का बाल बने हुए थे इस लालच में कि अगर अज़ीमाबाद का सूबा ज़रा सी दौड़-धूप से हाथ आ जाय तो क्या बुरा है, शाह आलम को अपने साथ लेकर उस तरफ़ निकल पड़ा। वहाँ ईसाइयों के सरदार ने शहर के बचाव का हत नेस्त करके उन्हें लिखा कि, "हमारी जिससे दुश्मनी थी उसको हमने मार लिया और देश-निकाला दे दिया। हमें नवाब और बादशाह से कोई मतलब नहीं है। समझ में नहीं आता कि आप लोग कैसे इधर आये और लड़ने-भिड़ने का ख्याल काहे को पैदा हुआ। अगर यह ख़्याल है कि हम आपको बादशाह मानें तो हम तो पहले ही से आपके ग़ुलाम हैं। यहाँ तक आने

की क्या हाजत थी ? और अगर कुछ लोगों के भड़काने में पड़कर हमें मिटाना ही चाहते हैं तो हमारा वश ही क्या है ? बड़े लोगों का मिज़ाज उमड़ते हुये सैलाब की तरह होता है, जिधर को चल पड़ा। चल पड़ा, हम तो घास फूस हैं, हमारी बिसात ही क्या जो उसके रास्ते में आ सकें ? सरदारों की तबियत तो आँधी जैसी होती है। हम तो तिनके की तरह हैं। हमारी क्या मजाल कि रास्ता रोक दें ?" लेकिन बादशाह को राय देने वालों ने जो अहमक़ और मामले को न समझने वाले थे यह समझाया कि अंग्रेज़ कमज़ोर हैं और इसीलिये बातें बना रहे हैं। यह सोच कर उन्होंने बादशाह को आगे बढ़ने पर उकसाया।

शहर अज़ीमाबाद पटना के क़रीब जब दोनों तरफ़ की फ़ौजें आमने-सामने हुईं तो अंग्रेज़ बन्दूकें लेकर मुक़ाबले पर जम गये। इधर नमक-हराम मुग़ल ख़ुद अपने आक़ा के ख़ज़ाने पर टूट पड़े। अंग्रेज़ों ने बड़ी बहादुरी से मुक़ाबला किया। नवाब के एक आदमी ईसा ने बहुत दिलेरी दिखाई और मैदान में लड़ता हुआ मारा गया। बादशाह तमाशाइयों की तरह अलग-थलग खड़ा देखता रहा।

शुजाउद्दौला ने जो शहर के आस-पास कहीं लड़ रहा था जब देखा कि ठहरना अच्छा नहीं है तो बचे-खुचे लोगों को साथ ले अपने सूबे की ओर निकल गया और इतना लम्बा सफ़र डेढ़ दिन में तय करके अपने ठिकाने पर पहुँचा, रुपया पैसा और फ़ौज ले लिवा फ़र्रुख़ाबाद को चल दिया। अगरचे यह दुनिया वह जगह नहीं जहाँ किये का फल मिलता हो, लेकिन कभी-कभी ऐसा हो भी जाता है। इस भारी लश्कर की यह हार उस बेईमानी का बदला था जो उन्होंने क़ासिम अली ख़ाँ से की थी।

इधर तो यह सब कुछ हुआ और वहाँ अंग्रेज़ों ने ख़ेमों और लड़ाई के सामान पर क़ब्ज़ा कर लिया। फिर वह बादशाह को साथ लेकर अवध की ओर चले। सात आठ दिन बाद अवध पहुँचे जो शुजाउद्दौला की राजधानी है। लेकिन उस जीत की ख़ुशी में जिसके बारे में उन्होंने कभी सोचा भी न था वहाँ किसी से भी कोई छेड़-छाड़ नहीं की। बाद

एक हफ़्ते के बादशाह को हर महीने दो लाख रुपया देने का वादा किया और यह कह दिया कि आप आराम से रहें और मुल्क का हेस्त-नेस्त हम पर छोड़ दें।

इसी बीच जवाहिर सिंह अपने बाप के ख़ून का बदला लेने के लिये मल्हार को जिसका हाल आगे लिख चुका हूँ साथ लेकर भारी लश्कर के साथ नजीबुद्दौला पर हमला करने आ गया और चारोंओर से दिल्ली को घेर लिया। अनाज महँगा हो गया और रिआया इस मँहगी से तंग आ गई। लड़ाई झगड़े का सिलसिला दो महीने तक चलता रहा। एमादुलमुल्क जो इस लड़ाई से बचने की सोच रहा था अपनी फ़ौज के साथ भरतपुर के क़िले से निकला और फ़ालतू लोगों को फ़र्रुख़ाबाद भेज कर जवाहिर सिंह से मिल गया।

आख़िर अब्दाली के आने की ख़बर सुनकर जो इस साल शाहाबाद तक आया था लेकिन सिखों के हंगामे की वजह से नाकाम लौट गया था। सारी स्कीमें हवा में उड़ गई। आपस में सुलह हो गयी। एमादुलमुल्क मल्हार के संग अहमद ख़ाँ बंगश के पास चला गया जिसके साथ उसकी बड़ी दोस्ती थी और जवाहिर सिंह अपनी रियासत में आकर दूसरे कामों में लग गया। अपने बाप के ज़माने के उन सरदारों में से जो उसे बच्चा समझकर टाल देते थे, कुछ को उसने मरवा डाला और कुछ को क़ैद करके जेल में डाल दिया।

नवाब एमादुलमुल्क इस सिनोसाल के बावजूद इस ज़माने में अपना जवाब नहीं रखता, उसमें बहुत सारी अच्छाइयाँ हैं। पाँच छः तरह की लिखाई लिखना जानते हैं। उर्दू और फ़ारसी दोनों में मज़ेदार शेर कहते हैं और मेरे हाल पर मुहब्बत की नज़र रखते हैं। मैं जब भी उनसे मिला हमेशा फ़ायदा उठाकर लौटा।

शुजाउद्दौला का अंग्रेज़ों से मदद लेना

शुजाउद्दौला का हाल यह है कि वह जिन लोगों की मदद के भरोसे पर फ़र्रुख़ाबाद में पड़ा हुआ था उनसे बेमुरव्वती और धोका-फ़रेब के

सिवा कुछ हाथ न आया तो आख़िर मल्हार के साथ दोस्ती गांठकर फ़ौज जमा की और उन्हें अंग्रेज़ों से जंग के लिए ले गया। जब दोनों आमने-सामने हुये तो अंग्रेज़ों ने दोनों ओर से तोपों की बाढ़ लगा दी और उन्हें घेर लिया। दकन की फ़ौज के दस्तों ने बहादुरी दिखाने के लिये तोपों पर भाले चलाये और मार-धाड़ शुरू की। अंग्रेज़ चुपके से लश्कर से बाहर निकले और गोले बरसाते अचानक ऐसे हमलावर हुए कि दकनवालों के छक्के छूट गये और सारा ज़ोर टूट गया। वे इस तरह भागे कि कहीं नामो-निशान न रहा। दकनवाले दो तीन दिन के अन्दर ग्वालियर पहुँच गये जो आगरे से तीन मंज़िल पर राजधानी है और इनके क़ब्ज़े में है। कुछ दिनों बाद अपना टूटा-फूटा हाल ठीक करके जवाहिर सिंह से लड़ने निकल खड़े हुए। वहाँ शुजाउद्दौला का क़िस्सा ख़त्म हो गया। वह अपनी मौत से बेपरवाह होकर अकेला अंग्रेज़ों के पास चला गया। उन्होंने उससे शर्मिन्दा होकर जो कुछ उसका हथिया लिया था वापस कर दिया और उसका सूबा छोड़कर अज़ीमाबाद चले गये। जब बादशाह और वज़ीर के आपस में सम्बन्ध अच्छे हो गये तो उसे फिर वज़ारत मिल गई और निश्चिंत होकर वह अपने मरकज़ अवध में आकर बैठ रहा।

जवाहिर सिंह और मरहठों की जंग

बदनसीब दकनवालों ने भारी लाव-लश्कर के साथ जवाहिर सिंह की रियासत में घुसकर उसके काफ़ी देहातों में लूट-मार की। जवाहिर सिंह जो हक़ीक़त में बड़ा बहादुर था अपने क़िले से बाहर निकला और उन आठ नौ हज़ार सिखों को जो उन दिनों उसी की रियासत में आये हुए थे नौकर करके अपने साथ ले गया और उनका मुक़ाबिला हुआ। जब लड़ाई छिड़ी तो मरहठों के होश उड़ गये। इन लोगों ने पीछा किया और मरहठों के पाँच सौ आदमी और एक सरदार को पकड़ लाये। उनके तमाम लड़ाई के सामान छीन लिये। मल्हार को बड़ी ग़ैरत आई। चोट पर

चोट खाकर वह यह दुख न झेल सका और कुछ दूर जाकर मर गया।

इसी बीच रघुनाथ राव जो दकन का माना हुआ सरदार है एक बड़ी फ़ौज के साथ पहुँचा और जवाहिर सिंह की सरहद पार के ज़मींदारों में से एक पर चढ़ाई करके लूट-खसोट मचा दी। यह ज़मींदार इन लोगों से भरा बैठा था। उसने जवाहिर सिंह को लिखा कि अगर मरहठों ने मुझे तबाह कर दिया तो यक़ीन जानो कि वह तुम्हें भी नहीं छोड़ेंगे और तुम्हारा मुल्क भी हथिया लेने की कोशिश करेंगे। इसलिये तुम्हारा अपनी सरहद पर आना ज़रूरी है। इसमें मेरा भी फ़ायदा है। यह नेक दिल जवान एक बड़ा लश्कर लेकर गया और चंबल के इस पार जो एक मशहूर दरिया है पड़ाव डाल दिया। मरहठे परेशान हो गये और यह कोशिश की कि एक तरफ़ से निपट कर तब दूसरे का मुक़ाबला करें। अभी यह दोनों लश्कर आमने-सामने जमे ही थे कि अब्दाली के आने की ख़बर मशहूर हुई। अब्दाली के नाम से मरहठों की जान निकलती थी। वह हौसला हार कर अपने-अपने वतन की ओर भागे और उन क़ैदियों के छोड़े जाने की शर्त पर जो मल्हार वाली लड़ाई में पकड़े गये थे सुलह कर ली। जवाहिर सिंह उन नमकहरामों को अच्छी तरह सज़ा देकर जो मरहठों से मिलकर किस्म-किस्म की अफ़वाहें फैला रहे थे आगरे वापस लौट आया।

राजा नागरमल अपने क़िलों से निकलकर उससे मिलने की ग़रज़ से आगरे गया। इस सिलसिले में मुझे एक बार फिर अपने बाप चचा की क़ब्रों को देखने का मौक़ा नसीब हुआ। लगभग पन्द्रह दिन वहाँ रह कर वापसी हुई।

अब्दाली फिर आया

इस बार भी शाह दुर्रानी सतलज के जो एक मशहूर दरिया है उस पार तक आया और कमज़ोर सिखों के हाथों काफ़ी नुक़सान झेल कर वापस लौट गया।

जवाहिर सिंह और माधोसिंह की झड़प

इसी ज़माने में जवाहिर सिंह और माधोसिंह के बीच जो जयसिंह का लड़का था ज़मींदारी के सिलसिले में किसी बात पर ठन गई और धीरे-धीरे मामला झगड़े तक पहुँचा। इस बहादुर जवान ने यह ठान लिया कि उसका मुल्क तबाह कर देगा और राजा विजयसिंह से मिलने के बहाने जो उसी बख़्तसिंह का लड़का था जिसका हाल मेरा जादू जगाने वाला क़लम पहले लिख चुका है भक्कर गया। जहाँ एक बड़ा तालाब है और तीर्थ स्थान है। उसने रास्ते में कई देहात तबाह कर दिये। विजयसिंह अगरचे नौजवान था लेकिन सूझ-बूझ अच्छी रखता था। वह आकर मिला और बीच में पड़कर सुलह सफ़ाई करा दी। आपस के झगड़े तय हो गये। राय बहादुर सिंह राजा का बड़ा बेटा जो एक हिम्मत वाला जवान है इस सफ़र में जवाहिर सिंह के साथ तालाब तक नहाने के लिये गया था। जब वहाँ से वापस हुए तो माधोसिंह के सरदारों ने अहद तोड़ दिया और लड़ाई छेड़ दी, दिन चढ़े तक तीर और बन्दूक की लड़ाई होती रही। आख़िर बेवक़ूफ़ राजपूत घोड़ों से कूद पड़े और तलवारें सौंत कर लड़ाई में जुट गये। अक्सर लड़नेवालों के पैर उखड़ गये लेकिन यह बहादुर जवान यानी जवाहिर सिंह और राय बहादुर सिंह ऐसी कड़ी आफ़त का दिलेरी से मुक़ाबला करते रहे। जब शाम हुई तो दोनों तरफ़ की फ़ौजें शल हो गईं। अब यह हाल है कि दोनों तरफ़ की दुश्मनी की आग भड़क रही है। देखिये क्या होता है?

सिख फ़ौज की धांधली

जब जवाहिर सिंह अपने क़िलों को लौटा तो राजपूतों की फ़ौज को खुली छूट मिल गई और वह बड़े ज़ालिमाना ढंग से आस-पास के देहातों को लूटने मारने लगी। उन्होंने मरहठों की शह पर आबादियों को उजाड़ना शुरू कर दिया। इन दिनों सिखों की एक फ़ौज दरियाए जौन के उस पार पड़ी हुई थी। जवाहिर सिंह ने उनको मिला लिया और साथ

लेकर राजपूतों और मरहठों से मुक़ाबला किया। बड़ा खून ख़राबा हुआ। एक दुनिया तबाह हो गई। आख़िर जवाहिर सिंह ने उन्हें अपने मुल्क से निकाल दिया और सिखों को छोड़ दिया कि वह उनका पीछा करें। हुआ यह कि सिखों ने उन लोगों से गठजोड़ कर लिया और जवाहिर सिंह को धोका दे दिया। जब जवाहिर सिंह ने इन लोगों की यह बेईमानी देखी तो बहुत बद्‌दिल हुआ। लेकिन नसीब अच्छे थे। अभी यह सिलसिला चल ही रहा था कि राजा माधोसिंह मर गया। उसकी फ़ौज के सरदारों ने मजबूर होकर सुलह कर ली और लौट गये। बदमाश सिख भी उसी रास्ते से भाग गये।

जवाहिर सिंह का मारा जाना और खानाजंगी

इस बीच एक बड़ी दुर्घटना हुई और वह यह कि जवाहिर सिंह जो अकबराबाद (आगरा) चला गया था किसी ज़ालिम के हाथों तलवार के एक ही वार से मारा गया। अब उसकी जगह उसका भाई राव रतन सिंह रियासत का मालिक बना। यह हर समय शराब में डूबा रहता और अवाम पर बहुत ज़ुल्म ढाता। चुनांचे दस बारह महीने की रियासत में उसने हर आदमी को तंग कर मारा। आख़िर किसी ने लालच में आकर एक चाकू मार उसका भी काम तमाम कर दिया। एक सरदार उसके छोटे से बेटे खेरीसिंह के नाम पर रियासत का कर्त्ता-धर्त्ता बना। सारा काम नौकरों के हाथ आया जिसकी वजह से हालात बिगड़े हुए हैं।

अब रियासत का काम-धाम करने वालों ने सूरजमल के चौथे बेटे को जो उस समय वहाँ नहीं था उस बच्चे के नाम से रियासत का कारबार सौंपा है। अगर क़ायदे से काम संभल जाय तो अच्छा वरना ढंग तो बिगड़े-बिगड़े दिखाई दे रहे हैं।

जब इस क़ौम के आपसी झगड़े बढ़े और मुल्क का इन्तज़ाम नौकरों के हाथ आया तो नवलसिंह जो सूरजमल का चौथा बेटा है उसका छोटा

भाई रणजीत सिंह जो कुम्हेर के क़िले पर क़ाबिज़ है दोनों जंग के लिये उठ खड़े हुए। लगभग पन्द्रह दिन तक बन्दूकों और तोपों की लड़ाई होती रही। चूँकि क़िला बहुत मज़बूत था इसलिये नवलसिंह ने मजबूर होकर सुलह कर ली और उसे उसके हाल पर छोड़ दिया। अगरचे देखने दिखाने को दोनों भाइयों के बीच सुलह हो गई लेकिन दिली दुश्मनी का क्या इलाज? जियाराम जो रणजीत सिंह की फ़ौज का सबसे बड़ा सरदार और उसका दीवान था मरहठों के लश्कर में गया जो वहाँ से चार पाँच मंज़िल पर उन दिनों मंडरा रहे थे और कह सुनकर अपने मुल्क में ले आया। मरहठे जो आज इस तरह अकड़ रहे हैं फटेहालों उसके साथ आए और कुम्हेर के क़िले को घेर कर पड़ रहे। लेकिन इतने डरे हुये और बदहवास थे कि सबसे यह पूछते फिर रहे थे कि नवल सिंह के पास कितनी फ़ौज है और उसकी लड़ाई का ढंग कैसा है। अगर नवलसिंह अपनी जगह से न हिलता तो उसका इतना नुक़सान न होता और मरहठे भी दावत के तौर पर थोड़ा बहुत माल लेकर लौट जाते। चुनांचे उन्होंने मथुरा की ओर चलना शुरू भी कर दिया था कि नवल सिंह के बेवक़ूफ़ सिपाही गोबर्धन के पास जो हिन्दुओं का एक मशहूर मन्दिर है उन पर टूट पड़े और इस तरह के सौ यहाँ तो दो सौ वहाँ, एक हज़ार यहाँ तो पाँच सौ वहाँ, ग़रज़ जो जहाँ था अकेला था। न कोई किसी की मदद को पहुँच सका और न किसी की ख़बर पा सका। नतीजा यह हुआ कि जीत मरहठों के हिस्से में आई। इधर के घोड़े, हाथी, ऊँट और लड़ाई के सामान सब उधर के सिपाहियों को मिले। लेकिन इस जीत पर भी मरहठों से यह न हो सका कि नवल सिंह के क़िलों तक पहुँच पाते। वह इस जीत को ही बहुत समझ कर जौन पार करते हुये दोआबे में आये और यहीं डेरा डाल दिया। जब इन्हें काफ़ी दिन बीत गये तो नजीबउद्दौला ने जो बड़ी आन-बान का मालिक था यह सोचा कि यह बला बाहर-बाहर से नहीं जाने वाला है। कहीं ऐसा न हो कि शहर पर टूट पड़े। यह सोचकर अपने लड़के, भाई और साथ की फ़ौज को बहुत समझ कर मरहठों के सामने आ डटा और जब तक जान में जान

रही उन्हें शहर की ओर आँख भी न उठाने दी। मगर जब वह अपनी पुरानी बीमारी में मर गया तो उसके सरदारों ने ज़रा सी बात पर उसके बेटे से ख़फ़ा होकर उसका साथ छोड़ दिया। जब उसके बेटे ज़ाबिता ख़ाँ ने साथ वालों का यह रंग देखा तो ख़ुद ही लड़ाई के मैदान से अलग होकर सक्खर ताल चला गया और उन लोगों ने शहर के पास आकर ख़ेमें लगा दिये।

'मीर' कामां में

जब जाटों का ज़ुल्म हद से ज़्यादा बढ़ा और ज़िन्दगी दूभर हो गई तो राजा नागरमल ने देहली के ऐसे बीस हज़ार घरानों को लेकर जो सब के सब या तो उसके नौकर थे या उसी के सहारे देहली में रह रहे थे शहर छोड़ देने का फ़ैसला किया और उधर के सरदारों से इजाज़त माँगी। लेकिन वह तो इन लोगों को सताने की घात में थे और चाहते यही थे कि राजा को हीले-हवाले में उलझा कर उसका इरादा ख़त्म करा दें और फिर चुपके-चुपके ज़ुल्म का हाथ बढ़ाएँ। राजा ने जब यह जान लिया कि जाट निकलने नहीं देंगे बल्कि अगर निकलना चाहा तो रास्ता रोकने की कोशिश करेंगे तो उसने ख़ुदा के सहारे वह किया जो एक सरदार ही कर सकता है। अपने दोनों बेटों को साथ लेकर क़िले से बाहर निकलने की हिम्मत की और बाहर आकर ग़रीबों की इस तरह मदद की कि एक आदमी की भी इज़्ज़त नहीं जाने दी। ख़ुदा की मदद और अपनी नेकनीयती की वजह से इस भारी क़ाफ़ले के साथ दो तीन दिन में शहर कामां में आ पहुँचा जो राजा माधोसिंह के लड़के राजा पृथ्वीसिंह की सरहद पर है। इन दिनों हम मुसीबत के मारे उसकी नौकरी के सहारे उसी के साथ ठहरे हुये हैं। देखिये यहीं रहना होता है या क़िस्मत कहीं और ठोकर खिलाती है।

फिर देलही में

इन दिनों सुना गया कि बादशाह फ़रुर्ख़ाबाद में मौजूद हैं। राजा

ने मुझे एलची बनाकर हिसामुद्दीन खाँ के पास भेजा जिनको बादशाह बहुत मानते थे। मैं गया और बातचीत की। इधर इसका छोटा बेटा मुझसे इसलिये नाराज़ था कि मेरा लगाव उसके बड़े भाइयों के साथ था। मेरी बातचीत के ख़िलाफ़ राजा से कहा कि दकनवालों के पास जाना ज़्यादा अच्छा है। यह बात मान ली और वह लोग बादशाह के लश्कर में नहीं गये। शहर की ओर चल पड़े। आख़िर मजबूर होकर मैं भी घरवालों को साथ लेकर बेइज़्ज़ती झेलता इनके साथ हो लिया। जब देहली पहुँचा तो सराए अरब में बीवी बच्चों को छोड़कर राजा के क़ाफ़ले से अलग हो गया। दो तीन दिन बाद राय बहादुर सिंह से मिलकर जो कुछ गुज़री थी। सुनाई उसने जो कुछ कर सकता था हमारे लिये किया और मदद की।

ज़ाब्ता खां पर चढ़ाई

इन्हीं दिनों सिंधिया जो मरहठों का बड़ा सरदार है आगे गया और बादशाह को अपने साथ लेकर शहर में आया। इसे अभी कुछ दिन भी न हुए थे कि मरहठा सरदारों ने आपस में यह तय किया कि बादशाह को साथ लेकर नजीबुद्दौला के लड़के ज़ाब्ता खाँ पर चढ़ाई करनी चाहिये। बादशाह ने अगरचे बहुत-बहुत बीमारी का बहाना किया मगर कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। इस सिलसिले से मैं भी शाही लश्कर के साथ सक्खर ताल गया। इन लोगों ने जाकर ज़ाब्ता खाँ को बिना लड़े भगा दिया और उसका सब कुछ हथिया लिया और बादशाह को दो सौ मरियल घोड़ों और फटे पुराने ख़ेमों के सिवा कुछ न दिया। बादशाह मरहठों की इस हरकत से बहुत बेदिल हुये। लेकिन करते तो क्या करते? मरहठों के पास बल था और यहाँ न ज़ोर था न दौलत। जब इन मरहठों पर बस न चला तो जो लोग कर्त्ता-धर्त्ता थे उन लोगों ने अमीरों की जायदादें धड़ा-धड़ ज़ब्त करनी शुरू कर दीं और बहुत से इन्सानों को बेइज़्ज़त किया।

शाह आलम और मरहठों की जंग

इस आपा-धापी में राय बहादुर सिंह भी फ़क़ीर हो गये। मैं भी भीख माँगने उठ खड़ा हुआ और शाही लश्कर के हर एक सरदार के पास गया। शायरी की वजह से मुझे सब ही जानते थे। इन लोगों के सहारे कुत्ते बिल्ली की ऐसी ज़िन्दगी बसर करता रहा। फिर हिसामुद्दौला के छोटे भाई वजीहउद्दीन खाँ से मिला। उस आदमी ने मेरी शुहरत और अपनी हैसियत पर नज़र करके बहुत थोड़ा सा वज़ीफ़ा लगा दिया। वज़ीफ़ा तो जो कुछ था था, उसने ख़ातिर बहुत की।

चूँकि बादशाह दकन के सरदारों से ख़ुश नहीं था इसलिये बिना उनकी मरज़ी जाने शहर की ओर चल पड़ा और यहाँ आकर क़िले में बैठ रहा। यहाँ आकर नजफ़ खाँ ने जो लश्कर में एक सिपाही था बे सोचे समझे बादशाह को इस पर राज़ी कर लिया कि जाटों की जागीर को हथिया लिया जाय। आख़िर उसने हिसामुद्दौला से बिना पूछे-गाछे जिसका दकन के सरदारों से गहरा याराना था इस बड़े काम की इजाज़त ले ली, दस पन्द्रह हज़ार लोगों को शहर और बाहर जमा किया और यह जंग छेड़ दी। शहर के आस-पास बारह जागीरों पर क़ब्ज़ा कर लिया। चूँकि उसकी तबीयत में लड़कपन काफ़ी था और उसे लड़ाई का कोई ख़ास तजरुबा भी नहीं था इसलिये कुछ बेवक़ूफ़ों की बात में आकर जाटों को छोड़ दकनवालों से उलझ पड़ा।

मरहठों का सोचा विचार

मरहठों ने आपस में मिलकर यह सोचा कि आज तो बादशाद फ़क़ीरों की तरह है और अपनी ताक़त के घमंड पर हमसे लड़ने चला है। अगर यह सच है कि उसे ताक़त मिल गई तब तो हमारे नाक में दम कर देगा। अच्छा तो यह है कि हम दोआबे से निकलकर शहर की ओर जाँय और उसे इतनी मुहलत दिये बिना उसका काम ही तमाम

कर दें। अगर वह जंग में मैदान छोड़ जाय तो ख़ैर, वरना उसे हराकर उसकी फ़ौज को और स्वयं उसको फ़क़ीरों के से हाल में छोड़ दें। ताकि वह रूखा-सूखा खाकर जीवित रहे और हमारे ऊपर पड़ा रहे। जब यह सलाह हो गई तो ज़ाब्ता खाँ (जो नजीबुद्दौला का लड़का है) से बख़्शीगरी के पद और सहारनपुर की जायदाद बहाल करने का जो उसके क़ब्ज़े से छीन कर बादशाह के इलाक़े में मिला ली गई थी वादा करके उसको ख़ुश कर दिया और उसे अपने साथ सम्मिलित कर लिया और जाटों की फ़ौज को भी इसी ढंग से मिला लिया और फिर एक हड़बोंग मचाता हुआ दोआबे से निकलकर एक सप्ताह के अन्दर फ़रीदाबाद के निकट पहुँचे और दरिया पार कर लिया। दो तीन रोज सख़्त झड़पें हुईं। अन्त में एक दिन जंग छिड़ गई। इस ओर से नजफ़ खाँ ने और वेलोचान व मूसह मदक नामक अंग्रेज ने जो नजफ़ खाँ के गायब करने के कारण सूरजमल यानी जाटों की नौकरी छोड़कर इस कमजोर फौज़ में मिल गये थे जंग के मैदान में अपनी वीरता दिखाई। नमकहराम मुग़लों ने जब दखिनी फ़ौज को देखा तो डर गये और पीठ दिखाकर भागे और तमाम बदनाम हुये और बुरे जाने गये। कुछ मौत के जाल में फँसे और मजबूर लोग मुफ़्त में ज़ख़्मों से चूर-चूर होकर मौत के घाट उतर गये। मैदान साफ़ देखकर फ़ौज का एक दस्ता बिना किसी झिझक के शहर में घुस आया। शाही हाथी और बहुत सा माल अपने साथ ले गया। कुछ ऐसे लोग जिन्होंने अपने को सम्भाला था वहाँ जमा हो गये थे। देखते ही देखते मैदान छोड़कर भागे। एक घड़ी रात गये तक हिसामुद्दीन खाँ थोड़े सिपाहियों के साथ रेती के मैदान में जमा रहा फिर वहाँ से उखड़ कर बादशाह के पास गया और आधी रात के गये नजफ़ खाँ और दूसरे आफ़त में फँसे लोगों को मौत के मुँह में छोड़कर अपने महल में दाख़िल हो गया। पुराना शहर जिसमें कभी आबादी थी इस घटना में फिर से लूटा गया। हम ग़रीबों को ख़ुदा ने अपनी शरण में रखा। सुबह इधर के वीरों में मुक़ाबला करने का साहस न था

जो मैदान में निकल सकते थे। शहर पनाह की दीवार के साथ-साथ मोरचा दुरुस्त करके तोप की जंग करने में पूरा दिन गुज़ार दिया। बादशाह की योग्यता ने काम किया वरना वह लोग क़िला मुबारक भी उड़ा देते। इधर के लोगों की वीरता तथा योग्यता तो उसी दिन मालूम हो गई थी। जब दखिनी फ़ौज के आने की ख़बर हुई तो सब ही परेशान हुए और घबराकर तोपख़ाने के लोगों ने जंगी सामान, तोप, रहकला और गोला बारूद आदि के लिये बादशाह के हुज़ूर में निवेदन किया। फ़ितना खड़ा करनेवालों ने मीर आतश को जो बरफ़ से अधिक ठंडा था केवल सौ रुपये दिये। उसका चेहरा और उसकी मोछें अगर देखो तो ऐसा मालूम पड़ता है कि मरद ऐसे ही होते हैं। मगर वह बुज़दिल इस तरह कोने में दुबका कि जब तक लड़ाई होती रही उसे किसी ने नहीं देखा। अन्त में तीसरे दिन हिसामुद्दौला सवार होकर गये और उसके साथ सुलह करके वापस आये। बारे नया शहर उस लूट से बच गया। अब दखिनी सरदार मुख़्तार के इशारे पर नजफ़ खाँ और नमकहराम मुग़लों को निकालने की फ़िक्र में हैं। देखता हूँ कि क्या होता है। यह फटकारे हुए लोग किस प्रकार शहर से निकलते हैं और कहाँ मरते हैं!

सिंधिया जो दखनियों का तीसरा सरदार था जयपुर की ओर गया। और सरदार दरिया के उस पार जाने का इरादा रखते हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि वह फ़र्रुखाबाद के रास्ते से होकर झाँसी जायेंगे और वहाँ शुजाउद्दौला के मुल्क की ख़राबी का सबब बनेंगे।

नजफ़ खाँ का देहली से निकलना

चूँकि ज़्यादातर शहर के लोगों की ज़बानों पर था कि नजफ़ खाँ आदि सरदार और फ़ितना उठाने वाले मुग़ल तनख़्वाह की माँग करने की सोच में हैं और ज्यों ही मरहठे चले जाएँगे यह झुंड बादशाह के दरवाज़े पर धरना देकर हिसाब करने वालों को परेशान करेगा और अपना रुपया मांगेगा, लिहाज़ा हिसामुद्दौला ने जो मुख़्तार थे दखनियों

से कहा कि यह नमकहराम हैं और दंगा करने वाले हैं। जिस प्रकार भी हो उन्हें परेशान करने की आवश्यकता है। नवाब के कहने पर अब मरहठा सरदार इस क़ौम को शहर से निकाल देने पर तुली हुई है। चुनान्चे यह उनसे कहा गया कि कोई भी मुग़ल शहर में न रहे। जब यह बात बहुत बढ़ी तो शाही हिसाब करने वाले क़िले में जाकर बैठ रहे और शहर के लोगों को बन्द कर दिया है। देखने में तो इस गिरोह ने लाहौरी दरवाज़े तक मोर्चे बाँधकर लड़ाई की आग भड़काई और अन्दर-अन्दर दखनियों से जीतने के योग्य ख़ुद को न पाकर उनसे सांठ-गांठ कर ली। जब लड़ाई-भिड़ाई से काम चलता न देखा और यह समझ गये कि हम मुक़ाबला करने में मारे जायेंगे तो मज़बूर होकर शहर से निकलने पर तैयार हुये और मरहठों से वादा किया। दो चार रोज़ बाद नजफ़ खाँ और दूसरे मुग़ल सरदार अपने दूसरे साथियों के साथ उनके लश्कर में गये तो दखिनियों ने जो सुलूक देखने में किये और जिस तरह देखने में मिले किसी समय भी उसे नहीं भूलते। इस गिरोह का आदर करने में कोताही नहीं की लेकिन वह आदर जो बादशाह की नौकरी में था यहाँ हुआ। कुछ दिनों में यह समूह टूट जायगा और हर एक किसी न किसी ओर चला जायगा। यही तमाम मशहूर है कि मरहठे इन सब लोगों को अकबराबाद तक अपने साथ में ही ले जायेंगे और वहाँ पहुँचकर ही आज्ञा देंगे कि जो जिस ओर जाना चाहे चला जाय।

शरीर मुग़ल और बदमाश मरहठे क़रीब है कि चले जायँ और बादशाह अपने तीन मुहर्रिरों के साथ बिना किसी भय के क़िले मुबारक में रहें। अगर दिन में सौ बार भी क़िले के कंगूरे पर सैर के लिये आयें तो कौन है जो बुरा माने और अगर बाज़ार में पैदल निकल आये तो कौन कहाँ है जो उन्हें कुछ कहें। ऐसा मालूम होता है कि लोग बाहर निकल जायेंगे और सिपाही भीख के लिये सब के आगे हाथ फैलाते फिरेंगे। हर एक अपना रास्ता लेगा और शहर बड़ा अच्छा लगने लगेगा।

हिसामुद्दीन खाँ का बुरा हाल

नवीन घटना यह हुई कि जब दखनियों ने नजफ़ खाँ को साथ लेकर दरिया के उस पार जाने का इरादा किया तो जसरानियों की मदद लेकर वज़ीर शुजाउद्दौला हमला करता हुआ अपने सूबे अवध से फ़र्रुख़ाबाद तक आ गया और मरहटों से उसका मुक़ाबला हुआ। चूँकि दखिनी फ़ौज के सरदारों ने ख़ुद को इस भूकंप के मुक़ाबले में कमज़ोर देखा इसलिये मुक़ाबला न कर सके। क़रीब एक महीने इसी तरह गुज़रे। अन्त में सुलह करना चाहा। वज़ीर भी चूँकि बहादुर था इसलिये उसने भी सुलह की पेशकश को ग़नीमत ही जाना और स्वीकार कर लिया। अन्त में नजफ़ खाँ को शाही मुख़्तार बनाकर अपने सूबे को रवाना हो गया। दक्खनी और पूर्वी भी अपना मामला उस पर छोड़कर अपने क़ब्जा किये हुये इलाक़ों में चले गये। जब नजफ़ खाँ शहर में दाख़िल हुआ तो हिसामुद्दौला का रंग फ़क़ हो गया। दो तीन रोज़ घर में दुबका छिपा बैठा रहा। उसके बाद बादशाह ने क़िले में बुलाकर अपने थोड़े साल के हिसाब के काग़ज़ात मांगे और उसे वहीं अपने निगरानी में रखा। अमजदुद्दौला अब्दुल अहद खाँ जो अब्दुल मजीद खाँ का लड़का था, उसने जो ख़ास शाही काम करने वाला था, राजा नागरमल की तब्दीली के बाद दीवानी खलिसह का ख़िलत पहना और शाही मुख़्तारकार के पद पर हो गया। अन्त में बादशाह ने हिसामुद्दीन खाँ को जो मुख़्तारुल मुल्क था गिरफ़्तार कर लिया। फिर शाही रुपया और मुग़लों की तनख़्वाह के लिये आठ लाख रुपये के बदले फ़तह खाँ दुर्रानी वग़ैरह के हवाले कर दिया। वह उसे क़िले से अपने घर ले गया। अब मुग़ल मुख़्तार हैं चाहे तो उसे जान से मार डाले, चाहे उसे ज़िन्दा छोड़ दें।

ई शामते आमाल क़यामत बसर आवुर्द !

यानी हमारे नसीबों की ख़राबी ने यह क़यामत ढाई।

जाटों की लड़ाई

अब्दुलअहद खाँ दीवाने खलिसह का पद पा गया था। उसने बादशाह को पूरा-पूरा समझ लिया था और बादशाह से बहुत घुल-मिल गया था। अब मुख़्तार बन गया। जो जी आता करता था। किसी को चूँ करने की मजाल न थी। शाही फ़ौज का हाल पतला था। बादशाह भी कमज़ोर हो चुका था। शहर और देहात वह भी थोड़े ही उसके पास रह गये थे। उन पर बादशाह का गुज़र बड़ा मुश्किल था। जाट यानी सूरजमल की औलाद दरगाह हज़रत बख़्तयार काकी तक कब्ज़ा जमा चुके थे जो शहर से तीन चार कोस पर है। नजफ़ खाँ ने बादशाह के हुज़ूर से निवेदन किया कि महाराज जीवन बिताना तो बड़ा बेमज़ा है। अगर यह मुल्क जो जाटों के अधिकार में है हाथ आ जाय तो सुकून मिल सकता है। बादशाह ने उत्तर दिया, "शायद तुम स्वप्न देख रहे हो। क्या ज़रूरी है कि इतनी बड़ी बात इसी छोटे मुँह से कही जाय ?"

वह बोला, "अगर ऐसा हो जाय तो महाराज मुझे क्या देंगे ?" बादशाह ने कहा, "जीते हुये मुल्क से तीसरा भाग लेकर बाक़ी सब तुमको दे दूँगा।" चँकि इस जाट क़ौम की शामत व बुरे दिन निकट थे, एक दिन उनकी सेना गढ़ी के मैदान में आ गई जो दरगाह ख़्वाजा मस्तूर के नज़दीक ही है। वहाँ आकर उधम मचाने लगी। नजफ़ खाँ अपने लोगों को लेकर जिनके पास जंग का सामान भी न था हमला कर दिया। वह (जाट) बड़े घमण्डी थे। उसे ख़ातिर में न लाये और बेपरवाही दिखायी। मगर जब जंग छेड़ी तो ऐसा पासा पलटा कि कुछ न पूछिये। वह जैसा सोच भी न सकते थे वही हुआ। यानी शाम तक उन्होंने मैदान जीत लिया और शाही फ़ौज़ कच्चा गल्ला खा-खाकर वहीं पड़ी रही और ख़ुशी मनाई। अगले सुबह आगे बढ़े और बल्लभगढ़ को घेर लिया जो शहर से बारह कोस की दूरी पर उन जाटों का मज़बूत क़िला था। चन्द रोज़ तक तोप और रहकले की जंग होती रही। वहाँ के सरदार ने कहा कि, "केवल क़िले पर अधिकार जमा लेने से जाटों की जंग का ख़ात्मा नहीं

होगा। आगे जाओ और बड़े सरदारों से जो जंग हो रही है उसे ख़त्म करो। यह क़िला तो मैं बिना लड़े ख़ाली करके तुम्हें दे दूँगा।" नजफ़ ख़ाँ कम उम्र था पर बात समझने वाला सरदार था। उस क़िले को छोड़कर और उसी सरदार को वहाँ छोड़कर आगे बढ़ गया। जब होडल के निकट पहुँचा जो जाटों के अधिकार में था तो एक और मुश्किल आन पड़ी; यानी उधर से भारी फ़ौज आई और मुक़ाबले में डट गई। यह बड़ी मुहिम सर पर आ पड़ी। जाटों का सरदार जिसका नाम नवल सिंह था भारी लाव-लश्कर और बड़े तोपख़ाने के साथ आकर मुक़ाबिला हुआ। जंग का हंगामा हुआ और आसमान ने बहुतों को ख़ाक व ख़ून में लिटा दिया। धीरे-धीरे ये लोग परेशान होने लगे और खाने की कमी से शाही फ़ौज के लोग भूखों मरने लगे तो उन्होंने अपनी जानों से हाथ धोकर लड़ना मरना शुरू कर दिया। मगर सख़्ती उठाई और मारे गये। चूँकि उस क़ौम की शामत से इनकी फ़तह होनी थी। इधर के सरदारों ने प्यादा पा होकर लड़ना शुरू किया और मैदान मार लिया। वह भारी फ़ौज लाव-व-लश्कर शिकस्त खाकर वापस हो गयी।

नजफ़ ख़ाँ जीत गया

समरो नाम का अंग्रेज़ जो उधर के तोप आदि लेकर बड़ी वीरता के साथ देर तक जम कर खड़ा रहा था आख़िरी दिन वह भी भाग गया। नजफ़ ख़ाँ जिसकी सरदारी में यह बड़ा काम पूरा हुआ था बड़ा नाज़ करता था। जिसने भी यह बात सुनी उसे बहुत आश्चर्य हुआ। जाटों का सरदार अपने क़िले में जाकर बीमार पड़ गया। यहाँ नजफ़ ख़ाँ के साथ बहुत सारे लोग मिल गये और वह एक बड़ा रईस बन गया। चूँकि उसके पास रुपया पैसा न था इसलिये ज़ुबानी जमा ख़र्च करके काम निकालता रहा। जो आता नौकर हो जाता। कुछ ही दिनों में ठाठें मारते हुये दरिया की तरह एक बड़ा लश्कर जमा हो गया। वह अगरचे निर्धन था मगर चरब ज़ुबानी के सहारे अपना काम निकालता रहा। जब देखा

कि इस तरह महज़ चालाकी के बल पर फ़ौज नहीं रह सकती तो हिम्मत से काम लिया और सरदारों को जाटों की जागीर पर भेजना शुरू कर दिया। यह उसे अच्छी तदबीर सूझी ख़ुद उसने ढेठा के किले को घेर लिया जो वहाँ से केवल बारह कोस पर था। इत्तफ़ाक़ यह हुआ की वहाँ का सरदार जो बीमार था मर गया। उन्होंने (जाटों ने) सूरजमल के चौथे बेटे रंजीत सिंह को लेकर जंग करना शुरू कर दिया। उस क़िले के तोपख़ाना दारोग़ा ने इधर के सरदारों से साज़िश कर ली और क़िले में घुसने का रास्ता बता दिया। ये लोग हमला करके अन्दर घुस गये और लूटमार करके इन्होंने बहुत लाभ उठाया। हर बेहैसियत को बड़ा सामान हाथ लगा। बहुत सा असबाब और बेशुमार तोपख़ाना नजफ़ ख़ाँ को भी मिला। इस फ़ौज के प्यादे मालदार हो गये। सात आठ दिन की लूट मार के बाद वह क़िला सरदार के हवाले करके आगे कूच किया। अब कुम्हेर की ओर जाने का इरादा किया जो उसका दूसरा क़िला था। रंजीतसिंह जो उस क़ौम का सरदार हो गया था उस क़िले को ख़ाली करके और जंगी हथियार समेट कर भरतपुर चला गया जो एक मजबूत क़िला है। ये लोग उस शहर पर भी क़ाबिज़ हो गये और बहुत सा माल व असबाब सिपाहियों के हाथ आया। मजबूर होकर जाटों ने सुलह का पैग़ाम दिया। किशोरी जो रंजीतसिंह की माँ है ख़ुद आई और सुलह की ख़्वाहिश ज़ाहिर की। भरतपुर उन्हें देकर और इस मोहिम को फिर किसी वक़्त के लिये मुलतवी करके नजफ़ ख़ाँ आगरे आ गया जो एक मजबूत राजधानी है। जाट उस पर क़ाबिज़ थे। वह यहाँ के क़िले की जंग में लग गया। चूँकि नसीब अच्छा था, थोड़ी सी मुद्दत में नक़ब लगाकर उस पर भी क़ब्ज़ा कर लिया। जो सरदार जाटों की तरफ़ से उस क़िले में रहता था उसे वादा करके निकाल दिया और वहाँ के लोगों से सुलूक किया। इस तरह तमाम सूबे पर क़ाबिज़ हो गया। जिसे चाहता था वहाँ के महलात तनख़्वाह में मुक़र्रर कर देता था। कुछ ही दिनों में उस तमाम मुल्क का मालिक हो गया। इधर के सब राजों और ज़मींदारों के

कान खड़े हो गये। अब अगर जाट कुछ गड़बड़ करते तो ऐसी मुँहकी खाते कि फिर इधर का रुख़ न करते।

जब नजफ़ खाँ इस तमाम मुल्क का मालिक हो गया और उसे काम-याबी नसीब हो गई तो अब्दुल अहद खाँ के सामने दून की लेने लगा। यानी अब सल्तनत का मदार ही उस पर हो गया था। बादशाह ने उसके कहने के मुताबिक़ मुल्क के तीसरे हिस्से का सवाल किया तो उसने हुज़ूर में आकर अर्ज़ किया, "कि यह सारी फ़ौज जो मेरे साथ है तनख़्वाह के तौर पर मैंने उसके आदमियों में मुल्क को तक़सीम कर दिया है। हज़रत मुझसे तीसरे हिस्से मुल्क की क़ीमत ले लें।" बादशाह को उसके झूठे वादों पर भरोसा न था। कहने लगा, "इतना मुल्क छोड़ देना चाहिये!" अब्दुल अहद खाँ की ताक़त के आगे उसकी यह क़लाबाजियाँ न चल सकीं। मजबूर होकर मुल्क के तीसरे हिस्से के महलात बतौर मुख़्तार अलग करके दे दिये और उसे मीर बख़्शीगरी का ख़िलअत मिला और अमीरुल उमरा हो गया। कुछ दिन के बाद बादशाह के हुज़ूर से इजाज़त लेकर वह अकबराबाद (आगरा) चला गया।

अब्दुल अहद खाँ और सिख

यहाँ अब्दुल अहद खाँ ने सिखों को अपने साथ मिला लिया और जितना माल व मनाल बन पड़ा उन्हें दिया। फिर इस भारी फ़ौज के भरोसे पर शहज़ादा फ़रख़न्दा अख़्तर को लेकर राजा पटियाला पर हमला कर दिया। उसका इरादा यह था कि मौक़ा मिलते ही सिखों को नजफ़ खाँ से भिड़ा दें। उधर पटियाला की ओर जा रहा था, मगर ख़याल इधर नजफ़ खाँ ही का था। धीरे-धीरे यहाँ तक नौबत पहुँची कि बहुत से लोग अमीरुल उमरा के लश्कर से अलग होकर अब्दुल अहद खाँ मुख़्तार के नौकर हो गये। मगर वह मुल्कदारी और रियासत के मामलात से नावाक़िफ़ था। हर काम अधूरा छोड़ देता था। कुछ दिनों तो जमा रहा। फिर सिखों के मशवरे से राजा पटियाला से सुलह कर ली। जो कुछ

जमा-पूँजी थी वह यूँ ख़त्म हो गई तो अब बादशाह से कुछ तलब किया। बादशाह उसके रुपया माँगने से बहुत बददिल हुआ। लिख भेजा कि, "जो कुछ होना है हो रहे। मेरे पास तो रुपया नहीं है।"

हाफ़िज़ रहमत खाँ की शहादत

वज़ीर आज़म अमीर मुअज़्ज़म शुजाउद्दौला जो बहुत ज़ोरावर था हाफ़िज़ रहमत खाँ रोहीला से जंग करने निकला। इन दोनों की आपस में बहुत कटी-छनी थी। रहमत खाँ ने बुराई की ग़रज से अंग्रेज़ों को लिख भेजा कि, "वज़ीर शुजाउद्दौला जो इतनी फ़ौज इकट्ठी कर रहा है वह तुम्हारी परख़ाश में है।" चुनानचे गवर्नर बहादुर मुक़ाबले के लिये निकल आया। नवाब वज़ीर जो अंग्रेज़ों से बहुत रियायत और लेहाज़ करता था उनके पास अकेला गया और कहा, "मैं तुम्हारा पास करता हूँ और किसी से अपनी बात हेटी नहीं करूँगा। इसमें जो कुछ होना है हो रहे। चाहे मुझे अपने साथ कलकत्ते ले जाओ या मुल्क को मेरे ऊपर छोड़ दो।" अंग्रेज़ों ने वज़ीर के सुलूक पर नज़र करके सब चीज़ों से हाथ उठा लिया। कड़ा और इलाहाबाद भी उसके हवाले कर दिये और चले गये। अब आसमान ने नया शगूफ़ा खिलाया और ज़माना नया ही इन्क़लाब लाया।

जब वज़ीर वहाँ से पलटा तो उसके लश्कर में बहुत से अंग्रेज़ शामिल थे और अपने तौर पर जंग की ठाने हुये थे। जब रोहीलों ने यह ठाठें मारता हुआ लश्कर देखा तो सहम गये और ज़ाब्ता खाँ आदि दूसरे सरदारों ने दस बारह हज़ार की जमीअत के साथ आकर इज़हार एताअत किया कि, "हम तो दौलत ख़्वाह और आपका अच्छा चाहने वाले हैं। सरताबी नहीं करेंगे।" वज़ीर आज़म ने ख़ुदा के फ़ज़ल व करम पर नज़र करके हुकुम दिया कि, "हमारी फ़ौज के पीछे खड़े हो जाओ।" बाज़ सरदारों ने कहा भी कि, "यह क़ौम गद्दार है। इस पर भरोसा न करना चाहिये, ऐसा न हो कि ऐन जंग के अवसर पर गड़बड़ करें!" मगर वज़ीर भी बहा-

दुर था। उसने बेदिमागी से जवाब दिया, "मुझे इनका ज़ोर मालूम है, चुटकियों में मसल दूँगा।"

साहबज़ादा आसफ़ुद्दौला बहादुर जो अब वज़ीर आज़म हैं जंग के मैदान में बड़ी सरगरमी से लड़े। जिधर का रुख़ करते धुआँ सा उड़ा देते और तोपख़ाने के जंजीर को तलवार से काट देते। जब जंग अपने ज़ोर पर आई तो दुश्मन की सारी अँकड़ फूँ हवा हो गई। इधर से इतने गोले बरसाये गये कि कुश्तों के पुश्ते लग गये। जब ज़मीन रहमत खाँ पर तंग हो गई और उसने देखा कि न भागने का रास्ता है, न टिकने का मौक़ा तो दिल कड़ा करके मैदान में जम गया और दुनिया से दिल हटाकर जान पर खेल गया। एक ही हल्ले में रोहीलों के होश व हवास उड़ गये, जानों पर बन गई, बड़े-बड़े दिलावरों के पत्ते पानी हो गये। एक गोला उस (रहमत खाँ) के सीने पर लगा, सफ़ें दरहम बरहम हो गई और दुश्मन का सर गेंद की तरह लुढ़क गया। जब उसे इस लश्कर में लाकर दिखाया तो रोहीलों ने तसदीक़ की कि हर अमल की जज़ा और हर करतूत की सज़ा ज़रूर मिलती है। जब यक़ीन हो गया कि वह मारा गया तो वज़ीर ने इस जीत के शुकराने में सिजदा किया। दुश्मन का लश्कर लुट गया। बहुत से सरदार क़ैद कर लिये गये और उसका सारा मुल्क वज़ीर शुजाउद्दौला के क़ब्ज़े में आ गया। नजफ़ खाँ जो आगरे से आकर इस जंग में वज़ीर के लश्कर में शामिल हुआ था, रुख़सत लेकर फिर आगरे चला गया।

मेरी ख़ाना नशीनी

फ़क़ीर (मीर) उन दिनों ख़ाना नशीन था। बादशाह ने अक्सर तलब किया मगर नहीं गया। अब्दुल अहद खाँ मुख़तार का चचेरा भाई और अबुल बरकत खाँ सूबेदार कश्मीर का लड़का अबुल क़ासिम खाँ मेरे साथ बहुत सुलूक करता था। कभी-कभी उससे मुलाक़ात हो जाती थी, बादशाह भी गाहे बगाहे कुछ भेज देते थे।

मिसरये गाह गाह मी गोयम्,
कारे दुनयाए मन हमी क़द्र अस्त !

यानी अब मेरा काम इस दुनिया में सिर्फ़ इतना रह गया है कि कभी-कभी एकआध मिसरा कह लिया करूँ।

शुजाउद्दौला की वफ़ात

इस बड़ी जीत के बाद वज़ीर आज़म अमीरे मुअज़्ज़म नवाब शुजाउ-द्दौला बड़ी शान व शौक़त से अपने सूबे में दाख़िल हुआ। लेकिन आस-मान की नज़र तो अहले दुनिया की ख़राबी पर लगी रहती है। इस शानदार समूहे को भी नज़र खा गई यानी वह बहादुर और लायक़ वज़ीर आब व हवा की तब्दीली से ऐसा बीमार पड़ा कि फिर अच्छा न हो सका। बहुत से हकीमों तथा अंग्रेज़ों ने इलाज में कोशिश की मगर कुछ फ़ायदा न हुआ। वज़ीर ने जब देखा कि बीमारी बढ़ती ही जा रही है तो अपने बड़े लड़के नवाब आसफुद्दौला बहादुर को विज़ारत की मसनद पर बिठा दिया जो बहुत शाइस्ताकार, बहादुर, सख़ी, फैयाज़, रहमदिल और निर्धनों पर निगाह रखने वाले हैं। फिर इस दुनिया से किनारा कर गये। नवाब की मौत का ग़म सब को बहुत हुआ। यह हादस बड़ा सख़्त हुआ। अगर आस-मान हज़ार साल घूमता रहे तब कहीं ऐसा बहादुर सरदार पैदा होता है !

मुख़्तारुद्दौला की वफ़ात

कुछ दिनों के बाद मुख़्तारद्दौला भी जिसके हाथ में सूबेदारी और विज़ारत की ज़िम्मेदारियाँ थीं। बसंत नामी ख़्वाजासरा के हाथों मारा गया और दूसरी दुनिया को सिधारा। अब नवाबत का ओहदा हसन रज़ा ख़ाँ सर-फ़राज़ुद्दौला को मिला। यह एक संजीदा मेहरबान, मिलनसार और अच्छे चरित्र का मालिक सरदार है। सिफ़ते करम उसकी तमाम अच्छाइयों पर ग़ालिब है और उसका लोगों के साथ सुलूक अच्छा है। वह शरीफ़ों की

दिलजोई करता है। उसकी इनायतें मेरे ही हाल पर नहीं, बहुतों पर हैं। ख़ुदा उसे सलामत रखे। मुख़्तार अब्दुल अहद खाँ के रुपये माँगने से बादशाह कुढ़ा तो बैठा ही था। उसने जुलफ़िक़ारुद्दौला (नजफ़ खाँ) को लिखा जिस तरह भी मुमकिन हो यहाँ पहुँचो। बादशाह की शह पाकर वह बहादुरी के साथ वहाँ से रवाना हुआ। अब्दुल अहद खाँ यह ख़बर सुनते ही कि अमीरुल उमरा (नजफ़ खाँ) आ रहा है निहायत बदहवासी में बादशाहज़ादा और सिखों की फ़ौज को साथ लेकर भागम-भाग आया और नजफ़ खाँ के शहर में दाख़िल होने से दो दिन पहले क़िले का बन्दोबस्त अपने हाथों में लेकर बैठ रहा।

नजफ़ खाँ का ज़माना

जब यह शोर हुआ कि जुलफ़िकारुद्दौला आ गया तो बादशाह ने उसी मुख़्तार अब्दुल अहद खाँ से इस्तक़बाल को जाने के लिये कहा। यह बड़े शान से गया और मुलाक़ात की। सवार होते समय दोनों एक ही हाथी पर बैठे। नजफ़ खाँ ने अब्दुल अहद को मुनाफ़िक़ जान कर ज़ाहिरदारी का बरताव किया और क़िले के दरवाज़े तक मीठी बातों में लगाकर ले आया। यहाँ आकर अपने आदमियों को इशारा कर दिया कि मेरी तोप, रहकला और फ़ौजें क़िले के अन्दर बेतहाशा घुस जायें और जगह-जगह खड़ी हो जायें। हरचन्द उन दोनों के बीच में केवल एक चाक़ू के फल का फ़ासला था। अगर नजफ़ खाँ चाहता तो एक ही वार में मुख़्तार का काम तमाम कर देता। मगर बादशाह की बन्दगी का ख़्याल रहा कि आख़िर यह भी हुज़ूर का मुलाज़िम है। पहले बादशाह की मर्ज़ी मालूम कर लेनी चाहिये फिर जो होगा देखा जायगा। जब इस हंगामे के साथ बादशाह के सामने आया और मुलाज़िम हुआ तो देखा कि बादशाह मुतमईन है और उसे छोड़ना नहीं चाहता तो वहाँ से निकलकर बीच बाज़ार आकर खड़ा हुआ और अर्ज़ भेजी कि मैंने तो हुज़ूर का ख़्याल करके दस्तअन्दाज़ी नहीं की थी। जब तक अब्दुल अहद खाँ को साथ न ले लूँ यहाँ से न टलूँगा। बादशाह ने ज़ाहिर में तो बातचीत की लेकिन

खुफ़िया तौर से यही कहा कि जिस तरह बन पड़े इसे यहाँ से ले जाओ। चूँकि मुख़्तार के सिपाही मजबूर होकर जा चुके थे और सिख भी अलग-अलग हो गये थे इसलिए लाचार होकर उसने कौल व क़सम किये कि नजफ़ खाँ मेरे साथ ज़्यादती न करे और न मेरी इज़्ज़त के दरपै हो।

बादशाह ने कहा, "मैं तुम्हारा ज़ामिन हूँ, बेअन्देशा चले जाओ।" जब कोई और रास्ता न देखा और ज़माने की नज़रें बदली हुई पाई तो शाम के वक़्त एक हाथी पर सवार होकर क़िले से निकला।

अमीरुलउमरा नजफ़ खाँ भी जो बाज़ार में इन्तज़ार कर रहा था सवार हुआ और अपने हाथी को उसके हाथी के साथ-साथ लेकर अपने घर ले गया और वहाँ निगरानी में रखा। चंद दिन तो इस तरह गुज़रे कि आज बादशाह के पास जाऊँगा, कल जाऊँगा। अन्त में कह दिया कि, "वहाँ जाकर क्या करोगे? अच्छा यही है कि मेरे पास रहो।" लेकिन उसके माल व मनाल में दस्तअन्दाज़ी नहीं की। बीस रुपये रोज़ अपने पास से मुक़र्रर कर दिये और चन्द ख़िदमतगार उसके पास छोड़ दिये। ख़ुद बादशाह के मुल्की व माली मामलात में लग गया। रफ़्ता-रफ़्ता यहाँ तक नौबत पहुँची कि निहायत बाअख़्तयार और बलन्द मरतबा हो गया। उसके बड़ाई के बायस और अच्छे बरताव से लोगों की इतनी आमद व रफ़्त रहती थी कि अमीरों को हाज़िर होने का अवसर नहीं मिलता था। जिस दिन वह बादशाह के हुज़ूर में आता उसी दिन दरबार होती; वरना बादशाह अपने चन्द मसाहिबों के साथ पड़े रहते थे। लेकिन वह जवान था और शाहजहाँबाद (दिल्ली) तो एक जादू का घर है। चार दोस्तों ने ऐश व इशरत की ओर कर दिया। रागरंग के प्रयोग और स्त्रियों के साथ इतना मुनहमिक हुआ कि शरीर की ताक़त ख़त्म हो गई। अन्त में सिल के रोग में गिरफ़्तार हो गया। हकीमों ने इलाज में बहुतेरे हाथ पैर मारे लेकिन—

मरज़ बढ़ता गया जूँ जूँ दवा की।

जब ज़िन्दगी से मायूस हो गया तो बड़ी हसरत से कहता था कि, "मैं कुछ नहीं चाहता बस इच्छा इतनी है कि ज़िन्दा रह जाऊँ।"

उसकी बीमारी में ज़माने का रंग और बदला।
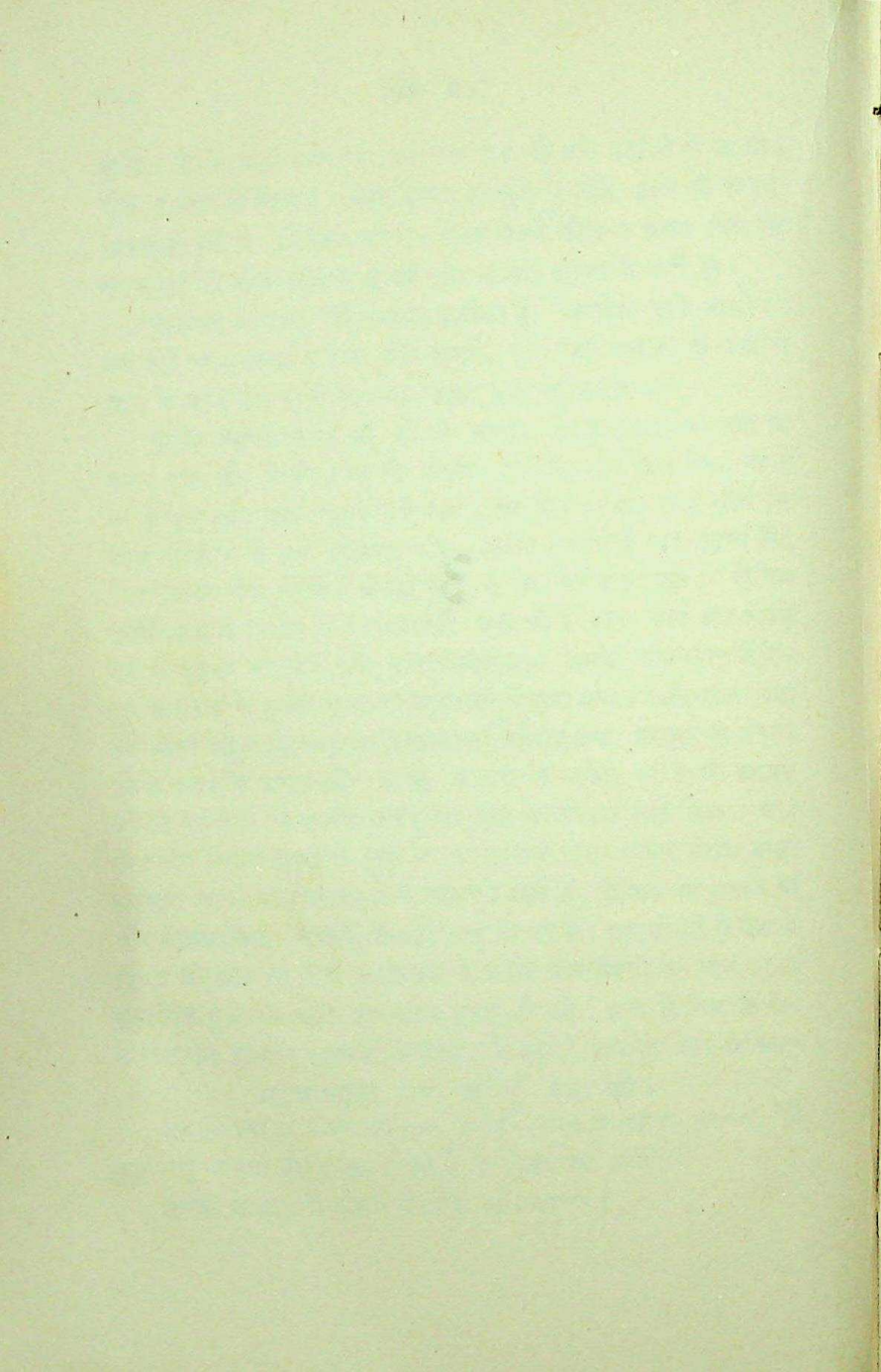
मीर लखनऊ में

मैं कि दुनिया से अलग-थलग अपने घर में बैठ रहा था। बार-बार सोचता कि कहीं और चला जाऊँ। लेकिन सफ़र के सामान की कमी और हाथ ख़ाली होने की वजह से घर से निकलना मुश्किल हो रहा था। मेरी इज़्ज़त आबरू के ख़्याल से मुल्क के वज़ीर नवाब आसफ़ुद्दौला बहादुर ने सोचा कि 'मीर' क्यों न मेरे पास चला आये। नवाब सालार-जंग मोतमिनुद्दौला इसहाक़ खाँ के लड़के ने जो नजमुद्दौला के छोटे भाई और वज़ीर आज़म के मामा थे उन पुराने सम्बन्धों को देखते हुए जो उनके मेरे मामा के साथ थे नवाब की ख़िदमत में अर्ज़ किया कि अगर नवाब साहब रास्ते के ख़र्च खरूच के लिये कुछ रुपये दे दें तो 'मीर' ज़रूर चला आयेगा। नवाब साहब ने ऐसा करने का हुक्म दे दिया। उन्होंने नवाब से कुछ लेकर मुझे ख़त लिखा कि, "नवाब आपको बुलाते हैं। चाहिये कि जैसे भी हो आप अपने को यहाँ पहुँचावें।" मैं कि उचाट दिल बैठा हुआ था। यह ख़त देखते ही उठ खड़ा हुआ और लखनऊ की ओर चल पड़ा। चूँकि अल्लाह की भी यही मर्ज़ी थी इसलिये बेयारो मददगार तने-तनहा चन्द दिनों में फ़र्रुख़ाबाद पहुँच गया।

मुज़फ़्फ़र जंग ने जो कि वहाँ के रईस थे हज़ार चाहा कि मैं कुछ दिनों उनके साथ रहूँ। लेकिन चूँकि मेरा दिल उचट गया था इसलिये मैंने वहाँ पानी भी न पिया। दो एक रोज़ बाद वहाँ से फिर चल पड़ा और लखनऊ आ गया। पहले पहल सालार जंग के घर पहुँचा और,

ख़ुदा उन्हें ज़िन्दा रखे, उन्होंने मुझे इज़्ज़त के साथ हाथों हाथ लिया और जो कुछ ज़रूरी था नवाब की ख़िदमत में कह सुनकर भेजवा दिया।

नवाब से मुलाक़ात

बाद चार पाँच दिन के ऐसा इत्तिफाक़ हुआ कि नवाब मुर्ग़ा लड़ाने वहाँ आये। मैं भी वहाँ मौजूद था। उनके सामने वहाँ हाज़िर हुआ। देखते ही ताड़ लिया कि यह मीर मुहम्मद तक़ी हैं। बड़ी मेहरबानी के साथ मुझसे लिपट गये और जहाँ ख़ुद बैठे थे मुझे अपने साथ ले गये। और अपने शेर सुनाने लगे। मैंने कहा, "क्या कहना! बादशाह की शायरी, शायरी की बादशाह होती है।" बड़ी मेहरबानी से मुझे भी कुछ सुनाने को कहा। उस दिन मैंने ग़ज़ल के कुछ शेर सुनाये। चलने का वक़्त आया तो सालार जंग ने कहा, "आपके कहे पर 'मीर' आ गया है। अब आप मुख़्तार हैं। इसे कोई जगह देवें और जब जी चाहे इसे बुलाकर अपने साथ रखें।"

उन्होंने जवाब दिया, "मैं कुछ तय करके तुम्हारे पास कहला दूँगा।"

बाद दो तीन दिन के मुझे याद किया। मैं हाज़िर हुआ और उनकी तारीफ़ में जो क़सीदा लिखा था उनके आगे पढ़ा। उन्होंने सुना और मुझ पर मेहरबानी फ़रमाते हुए मुझे अपने मुलाज़िमों में शामिल कर लिया और मुझ पर अपनी मेहरबानियों का दर्वाज़ा खोल दिया।

दिल्ली में नजफ़ खाँ की मौत

बाद मेरे इधर चले आने के वहाँ नजफ़ ख़ाँ की, जो बिस्तर पर पड़ा था, मौत हो गई। बादशाही कारोबार कुछ दिनों के लिये तितर-बितर हो गया। उसके मुलाज़मीन जैसे नजफ़ कुली ख़ाँ, अफ़रासयाब ख़ाँ और दूसरे सरदारों ने सर उठाया। कुछ दिनों तक यही खींचा-तानी रही। आख़िर मिर्ज़ा शफ़ी, जो कि उनके भाइयों में से एक था और

सिखों से लड़ रहा था, बादशाह के इशारे पर हाज़िर हुआ और अब्दुल अहद खाँ को अपना चचा बताकर जेल से बाहर निकाला और उसे दीवानी दिलाकर ख़ुद रियासत की मसनद पर बैठ रहा।

चूँकि वह बहुत बड़ा पापी और ज़ालिम था इसलिये हर एक उससे डरता लरज़ता रहता। वह नजफ़ खाँ के मुलाज़िमों की सरकशी से बहुत भिन्नाया। उसने शहर में फ़साद बर्पा कर दिया और नजफ़ कुली खाँ को क़ैद कर लिया। अफ़रासयाब खाँ आया और देखने दिखाने को मिर्ज़ा के साथ हो लिया। लेकिन वह ज़्यादा दिनों तक चैन से न बैठ पाया। कुछ दिन भी न गुज़रे थे कि लताफ़त नामक ख़्वाजा सरा ने, जो वज़ीरुल ममालिक की ओर से दरबार में रहता था, समरू अँगरेज़ के संबंधी किसी अँगरेज़ से मिलकर साज़िश की। ये लोग जब भी उसे देखते पहलू बदलने लगते। बादशाह को भी इन्होंने समझाया कि इस आदमी को कुछ पास लिहाज़ नहीं रहा है। जब उसे इस चाल ढाल की ख़बर हुई तो बौखलाकर शहर से बाहर निकल गया। और अब्दुल अहद खाँ को भी अपने साथ ले गया। जब इन लोगों ने यह जाना तो उसका बहुत पीछा किया, लेकिन उसे न पाया। बादशाह ने इधर उधर रुक्क़ा लिखा कि जहाँ भी उसे पाये न छोड़े और दरबार में ले आयें। यह रुक्क़ा बल्लभ गढ़ के सरदार के पास भी पहुँचा। यह नामुराद भी वहीं पहुँच कर ठहरा हुआ था। उस क़िले के सरदार ने उसे यह हुक्म दिखाया। वह बहुत घबराया और अब्दुल अहद खाँ को उसके पास छोड़कर भाग निकला। वहाँ से दो एक मंजिल आगे जाकर ठहर गया। अहमद बेग हम्दानी से, जो कि आगरे पर क़ब्ज़ा किये हुआ था, साज बाज़ की और बादशाह के साथ वालों से लड़ने के लिये तैयार होकर बीस हज़ार लश्करियों को हमराह लेकर दिल्ली की ओर चल पड़ा। यहाँ ख़्वाजा सरा, फ़िरंगी और दूसरों ने बादशाह को शहर से बाहर निकाला और दरिया के किनारे पड़ाव डाल दिया। ये लोग इस बात को नहीं जानते थे कि उसके दिल में खोट है। और वह केवल उनके क़त्ल तक उनके साथ है। अपने ख़्याल में मगन वे बड़े जोश के साथ क़रीब पहुँच गये। बादशाह

ने जब अपना काम बनते देखा तो लताफ़गत अली खाँ ख़्वाजा सरा और फ़िरंगी को उसके पास भेजा। इन लोगों ने लपककर ख़्वाजा सरा को पकड़ लिया और फ़िरंगी को मार डाला। बादशाह ने बड़ी बहादुरी के साथ अपना बचाव किया और उनकी धोखा-धड़ी न चलने दी। बादशाह ने तोड़-फोड़ शुरू की और वादे-वईद करके बहुत से लोगों को अपने साथ मिला लिया। जब उन लोगों ने देखा कि बादशाह बिना लड़े हाथ नहीं आता तो अब्दुल अहद खाँ को बीच में डाल बहुत क़ौल क़सम किया और पुराने सम्बन्धों का वास्ता दे दिलाकर उसके ख़ेमे से क़िले में ले आये। नजफ़ कुली खाँ, अफ़रासयाब खाँ और अब्दुल अहद खाँ ने मिल-जुलकर बादशाही कामों में दख़ल देना शुरू किया। हम्दानी को जिसके साथ मिर्ज़ा शफ़ी ने बहुत से वादे किये थे कुछ नहीं दिया। उसने कुछ तोपें वग़ैरह लेकर अकबराबाद का रास्ता लिया। यहाँ बाद कुछ दिनों के अफ़रासयाब खाँ अपने महलों की ओर चला गया। और मिर्ज़ा शफ़ी ने शहर में नजफ़ कुली खाँ से लड़-भिड़कर उसे पकड़ लिया और बेगम के पास भेज दिया। वह रिश्ते में उसकी बहन होती थी। अब्दुल अहद खाँ अपने घर से बाहर निकला और ख़ुशामद-बरामद से अपना उल्लू सीधा कर लिया। बेगम ने मिर्ज़ा शफ़ी से कह सुनकर नजफ़ कुली खाँ को छुड़वाया और उसे उसकी जगह दिलाकर रवाना करवाया। धीरे-धीरे मिर्ज़ा शफ़ी ने पूरा क़ाबू पा लिया। वह शहर से बाहर निकल कर अपना क़ाबू और बढ़ाने के लिये हाथ पैर मारने लगा। चूँकि सभी लोग उसके बस में नहीं आये थे इसलिये अफ़रासयाब हम्दानी को साथ लेकर आया और यह कहला भेजा कि मिर्ज़ा हम्दानी को समझाने-बुझाने के लिये उनके ख़ेमे में आये। मिर्ज़ा चाल में फँसकर आया और धोखे से पड़कर मारा गया। मिर्ज़ा के मारे जाने के बाद अफ़रासयाब का दौर-दौरा हुआ। वही रियासत के कामों का कर्ता-धर्ता बना। हम्दानी फिर अपने मकान लौट गया। इसने बादशाह से अमीरुल उमरा का ख़िताब पाया और उसने सारा इन्तज़ाम अपने हाथ में लिया।

गवर्नर का लखनऊ आना

यहाँ वज़ीर आज़म गवर्नर बहादुर के स्वागत के लिये चले, जो उनकी दावत पर कलकत्ता से आ रहे थे और सारे देश पर छाये हुए थे। वज़ीर के साथ चलने वाली फ़ौज के क़दमों से उड़ने वाली धूल आसमान पर पहुँच रही थी। यह सफ़र इलाहाबाद तक हुआ। वहाँ के तमाम सरदार उनके आने का हाल जानकर मुलाक़ात की राह देख रहे थे। एक मंज़िल पहले बड़ा मर्तबा रखने वाले नवाब से मुलाक़ात हुई। वहाँ से नवाब उनको अपने साथ-साथ लखनऊ लाये कि वह जगह नवाब के रहने की है। हर मंज़िल पर उनकी ख़ातिर के लिये नये-नये इन्तज़ाम किये गये। नये-नये ख़ेमे, क़िस्म-क़िस्म के खाने, तुरकी और अरबी घोड़े, पहाड़ जैसे हाथी, मोतियों और कपड़ों की कश्तियाँ जो अपनी मिसाल आप थीं, मज़ेदार शर्बत, नित नये तरह के मेवे और यहाँ के मशहूर तोहफ़े, दखिनी और पश्चिमी तलवारें, चाची कमानें हर मंजिल पर जमा थीं। जब गवर्नर जनरल लखनऊ आये और महल में पधारे तो हर दिन रंग-रंग के मोतियों जड़े फ़र्श, मकानों के कोने-कोने में गुलाब छिड़का हुआ, नर्म व मुलायम बिस्तर बिछा हुआ, खुश्बुओं में बसा हुआ लिबास, मख़मल का अछूता फ़र्श, चाँदी सी रंगी हुई दीवारें, पर्दे और झालरों से सजा हुआ महल, उनके आराम के लिये तैयार था। अम्बर की ख़ुशबू एक ओर मस्ती फैला रही थी तो दूसरी ओर मकान के कोने-कोने में बहार डेरा जमाये हुई थी। पिस्ता और बादाम महक रहे थे। अँगरेज़ी चीज़ें मुँह का मज़ा बदलने के लिये रखी थीं। रात को परी चेहरा, नहीं-नहीं बल्कि अप्सराओं से भी ज़्यादा ख़ूबसूरत औरतों का नाच होता। शीशे और चीनी के गुलदस्ते सलीके से रखे हुए थे। तमाम ताक़त ताज़ा मेवे से भरे हुए थे, अँगरेज़ी नाच हो रहा था। अजब मकान था, अजब हवा थी। शाम को चिराग़ाँ हुआ, अतशबाज़ी लाई गई जिसके सितारे और हवाई आसमान तक पहुँच रही थी। चिराग़ाँ की बहार जी लुभा रही थी और महताब से रात दिन में बदल गयी थी। सुनहरा काम

किया हुआ तम्बू इस खूबी से खींचा गया था कि सूरज की आँख ने भी वैसा न देखा होगा। बड़े-बड़े अमीर ग़ुलामों की तरह हाज़िर थे। राजा लोग ख़िदमत में लगे हुए थे। अच्छे-अच्छे शायर तारीफ़ में क़सीदे पढ़ रहे थे। घर के हर दरवाज़े पर अच्छे लगने वाले नौजवान पहरे दे रहे थे। हर जगह साया फैला हुआ, पानी के फ़ौव्वारे बहते हुए, नर्गिस के फूल बराबर रखे हुए पाईं बाग़ की बहार दिखा रहे थे। बर्फ़ यूँ लग रही थी जैसे पिघली हुई चाँदी, क़िस्म-क़िस्म के रंगीन शर्बत और खाने के वक़्त तरह-तरह की रोटियाँ, बादामी रोटी, शीरमाल, बाक़रख़ानी सूरज जैसी साफ़ और गर्म, और इतनी जवान कि अगर बुड्ढा खाये तो जवान हो जाय; बर्क़ी रोटियाँ ऐसी कि अगर उनकी तारीफ़ करूँ तो एक दफ़्तर जमा हो जाय, ज़ंजबेली रोटी इतनी मज़ेदार कि जिसे देखकर ख़ुदगर्ज़े के मुँह में पानी आ जाय; क़िस्म-क़िस्म के क़लिये और दोपियाज़ा बीच में रखे हुए थे कि जिन्हें देखकर मेहमानों का जी ललचा रहा था। अनेक तरह के कबाब दस्तरख़ान पर मौजूद थे। कबाबे गुल बहुत अच्छा, बहुत ताज़ा; मज़ेदार हिन्दी क़बाब दिल मोह रहे थे, कन्धारी क़बाब अपनी तरफ़ खींच रहे थे, क़बाबे संग ऐसे कि रास्ते की ज़हमत झेलने वाले को ताज़ा कर दे, क़बाबे बर्क़ न जाने कैसे तले गये थे कि दिल खिंचा जाता था। ये सारे क़बाब सब के सब मज़ेदार थे, एक-एक के खाने को दस-दस क़बाबें रखी हुई थीं। हर एक के सामने क़िस्म-क़िस्म के पुलाव, शोरबे और खाने चुने हुए थे। ख़ुदा इस फ़ैयाज़ी और करम को और बढ़ाये।

ऐसी इज़्ज़त वाला मेहमान और वज़ीर जैसा मेज़बान, ऐसी आन-बान का मेहमान, और ऐसी दौलत वाला मेज़बान, ऐसे अच्छे स्वभाव वाला मेहमान और ऐसी रियासत वाला मेज़बान, ऐसी सूझ-बूझ रखने वाला मेहमान और ऐसी ख़िदमत करने वाला मेज़बान, न ज़माने की आँखों ने देखा और न अक़्लों के कान से सुना। ग़रज़ इसी तरह छः महीने तक दिन रात आपस में बातचीत और मशवरे होते रहे।

बादशाह का फ़िरंगियों से गठजोड़

जब यह ख़बर शाही दर्बार में पहुँची तो वहाँ के सारे अमीर अपनी-अपनी फ़िक्र में पड़ गये। अब्दुल अहद ख़ाँ ने अपने आदमियों को इस ओर भेजा और फ़िरंगियों से गठजोड़ कर लिया। अफ़रासयाब ख़ाँ और दूसरों को यह गुमान गुज़रा कि फ़िरंगी यहाँ भी आ जायेगा और चूँकि ताक़त वाला है; बादशाह को अपने फन्दे में जकड़ कर हमारा पत्ता साफ़ कर देगा। इसलिये मुनासिब यही है कि बादशाह को आगरे ले जायें, वहाँ लश्कर जमा करें और मरहठों को जो कोहदवाला की रानाई पर मौजूद है अपने साथ मिलाकर फ़िरंगी से बातचीत करें। अगर लड़ाई लड़नी पड़े तो वैसा हो, वरना इसी ठाठ-बाट से रहें। इसी चक्कर में वे बादशाह को साथ लेकर आगरा चले गये और रास्ते में अब्दुल अहद ख़ाँ को क़ैद कर लिया।

शाहज़ादा जवाँबख़्त का लखनऊ आना

जब बादशाह का लाव-लश्कर आगरे पहुँचा तो शहज़ादा जवाँबख़्त वहाँ से भागकर नवाब वज़ीर और फ़िरंगी के सामने आया। उन लोगों ने परीशान होकर मरहठों से साजबाज़ की, उनको अपनी ओर मिला लिया और शाहज़ादे के भेजे जाने की बातचीत करने लगे। यहाँ फ़िरंगी टाल-मटोल करता रहा, क्योंकि उसे अपने मुल्क कलकत्ते की देखभाल भी करनी थी।

गवर्नर की कलकत्ता को वापसी

बाद कुछ दिनों के शाहज़ादे को साथ लेकर गवर्नर नवाब वज़ीर से रुख़सत हुए और कलकत्ता चले गये। जाते वक़्त नवाब वाला जनाब के मुलाज़िमों को इतनी बेहिसाब बख़्शिश दी कि सोची भी नहीं जा सकती। हर शख़्स को घोड़ा, हाथी और क़स्बा और बहैसियत को ख़िलअत

मिली। जब साहब दरिया के रास्ते से चले गये और नवाब वज़ीर अपनी राजधानी लखनऊ आये तो मरहठों और अफ़रासयाब खाँ ने मुहम्मद बेग हम्दानी से भिड़ने का इरादा किया। उसने भी मूँछ नीची न की और उनके मुक़ाबले में जम गया और इसी बीच मिर्ज़ा शफ़ी के भाई मीर ज़ैनुलआबदीन के किसी आदमी ने अफ़रासयाब खाँ को छूरा भोंक दिया। वह दो चार दिनों के बाद मर गया। अब दरबार में कोई सरदार नहीं रहा है। अब बादशाह का ज़ोर घट गया है। मालूम यही होता है कि अब मरहठे मुल्क पर छा जायेंगे।

बाद इन ग़मनाक हादसों के मरहठा फ़ौज और अहमद बेग हम्दानी आपस में लड़ बैठे। जब किसी तरह उसे क़ाबू में न कर सके तो धोखा-धड़ी से काम लिया और हम्दानी को क़ैद कर लिया।

यहाँ साहब ने जो बादशाहज़ादे को अपने साथ ले गये थे वापस भेज दिया। वह बहुत बददिल आये हैं। या तो इसी इलाक़े में रहेंगे या बादशाह के पास चले जायेंगे। इस वक़्त नवाब आली जनाब के साये में गुज़र कर रहे हैं। जो कुछ वह कहते हैं यह करते हैं।

नवाब वज़ीर के साथ

यहाँ फ़क़ीर बलन्द मर्तबा नवाब के साथ है और उनके साये में ज़िन्दगी गुज़ार रहा है। नवाब साहब बहराइच तक शिकार के लिये गये। मैं भी इनके साथ था। मैंने शिकार नामा लिखा। दूसरी बार फिर शिकार के लिये चले और हिमालय की तराई तक तशरीफ़ ले गये। अगरचे लोगों को इस लम्बे सफ़र की ऊँच-नीच में काफ़ी दुख दर्द उठाने पड़े, लेकिन उन्हें ऐसी फ़िज़ा, ऐसी हवा और ऐसा शिकार काहे को देखने को मिला होगा! बाद तीन महीनों के अपनी राजधानी लखनऊ आये। फ़क़ीर ने दूसरा शिकारनामा लिखकर हज़ूर में पढ़ा। दो ग़ज़लें शिकारनामे की ग़ज़लों में से चुनीं और उस पर ख़ुद नवाब साहब ने मिसरे लगाये और ऐसे लगाये जैसे कि चाहिये थे। और जो ग़ज़ल पसन्द

आ गई थी उस पर दूसरी गज़ल लिखने की फ़रमाइश की। बारे, वह गज़ल भी पूरी हो गई। अपनी ज़ुबान से तारीफ़ की और मेरी शायरी को सराहा।

इस बीच आबहवा की तब्दीली की वजह से, बाद मोहर्रम के दस दिन गुज़रने के, नवाब साहब बीमार पड़ गये। इलाज किया गया, लेकिन बीमारी लम्बी होती गई। एक दुनिया सदक़ा ख़ैरात से सरफ़राज हुई और हर शख़्स ने दुआ के लिये हाथ बढ़ाया। ख़ुदा ने दुआ सुनी और उन्हें अच्छा करके हम पर और दुनिया वालों पर एहसान किया।

जब तक दुनिया बाक़ी रहे आप बाक़ी रहें !

मरहठों का ज़ोर

जब बादशाह के पास नजफ़ ख़ाँ के ग़ुलामों में से कुछ लोग दरबार पर छाये हुए थे तो मरहठे जो कि क़रीब ही मंडरा रहे थे, ज़ोर पा गये और मुल्क पर छा कर दनदनाने लगे। बादशाह ने मरहठों को करता-धरता बनाया और नजफ़ के ग़ुलामों का ज़ोर ढह गया। अब मामलों में मरहठों के सरदार से राय ली जाती है और जो कुछ वह कहता है वही होता है। मरहठों की फ़ौज भी दिल्ली में पहुँच गयी है और सुना यही जाता है कि पूरा-पूरा क़ब्ज़ा जमा लिया है। सिखों ने भी, जो कि शहर के इधर-उधर लूट मचा रहे थे, हार मान ली है क्योंकि उनमें इतना ज़ोर नहीं था कि दकन वालों का मुक़ाबला कर सकते और इनकी बहादुरी से टक्कर ले सकते। बादशाह कुछ दिनों आगरे के बाहर पड़ाव डाले था। अब वह भी दिल्ली को चल दिया। अब्दुल अहद ख़ाँ को क़ैद करके अलीगढ़ भेज दिया जो नजफ़ ख़ाँ की बहन के कब्ज़े में है और नजफ़ ख़ाँ के बहुत से आदमी उस क़िले में जमा हैं। अब मरहठा सारे मुल्क का मालिक है, जो चाहता है सो करता है। बादशाह को कुछ देता है और जहाँ चाहता है उसे लिये-लिये फिरता है। चुनान्चे शहर

में एक महीने रहने के बाद उसे लेकर अलीगढ़ गया। वहाँ दस पन्द्रह दिन तक लड़ाई होती रही। आख़िर कह सुनकर बेगम को क़िले से बाहर निकाला और नजफ़ ख़ाँ के ख़ज़ाने से धन लेकर उसे छोड़ दिया।

वहाँ से बादशाह को राजपूतों की तरफ़ ले गये। उन लोगों ने मुक़ाबला किया। बाद कुछ दिनों के राजपूतों से सुलह कर ली। बादशाह देहली आ गया और मरहठा आगरा में ठहर गया। चूँकि राजपूत उसकी आँखों में खटक रहे थे इसलिये फिर उन पर चढ़ाई की। राजाओं ने हम्दानी को जो एक नजफ़ख़ानी सरदार था बुलाकर अपना दोस्त बना लिया। लड़ाई शुरू हुई। हम्दानी बहादुरी से लड़ा और मारा गया। उसकी जगह पर उसकी बहिन का लड़का मिर्ज़ा इस्माईल सरदार बना। इस लड़के ने बड़ी हिम्मत से लड़ाई लड़ी। मरहठों की ताक़त उसने टुकड़े-टुकड़े कर दी। उन्हें बड़ी हार हुई। उनकी लड़ाई का साज़ोसामान उनसे छिन गया। अपनी जान बच जाने को बहुत समझकर मरहठा भागा और आगरे में बैठ रहा। वहाँ भी मिर्ज़ा इस्माईल ने उसका पीछा किया। उसे शहर से निकालकर क़िले को घेर लिया। मरहठे ने अपना फ़ायदा दूसरी ओर देखा। क़िले की जंग में बहुत दिन बेकार हुए।

उधर बादशाह शहर से बाहर निकला और नजफ़ कुली ख़ाँ की तरफ़ जो हिसार के क़रीब था, गया। वहाँ बड़ी भारी जंग हुई। आख़िर में नजफ़ कुली ख़ाँ से कुछ ले लिवाकर शहर वापस आ गया।

ग़ुलाम क़ादिर रोहीला

इसी बीच ज़ाब्ता ख़ाँ के लड़के ग़ुलाम क़ादिर ने जो कि अपने बाप के बाद सहारनपुर वग़ैरह पर राज कर रहा था ज़ोर हासिल कर लिया और सिखों की फ़ौज साथ लेकर उन पर टूट पड़ा। बादशाह के बहुत से महलों को जो कि दो दरियाओं के बीच थे, हथिया लिया और शहर के नज़दीक पहुँचकर बादशाह से रुपया पैसा माँगा। बादशाह ने कोरा जवाब दिया। उसने दरिया के उधर मोर्चा जमाया और लड़ने मरने पर

तैयार हो गया। एक महीने या उससे कुछ ज़्यादा समय तक लड़ाई होती रही। बादशाह के पास अगरचे न फ़ौज थी, न ताक़त, फिर भी जी जान से लड़ा और इस बला को दूर किया। वहाँ से रोहिला उठा तो आगरे तक कब्ज़ा जमाता हुआ पहुँच गया। यहाँ मिर्ज़ा इस्माईल बेग क़िले को घेरे हुए पड़ा था। उसने जब इसके ज़ोर को देखा तो इससे मिल गया और यह साज़बाज की कि हम तुम मिलकर मरहठों से लड़ें। बाद कुछ दिनों के मरहठा जो लश्कर के साथ चम्बल पार उतर जाने का इरादा रखता था पहुँच गया। इन दिनों शाहज़ादा साहबे आलम भी यहाँ पर था लेकिन उसने आँखें मूँद लीं और लड़ाई अकेले मिर्ज़ा इस्माईल के सर आ पड़ी। उस लड़के ने हिम्मत से काम लिया और यह लड़ाई भी जीत ली। मरहठा भागकर ग्वालियर पहुँच गया जहाँ उसकी अमलदारी थी। बाद कुछ दिनों के नई फ़ौज लेकर लड़ने के लिये आया। दस पन्द्रह दिन तक आगरे के क़रीब जंग होती रही। आख़िर मिर्ज़ा इस्माईल की हार हुई। गुलाम क़ादिर तमाशा देखता रहा। मिर्ज़ा इस्माईल भाग कर उसके पास पहुँचा। लेकिन उसने देखा कि वह अपने फेर में पड़ा हुआ है और मेरा साथ नहीं देना चाहता। इसलिये मजबूरी दर्जे कुछ दिनों उसके पास पड़ा रहा। कुछ दिन इसी तरह गुज़ार कर अपने मुल्क की ओर चला गया।

गुलाम क़ादिर का ज़ुल्म

बादशाह के दीवान ने गुलाम क़ादिर को अपना बेटा बना लिया था। उसने उसे लिखा कि बादशाह मेरा कहा नहीं सुनता और मरहठों का साथ नहीं छोड़ता इसलिये तुम यहाँ आ जाओ। ये दोनों शहर में पहुँचे। बादशाह बेबस था। नमकहराम दीवान के मशवरे से इन लोगों ने क़िले का काम-धाम अपने हाथ में लिया। बादशाह को निकाल दिया और उसके साथ ऐसा बर्ताव किया जो नहीं करना चाहिये था। क़िले को अच्छी तरह लूटा और बादशाहज़ादों को इस तरह सताया कि न

सताना चाहिये था। बहुत सा माल उसके हाथ लगा। बादशाह की आँखें निकाल लीं और एक दूसरे आदमी को बादशाह बना दिया। जब पूरा क़ाबू हासिल हो गया तो दीवान को भी क़ैद कर लिया और शहर वालों को भी सताना शुरू किया। जब ताक़त का नशा बहुत बढ़ा तो मिर्ज़ा इस्माईल से भी खटक गई। उसे कुछ देने लेने में भी कमी करने लगा। वह अज़ीज़ मरहठों से मिल गया। इसी बीच मरहठों की फ़ौज भी क़रीब पहुँच गई और उसके कुछ सरदार शहर में दाख़िल हो गये। रोहिला क़िले में बैठ रहा और रातों-रात खिज़री दर्वाज़े के रास्ते अपनी फ़ौज, सामान, ख़ज़ाना, शाहज़ादों, दीवान और उसके साथ वालों को लेकर निकल भागा। शाहदरा के पास अपनी फ़ौज लेकर जम गया। आख़िर मरहठे उसकी बेहयाई देख दरिया पार उतर कर लड़ाई में जुट गया। कभी ऐसा होता कि ये लोग ज़ोर मारते, कभी वह बेईमान। इसी तरह क़रीब एक महीने के बीत गये। अली बहादुर नाम का एक सरदार दकन से आया और रोहिलों से भिड़ गया। बाद दो तीन लड़ाइयों के बड़ी बहादुरी के साथ उसको पकड़ लिया। उसकी सारी पूँजी मय शाह-ज़ादों के उससे छीन ली। उसे क़ैद कर दिया। उसी अन्धे शाह आलम को बादशाह बनाया, क़िला जाटों को दे दिया। अब बादशाह को सौ रुपये रोज़ देते हैं और सारे मुल्क पर क़ाबिज़ हैं। इन लोगों ने उस बेई-मान को बड़ी बे आबरूई के साथ मार डाला। अब मरहठा बादशाह है। जो चाहता है वह करता है। देखें कब तक यह हाल रहता है।

और आख़िर में

यह दुनिया अजीब आफ़तों की जगह है। कैसे-कैसे मकान मिट गये, कैसे-कैसे जवान ख़त्म हो गये, कैसे-कैसे बाग़ उजड़ गये, कैसी-कैसी महफ़िलें कहानियाँ बन गईं, कैसे-कैसे फूल मुर्झा गये और कैसे-कैसे लोग गुज़र गये, कैसी-कैसी सोहबतें उखड़ गईं और कैसे-कैसे क़ाफ़िले कूच कर गये ! अज़ीज़ों ने क्या-क्या ज़िल्लतें झेलीं और क्या-क्या लोग थे जो मौत के घाट उतर गये ! इन आँखों ने क्या-क्या कुछ देखा और इन कानों ने क्या-क्या सुना !

जिस सर को ग़रूर आज है याँ ताजबरी का,
कल उस पे यहीं शोर है फिर नौहागरी का,
आफ़ाक़ की मंज़िल से गया कौन सलामत,
असबाव लुटा राह में याँ हर क़सरी का।

हर सर एक ताज के छिन जाने का अफ़साना कह रहा है, हर खँडहर की वीरानी महल की कहानी सुना रही है। यह दुनिया एक बड़ी कहानी जैसी है जिसका एक टुकड़ा हमने बयान किया; बाक़ी टुकड़ा कोई दूसरा बयान करेगा।

इस छोटी सी मुद्दत में ख़ून के इस एक क़तरे ने, जिसे दिल कहते हैं, रंग-रंग के दुख झेले और ख़ूना-ख़ून हो गया। तबीयत उचाट हो गई। सबसे मिलना जुलना बन्द कर दिया। अब बुढ़ापा आ गया है

और उम्र साठ साल की हो गई है। ज़्यादातर बीमार रहता हूँ। कुछ दिनों आँखों की तकलीफ़ सही, देखने की ताक़त न रही, ऐनक की हाजत हुई। अपने दोनों हाथ मले और देखने दिखाने की हवस छोड़ दी। जैसा कि इस शेर में कहा गया है--

ऐनक की ज़रूरत हो तो कर फ़िक्र तू अपनी,
मरते हुए आईना रखें साँस के आगे।

अपने दाँतों का हाल क्या कहूँ! समझ में नहीं आता था कि कहाँ तक इलाज करूँ? आख़िर एक-एक दाँत उखड़वा दिये। अब यह हाल है कि दाँत की तकलीफ़ की वजह से रोटी बहुत तकलीफ़ के साथ खाता हूँ। जब पूरा निवाला ख़ून में डूब जाता है तो एक निवाला रोटी हलक़ के नीचे उतरती है।

ग़रज़ ताक़त घट जाने, होश गुम हो जाने, कमज़ोरी बढ़ जाने, दिल टूट जाने और तबीयत उचट जाने से यही पता चलता है कि अब बहुत दिनों तक नहीं जिऊँगा। ज़माना भी अब रहने लायक़ नहीं रहा है। अब दामन खींच लेना ही अच्छा है। अगर मर जाऊँ तो यही आर्ज़ू है। और, अगर न मरूँ तो सब ख़ुदा के हाथ है।
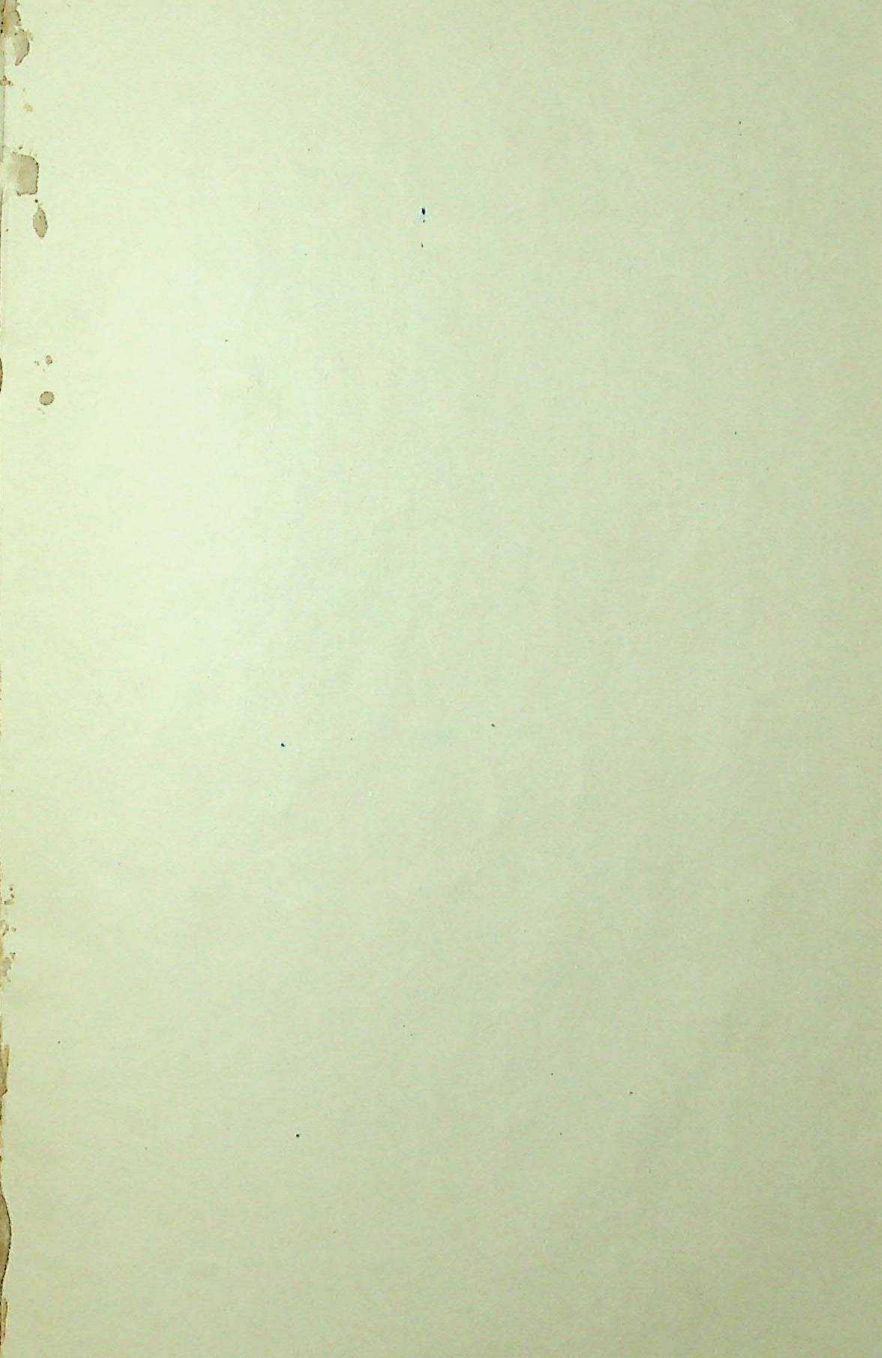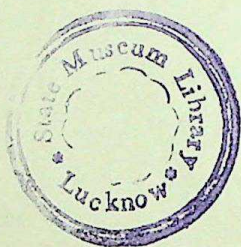
लेखक के शब्दों में

"यह दुनिया अजीब आफ़तों की जगह है। कैसे-कैसे मकान मिट गये, कैसे-कैसे जवान ख़त्म हो गये, कैसे-कैसे बाग़ उजड़ गये, कैसी-कैसी महफ़िलें कहानियाँ बन गयीं, कैसे-कैसे फूल मुर्झा गये, कैसे-कैसे लोग गुज़र गये, कैसी-कैसी सोहबतें उखड़ गयीं और कैसे-कैसे क़ाफ़िले कूच कर गये। अज़ीज़ों ने क्या-क्या ज़िल्लतें झेलीं और क्या-क्या लोग थे जो मौत के घाट उतर गये! इन आँखों ने क्या-क्या कुछ देखा और इन कानों ने क्या-क्या कुछ सुना!"

"हर सिर एक ताज के छिन जाने का अफ़साना कह रहा है। हर खण्डहर की वीरानी महल की कहानी सुना रही है!"

"यह दुनिया एक बड़ी कहानी जैसी है, जिसका एक टुकड़ा हमने बयान किया। बाक़ी टुकड़ा कोई दूसरा बयान करेगा।"

—'मीर'

मूल्य
तीन रुपये

इस्लाम के सूफ़ी साधक

"पुस्तक के नाम से ही स्पष्ट है कि इसे क्यों सत्य की खोज करने वाले व्यक्तियों या उनके समूहों के साहसिक कार्यों और परिश्रम का उदाहरण प्रस्तुत करनेवाली माला में सम्मिलित किया गया है। इस्लाम के धार्मिक दर्शन सूफ़ीमत को प्राचीनतम विद्यमान परिभाषा में 'आध्यात्मिक सत्यों को समझना' कहा गया है। और, मुसलमान रहस्यवादियों को स्वयं को 'अहलुलहक़' (सत्यानुयायी) कहना बहुत प्रिय है।"

"......जिन मार्गों से होकर ये (सत्यानुयायी) गुज़रे, वह बहुत ही दुर्गम है। वे दूरस्थ पथहीन शिखर अन्धकारमय और व्याकुल कर देने वाले हैं।......उनके धार्मिक वातावरण और आध्यात्मिक इतिहास के बारे में जो कुछ सूचना हमने एकत्र की है, वह हमें उनके द्वारा लिखित विचित्र अनुभूतियों को समझने में अवश्य मदद देगी।"

—निकलसन

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद